Registration No. V-36244/2008-09 **ISSN :- 2350-0611**

The journal has been listed in 'UGC Approved List of Journals' with Journal No. – 48441 in previous list of UGC

JIFE Impact Factor – 7.23

Research Highlights

A Multidisciplinary Quarterly International Peer Reviewed Referred Research Journal

Editor
Dr. Kamlesh Kumar Singh
Assistant Professor
Department of Sociology
Pt. D.D.U. Govt. Girls P.G. College
Sevapuri, Varanasi

Volume - XIII **No. - 1** **(Jan. – Mar. 2026)**

(Part – III)

Published by
Future Fact Society
Varanasi (U.P.) India

Research Highlights - *A Referred Journal, Published by : Quarterly*

Correspondence Address :
C 4/270, Chetganj
Varanasi, (U.P.)
Pin. - 221 010
Mobile No. :- 09336924396
Email- researchhighlights1@gmail.com

Note :-

The views expressed in the journal "Research Highlights" are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Managing Editor
Avinash Kumar Gupta

©Publisher

ISSN : 2350-0611

Printed by
Interface Computer, B 31/13-6, Malviya Kunj, Lanka, Varanasi-221005 (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. T. N. Singh,** United Nations Professor of Plant Physiology, Department of Plant Sciences, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Prof. S.K. Bhatnagar,** School for Legal Studies, BBAU, Lucknow
- **Prof. (Dr.) Munna Singh**, Head of Department, Physical Education and Sports Sciences Department, Handia P.G. College, Handia, Prayagraj, U.P.
- **Dr Achchhe Lal Yadav**, Assistant Professor, Physical Education, Pt. D. D. U. Government Degree College, Saidpur, Ghazipur
- **Dr. Pramod Rao,** Assistant Professor, Department of Hindi, VBS Purvanchal University, Jaunpur
- **Dr. Anil Pratap Giri,** Assistant Professor, Department of Sanskrit, Pondicherry Central University, Pondicherry.

EDITORIAL BOARD

- **Dr. Sanjay Singh,** Department of Plant Science, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Dr. Diwakar Pradhan,** Professor in Nepali, Head, Deptt. of Indian Languages Faculty of Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Shailendra Singh,** Professor and Head, Department of Sociology, J.S. University, Sikohabad, U.P.
- **Dr. Manish Arora,** Associate Professor, Faculty of Visual Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Surjoday Bhattacharya,** Assistant Professor, Government Degree College, Pratapgarh U P
- **Dr. Upasana Ray,** Associate Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Krishna Kant Tripathi,** Assistant Professor, Deptt. of Education, Central University of Mijoram, Mijoram
- **Dr. Urjaswita Singh,** Assistant Professor, Department of Economics, M.G. Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Satyapal Yadav,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Brajesh Kumar Prasad,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Dewendra Pratap Tiwari,** Assistant Professor, Department of Political Science, Shree Lakshmi Kishori Mahavidyalaya (A Constituent Unit of BRA Bihar University, Muzaffarpur), Bihar

- **Dr. Hena Hussain,** Assistant Professor, Department of Psychology, Oriental College, Patna City (A Constituent Unit of Patliputra University, Patna), Bihar
- **Dr. Santosh Kumar Singh,** Assistant Professor, P.G. Department of Psychology, J.P. University. Chapra
- **Dr. Ramkirti Singh,** Assistant Professor, Department of Psychology, Gorakhpur University, Gorakhpur
- **Dr. Girish Kumar Tiwari,** Assistant Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Vaibhav Kaithvas,** Assistant Professor, Department of Performing Art, Eklavya University, Sagar Road, Damoh, MP
- **Dr. Ranjeet Kumar Ranjan,** Assistant Professor, Department of Psychology, J.P. College, Narayanpur, Bihar
- **Dr. Paromita Chaubey,** Faculty of Education, Banaras Hindu University, Varanasi

EDITOR'S NOTE

It is a great honour to me to extend my warm greetings and welcome you all to the journal, **Research Highlights,** a refereed journal of multi disciplinary research. The journal, which is a peer-reviewed, will devote to the promotion of multi-disciplinary research and explorations to the South Asian and global community. It is our objective to provide a platform for the publication of new scholarly articles in the rapidly growing field of various disciplines. We are trying to encourage new research scholars and post graduate students by publishing their papers so that they may learn and participate in literary publishing through a professional internship. Scholarly and unpublished research articles, essays and interviews are invited from scholars, faculty researchers, writers, professors from all over the world.

Note: All outlook and perspectives articulated and revealed in our peer refereed journal are individual responsibility of the author concerned. Neither the editors nor publisher can be held responsible for them anyhow. Plagiarism will not be allowed at any level. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Hoping all of you shall enjoy our endeavors and those of our contributors.

Editor

CONTENTS

"Research Highlights"

➲	भारतीय विदेश नीति में दक्षिण पूर्व एशियाः एक अध्ययन ***आनन्द कुमार सिंह***	01-05
➲	छत्तीसगढ़ की वर्तमान राजनीतिक एवं ऐतिहासिक परिवेश का अध्ययन ***पूनम मानिकपुरी*** ***डॉ. एम.पी. रोहणी***	06-13
➲	महिला सशक्तिकरण और बिहार में परिवर्तित मतदान व्यवहार (2010–2020): कल्याणकारी राजनीति से निर्वाचनात्मक एजेंसी तक ***मनीष कुमार*** ***डॉ. अखिलेश पाल***	14-23
➲	गाँधीजी के आर्थिक दर्शन में ''नैतिकता'' ***डॉ. चंदा कुमारी***	24-28
➲	उजड़ते, बसते गाँव एवं पर्यावरण ***प्रो. मदन कुमार वर्मा***	29-33
➲	मुंगेर के स्वतंत्रता सेनानी और खादी आन्दोलन ***अंकित कुमार*** ***प्रो. (डॉ.) दीनेश प्रसाद कमल***	34-36
➲	कबीर की कविता में लोक व्याप्ति ***डॉ. पिन्टू यादव***	37-39
➲	भारतीय चित्रकला में नारी चित्रण का विश्लेषण ***नमिता गार्गी*** ***डॉ. प्रदीप कुमार निवोरिया***	40-42
➲	डिजिटल युग में नगरीय महिलाएँ और AI: अवसर बनाम खतरे का समाजशास्त्रीय विमर्श ***डॉ. स्वर्णलता कुमारी***	43-47
➲	मलिन बस्तियों के उत्थान में सात निश्चय योजनाओं की भूमिका ***डॉ. सुनीता कुमारी***	48-52
➲	महिला सशक्तिकरण और संविधान ***डॉ. मुन्ना सिंह***	53-55
➲	भारतीय समाज एवं पर्यावरणीय शिक्षा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन ***डॉ. अनामिका कुमारी***	56-59
➲	तबला वाद्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं निर्माण संबंधी मत–मतांतर ***देवेश कुमार कंवर***	60-64
➲	किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में धार्मिकता के प्रभाव का अध्ययन ***अमित कुमार सिंह*** ***प्रो. (डॉ.) पूनम सिंह***	65-70
➲	रोहतास जिला का भौगोलिक पर्यावरण : एक शोध पत्र ***डॉ. सविता सिंह***	71-74

◀◀ ▶▶

भारतीय विदेश नीति में दक्षिण पूर्व एशियाः एक अध्ययन

आनन्द कुमार सिंह*

शोध सारांश:

भारतीय विदेश नीति में दक्षिण पूर्व एशिया का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी जड़े दोसहस्राब्दी पुरानी सभ्यतागत आदान-प्रदान में निहित है। भारत दक्षिण पूर्व एशिया के संबंधों को विभिन्न आयामों में विश्लेषित करने की आवश्यकता है,इसके लिए यथार्थवादी सिद्धांत, उदारवादी सिद्धांत, निर्माण वादी सिद्धांत,और एक बहु सिद्धांतत्मक दृष्टिकोण की आवश्यकता है । प्रस्तुत शोध पत्र इन्हीं आयामों में भारत दक्षिण पूर्व एशिया के संबंधों का एक सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत करता है।

कुंजी शब्द: लुक ईस्ट, एक्ट ईस्ट, गुटनिरपेक्षता, रणनीतिक स्वायत्तता, बहुध्रुवीयता, यथार्थवाद, उदारवाद, संरचनावाद।

भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच बहुआयामी संबंध रहे हैं। भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच के संबंध किसी आधुनिक राजनयिक आविष्कार के रूप में नहीं देखे जा सकते, बल्कि इसकी जड़ें दो सहस्राब्दी पुरानी सभ्यतागत आदान-प्रदान में निहित हैं। प्राचीन काल में, भारत से धर्म (हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म), संस्कृति, कला, भाषा और व्यापार इस क्षेत्र में पहुंचा, जिसके प्रमाण आज भी इंडोनेशिया के बोरोबुदुर मंदिर, कंबोडिया का अंकोरवाट और वियतनाम के मंदिरों में देखे जा सकते हैं। इस ऐतिहासिक सांस्कृतिक संबंध ने एक अदृश्य बंधन का काम किया जो आधुनिक राजनीतिक संबंधों का आधार बना। हालांकि, औपनिवेशिक शासन और उसके बाद के शीत युद्धकालीन विभाजन ने इन ऐतिहासिक संपर्कों को कमजोर कर दिया।

स्वतंत्रता के बाद के दशक में, जवाहरलाल नेहरू ने एशियाई साम्राज्यवाद के खिलाफ एकजुटता की वकालत की और 1955 के बांडुंग सम्मेलन में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण थी, लेकिन 1962 के भारत-चीन युद्ध और बाद में भारत की सोवियत संघ के करीब आने की नीति ने दक्षिण-पूर्व एशिया के अधिकांश गैर-कम्युनिस्ट देशों से भारत को दूर कर दिया। 1970 और 1980 के दशक में, भारत की विदेश नीति अंतर्मुखी और आर्थिक रूप से सुरक्षावादी बनी रही, जिससे दक्षिण-पूर्व एशिया के तेजी से बढ़ते अर्थव्यवस्थाओं (' एशियाई बाघ ' से भारत अलग-थलग पड़ गया (हॉल, 2016, पेज 15)। 1991 में भारत के आर्थिक सुधारों के साथ ही इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया। तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने "लुक ईस्ट "पॉलिसी की शुरुआत की, जिसका मुख्य उद्देश्य आर्थिक उदारीकरण को वैश्विक अर्थव्यवस्था से जोड़ना था, और दक्षिण-पूर्व एशिया इसका प्राकृतिक प्रवेशद्वार था। इस अवधि में भारत ने आसियान के साथ अपने संबंधों को एक पूर्ण संवाद भागीदार (1992), सेक्टरल साझेदार (1996), और फिर शिखर सम्मेलन स्तर की साझेदारी (2002) में बदल दिया। 2014 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सत्ता में आने के बाद," लुक ईस्ट" को "एक्ट ईस्ट" में बदल दिया गया, जो केवल आर्थिक संबंधों से परे सामरिक, सुरक्षा और संस्कृतिक संबंधों पर अधिक जोर देता है। इस नई नीति में समुद्री सुरक्षा, बुनियादी ढांचे का विकास (जैसे इंडो-पैसिफिक ओशन इनिशिएटिव), और लोगों से लोगों के संबंधों को बढ़ावा देना शामिल है। आज, दक्षिण-पूर्व एशिया भारत की इंडो-पैसिफिक रणनीति का एक केंद्रीय स्तंभ है,, जहां भारत एक वैश्विक शक्ति के रूप में अपनी भूमिका को प्रदर्शित कर रहा है।

भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच के संबंधों का अध्ययन केवल घटनाओं के वर्णनात्मक विश्लेषण से परे जाकर एक गहरा सैद्धांतिक आधार मांगता है इसके कई कारण है पहला अंतरराष्ट्रीय राजनीति अक्सर घटनाओं की दृष्ट

* शोध छात्र, जननायक चंद्रशेखर विश्वविद्यालय, बलिया, उत्तर प्रदेश anandaparihar@gmail.com

के पीछे छिपे सख्त संतुलन और राष्ट्रीय हितों की जटिल गणितीयता होती है जिसे समझने के लिए सिद्धांतों का सहारा लेना अनिवार्य है ।

दक्षिण पूर्व एशिया के साथ भारत के संबंधों में यथार्थवाद एक प्रमुख रूपरेखा प्रदान करता है यथार्थवाद के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली अराजक है और राज्य अपनी शक्ति और सुरक्षा को अधिकतम करने की दिशा में काम करते हैं इस सिद्धांत के दृष्टिकोण से भारत का दक्षिण पूर्व एशिया के प्रति रुझान केवल आर्थिक लाभ का नहीं बल्कि चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने की एक रणनीति है दक्षिण चीन सागर में चीन की आक्रामक दवा और "स्टिंग ऑफ पर्ल्स" की रणनीति के जवाब में भारत की" एक्ट ईस्ट पॉलिसी" एक उत्तर काल्पनिक रणनीति के रूप में देखी जा सकती है(मीरशाइमर 2001 पृष्ठ 40, स्कॉट पृष्ठ210)

दूसरा उदारवादी सिद्धांत इन संबंधों की आर्थिक और संस्थागत व्याख्या प्रदान करता है ।उदारवाद यह मानता है कि अंतरराष्ट्रीय संस्थान आर्थिक अंतर निर्भरता और व्यापार शक्ति राजनीति को नियंत्रित कर सकते हैं और युद्ध की संभावनाओं को कम कर सकते हैं भारत और आसियान के संबंधों में आर्थिक सहयोग प्रमुख स्तंभ रहा है। भारत आसियान मुक्त व्यापार क्षेत्र और क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी जैसे समझौतों पर चर्चा उदारवादी दृष्टिकोण को रेखांकित करती है उदारवादी सिद्धांत यह समझता है कि कैसे आर्थिक एकीकरण राजनीतिक विश्वास पैदा करता है भारत का इंडो - पेसिफिक ओशन इनीशिएटिव और सागरमाला परियोजना व्यापार और संपर्क को बढ़ावा देने का प्रयास है जिसका उद्देश्य समुद्री क्षेत्र में एक नियम आधारित व्यवस्था स्थापित करना है। यह सिद्धांत उन अवसरों पर भी प्रकाश डालता है जो आर्थिक संलयन से पैदा होते हैं जैसे की बुनियादी ढांचा परियोजनाएं, डिजिटल कनेक्टिविटी जो भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच के अंतराल को काम करते हैं(कोहेन और नाई 2000,पृष्ठ112)

तीसरा निर्माण वादी सिद्धांत इन संबंधों में सांस्कृतिक और सामाजिक पहलुओं को समझने में मदद करता है निर्माण वाद यह मानता है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति केवल भौतिक शक्ति से नहीं बल्कि विचारों पहचान और सामाजिक संरचनाओं से भी बनती है ।भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच के संबंधों में साझी सभ्यतागत विरासत एक अलग पहचान बनती है। भारत अक्सर बौद्ध राजनय और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का उपयोग करके इस क्षेत्र के साथ भावनात्मक संबंध स्थापित करने का प्रयास करता है ।निर्माण वादी दृष्टिकोण से भारत की पहचान एक बड़े लोकतंत्र और एक शांतिपूर्ण उभरती हुई शक्ति के रूप में उसे दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के लिए आकर्षक साझेदारी बनती है (आचार्य,2001,पृष्ठ75)

अंत में एक बहु सिद्धांत्मक दृष्टिकोण आज की जटिल वैश्विक राजनीति में सबसे अधिक प्रासंगिक है ।भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के संबंध एक ही सिद्धांत की जकड़ में नहीं आते, यह संबंध यथार्थवादी चिंताओं (चीन)उदारवादी आकांक्षाओं (व्यापार) और निर्माण वादी मूल्य (संस्कृति) का मिश्रण है, इसलिए सैद्धांतिक अध्ययन की आवश्यकता होती है ताकि हम इन सभी परतों को समझ सकें (गांगुली 2010पृष्ठ 150)

संक्षेप में विदेश नीति की अवधारणा और उसके निर्धारक भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के संबंधों की समझ के लिए आधारभूत है । यह कोई स्थिर या एक पक्षीय घटना नहीं है बल्कि यह भौगोलिक, ऐतिहासिक ,आर्थिक , सैन्य,राजनीतिक, सांस्कृतिक और नेतृत्व कारकों का एक जटिल अंतः क्रियात्मक परिणाम है भूगोल ने भारत को समुद्री पड़ोसी बनाया है। इतिहास ने सांस्कृतिक संबंध दिए हैं ।अर्थव्यवस्था ने एकीकरण की आवश्यकता पैदा की है, और सुरक्षा ने सहयोग को अनिवार्य बनाया है ।भारत की" एक्ट ईस्टपॉलिसी "इन सभी निर्धारकों का एक सामान्य संपूर्ण संगीत है ,यह सिद्धांतः यथार्थवादी (सुरक्षा और शक्ति संतुलन पर ध्यान केंद्रित करती है)लेकिन उदारवादी (आर्थिक एकीकरण और संस्थाओं की महत्ता) और निर्माण वादी तत्व (साझी संस्कृति और पहचान) भी इसमें समाहित है। इन सभी निर्धारकों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारत की दक्षिण पूर्व एशिया की ओर कदम एक क्षणिक आवेग नहीं बल्कि रणनीतिक आवश्यकता और ऐतिहासिक संबंधों का एक तार्किक और अनिवार्य परिणाम है। यह निर्धारक भारत को

वैश्विक मंच पर एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी के रूप में स्थापित करते हैं जो अपनी स्वायत्तता और हितों की रक्षा करते हुए क्षेत्रीय शांति और समृद्धि में योगदान देना चाहता है

अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन केवल राज्यों के बीच होने वाली घटनाओं और कूटनीतिक गतिविधियों का वर्णन मात्रा नहीं है बल्कि यह उन गहरी सैद्धांतिक आधारों को समझने का प्रयास भी है, जो वैश्विक राजनीति के स्वरूप व्यवहार और परिणाम को निर्धारित करते हैं। किसी भी क्षेत्रीय व्यवस्था विशेषतः दक्षिण पूर्व एशिया और हिंद प्रशांत को समझने के लिए आवश्यक है कि हम उन प्रमुख सिद्धांतों का विश्लेषण करें जिनके माध्यम से राज्य अपने हितों को परिभाषित करते हैं ,रणनीतियां निर्मित करते हैं और अन्य देशों के साथ संबंधों को संचालित करते हैं इस संदर्भ में यथार्थवाद, उदारवाद और संरचनावाद तीन प्रमुख सैद्धांतिक दृष्टिकोण हैं, जो न केवल अंतरराष्ट्रीय राजनीति के विभिन्न आयामों की व्याख्या करते बल्कि भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के बीच विकसित हो रहे संबंधों को समझने के लिए भी एक सशक्त विश्लेषणात्मक आधार प्रदान करते हैं

यथार्थवाद अंतरराष्ट्रीय संबंधों का एक प्राचीन तथा प्रभावशाली सिद्धांत है जो यह मानता है कि अंतरराष्ट्रीय प्रणाली अराजक होती है अर्थात इसमें कोई केंद्रीय सत्ता या विश्व सरकार नहीं होती है ,जो राज्यों के व्यवहार को नियंत्रित कर सके इस दृष्टिकोण के अनुसार अंतरराष्ट्रीय राजनीति के प्रमुख और तर्कसंगत अभिनेता राज्य होते हैं जिनका मुख्य उद्देश्य अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना तथा अपनी शक्ति को अधिकतम करना होता है। यथार्थवादी विचारको के अनुसार शक्ति ही अंतरराष्ट्रीय संबंधों की मूल मुद्रा है ,और सुरक्षा प्राप्त करना प्रत्येक राज्य की सर्वोच्च प्राथमिकता है(मार्गेंथाउ 1948पृष्ठ 5- 10)यथार्थवाद के शास्त्रीय रूप में यह माना जाता है , कि मानव स्वभाव स्वार्थी और शक्ति लोलुप होता है ,जिसके परिणाम स्वरुप राज्य भी इसी प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं । हंस जे .मोर्गेंथाऊ ने तर्क दिया की राजनीति चाहे वह घरेलू हो या अंतरराष्ट्रीय शक्ति के लिए संघर्ष का ही प्रतिबिंब है ।(मार्गेंथाउ 1948, पृष्ठ 13)इसके विपरीत संरचनात्मक यथार्थवाद जिसे कैनेथ वॉलट्ज में विकसित किया यह बताता है कि राज्यों का व्यवहार मानव स्वभाव से नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय प्रणाली की संरचना से निर्धारित होता है । वॉलट्ज के अनुसार अराजक व्यवस्था में राज्य अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शक्ति संतुलन की नीति अपनाते हैं(वॉलट्ज1979पृष्ठ 88- 93)

उदारवाद अंतरराष्ट्रीय संबंधों का ऐसा सिद्धांत जो सहयोग संस्थागत व्यवस्था और परस्पर निर्भरता पर बल देता है ।यह यथार्थवाद के विपरीत यह मानता है कि अंतरराष्ट्रीय प्रणाली केवल संघर्ष और प्रतिस्पर्धा तक सीमित नहीं है बल्कि इसमें सहयोग और सामूहिक लाभ भी पर्याप्त संभावनाएं होती हैं। उदारवादी विचारको के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं आर्थिक संबंध और लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था राज्यों के बीच सहयोग को बढ़ावा देती है और संघर्ष की संभावनाओं को काम करती है।(कोहेन और नाई , 1977पृष्ठ,24- 30)उदारवाद का मूल आधार यह है कि राज्य केवल शक्ति और सुरक्षा के लिए ही नहीं बल्कि आर्थिक समृद्धि और विकास के लिए भी कार्य करते हैं इस दृष्टिकोण के अनुसार वैश्वीकरण और आर्थिक परस्पर निर्भरता ने राज्यों को एक दूसरे के साथ सहयोग करने के लिए प्रेरित किया जब दो देशों के बीच व्यापार और निवेश के संबंध मजबूत होते हैं तो उनके बीच संघर्ष की संभावना कम हो जाती है, क्योंकि दोनों पक्ष आर्थिक नुकसान से बचना चाहते हैं। (डायल, 1986पृष्ठ 1152- 1155)

संरचनावाद अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अपेक्षाकृत नवीन सिद्धांत है, जो यह तर्क देता है कि, अंतरराष्ट्रीय राजनीति केवल भौतिक शक्तियां आर्थिक हितों द्वारा निर्धारित नहीं होती बल्कि विचारों ,मान्यताओं ,पहचान और सामाजिक संरचनाओं का भी इसमें महत्वपूर्ण योगदान होता है इस दृष्टिकोण के अनुसार राज्य का व्यवहार उसकी पहचान और सामाजिक संदर्भों से निर्मित होती है, जो समय के साथ बदल सकते हैं(वेंडट,1992, पृष्ठ 394)संरचनावादी विचारको का मानना है की अराजकता वही है जो राज्य उसे बनाते हैं अर्थात अंतरराष्ट्रीय प्रणाली का स्वरूप स्थिर नहीं बल्कि यह राज्यों के परस्पर संबंधों और उनके द्वारा निर्मित सामाजिक अर्थो पर निर्भर करता है, इस दृष्टिकोण में सांस्कृतिक संबंध, ऐतिहासिक अनुभव और साझा मूल्य अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उपरोक्त यथार्थवाद, उदारवाद और संरचनावाद तीनों सिद्धांत अंतरराष्ट्रीय संबंधों को समझने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। यथार्थवाद शक्ति और सुरक्षा पर बल देता है ,उदारवाद सहयोग और संस्थागत व्यवस्था को महत्व देता है, जबकि संरचनावाद विचारों पहचान और सांस्कृतिक संबंधों को केंद्र में रखता है। भारत और आसियान के बीच विकसित हो रहे संबंध इन तीनों दृष्टिकोण के सम्मिलित प्रभाव का परिणाम है, जहां एक ओर भारत क्षेत्रीय शक्ति संतुलन बनाए रखने के लिए रणनीति कदम उठा रहा है, वहीं दूसरी ओर वह आर्थिक सहयोग और संस्थागत भागीदारी के माध्यम से क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा दे रहा है ,साथ ही सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंधों के पुनरुत्थान के माध्यम से वह एक साझा पहचान का निर्माण भी कर रहा है ।अतः यह कहा जा सकता है कि भारत की" एक्ट ईस्ट नीति"को समझने के लिए एक बहुआयामी सैद्धांतिक दृष्टिकोण आवश्यक है जिसमें इन तीनों प्रमुख सिद्धांतों का समन्वय निहित हो। यही समग्र दृष्टिकोण भारत आसियान संबंधों की जटिलता और उनकी संभावनाओं को सही रूप में समझने में सहायक सिद्ध होता है

भारतीय विदेश नीति का सैद्धांतिक आधार

भारतीय विदेश नीति का विकास एक दीर्घ ऐतिहासिक वैचारिक तथा व्यवहारिक प्रक्रिया का परिणाम जिसमें समय-समय पर बदलते वैश्विक परिदृश्य ,राष्ट्रीय हितों की प्राथमिकताएं तथा नेतृत्व की दृष्टि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत ने अपने विदेश नीति को केवल केवल सामरिक ,या आर्थिक आवश्यकताओं तक सीमित न रखते हुए उसे एक व्यापक वैचारिक आधार प्रदान किया जिसमें नैतिकता स्वायत्त संतुलन और बह बहुपक्षीय सहयोग जैसे तत्व शामिल रहे ।

भारत के विदेश नीति के प्रारंभिक चरण में गुटनिरपेक्षता एक केंद्रीय सिद्धांत के रूप में स्थापित हुई ।शीत युद्ध के समय जब विश्व दो भागों में विभाजित था तब भारत ने किसी गुट में शामिल न होने की बजाय स्वतंत्रत संतुलित विदेश नीति अपनाने का निर्णय। इस नीति का मूल उद्देश्य था कि भारत अपने संप्रभुता और नीति निर्माण की स्वतंत्रता को बनाए रखते हुए वैश्विक शांति और विकास के लिए कार्य कर। सके(नेहरू,1956पृष्ठ32- 34)

रणनीतिक स्वायत्तता भारत की विदेश नीति का एक आधुनिक और विकसित सिद्धांत है जो गुटनिरपेक्षता की ही एक उन्नत अभिव्यक्त के रूप में देखा जा सकता है ।इसका मूल अर्थ यह है कि भारत अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने की क्षमता बनाए रखें, चाहे वह रक्षा, आर्थिक या कूटनीतिक क्षेत्र में हो यह अवधारणा विशेष रूप से शीत युद्ध के बाद के दौर में अधिक प्रासंगिक हुई जब वैश्विक व्यवस्था में बहु ध्रुवीय और परस्पर निर्भरता का विस्तार हुआ। (पंत 2019पृष्ठ45- 48)

रणनीतिक स्वायत्तता का एक अन्य महत्वपूर्णआर्थिक आयाम आर्थिक क्षेत्र में भी देखा जा सकता है ,भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था में सक्रिय भागीदारी करते हुए भी अपने घरेलू हितों और विकासात्मक प्राथमिकताओं को ध्यान में रखता है उदाहरण के लिए भारत में विभिन्न मुक्त व्यापार समझौतो में भाग लेते समय अपने उद्योगों और किसानों के हितों की रक्षा को प्राथमिकता दी है।(सुब्रमण्यम 2020पृष्ठ102- 104)

दक्षिण पूर्व एशिया और हिंद हिंद प्रशांत क्षेत्र मैं भी भारत की "एक्ट ईस्ट" रणनीतिक स्वायत्तता के एक उत्कृष्ट उदाहरण है ।भारत इस क्षेत्र में अपने उपस्थिति को मजबूत करते हुए विभिन्न देशों के साथ सहयोग कर रहा है ,किंतु वह किसी भी सैनिक गठबंधन का हिस्सा नहीं बना है।इससे भारत को अपनी स्वतंत्र नीति बनाए रखने और क्षेत्रीय संतुलंन में योगदान देने का अवसर मिलता है।(राजगोपालन ,2020, पृष्ठ 82- 92)इस प्रकार रणनीतिक सहायता भारत की विदेश नीति का एक गतिशील और व्यावहारिक सिद्धांत है जो उसे बदले वैश्विक परिवेश में अपने हितों की रक्षा करने और अपनी भूमिका को सुधार करने में सक्षम बनाता है ।

बहुध्रुवीयता की नीति भारत के विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक आधार है ,जो यह मानता है कि विश्व व्यवस्था में शक्ति का वितरण अनेक केंद्रों में होना चाहिए ना कि केवल एक या दो माह शक्तियों के हाथों में केंद्रित होना चाहिए। यह दृष्टिकोण वैश्विक संतुलन स्थिरता और न्याय पूर्ण व्यवस्था को बढ़ावा देने के उद्देश्य अपनाया गया।

भारत लंबे समय से एक ऐसी विश्व व्यवस्था का समर्थक रहा है जहां सभी देशों को समान अवसर और सम्मान प्राप्त हो।(जायसवाल 2017पृष्ठ 56- 60)दक्षिण पूर्व एशिया के संदर्भ में बहुध्रुवीयता की नीति भारत को एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करती है ।आसियान देश भी एक संतुलित क्षेत्रीय व्यवस्था के पक्षधर है जहां भी विभिन्न शक्तियों के साथ सहयोग कर सकें भारत इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हुए क्षेत्रीय सहयोग और संवाद को बढ़ावा देता है ।

उपरोक्त गुटनिरपेक्षता ,रणनीतिक स्वायत्तता और बहू ध्रुवीयता की नीति भारत की विदेश नीति के तीन प्रमुख सैद्धांतिक आधार हैं, जो समय के साथ विकसित होते हुए आज भी प्रासंगिक बने हुए है गुटनिरपेक्षता ने भारत को स्वतंत्र और संतुलित विदेश नीति की नींव प्रदान की रणनीतिक सहायता में उसे बदलते वैश्विक परिवेश से लचीला और प्रभावशाली बनाया बहुत ध्रुवीयता की नीति ने उसे एक संतुलित और समावेशी वैश्विक व्यवस्था के निर्माण में सक्रिय भागीदारी करने का अवसर दिया। इन तीनों सिद्धांतों का संबंध में भारत को एक जिम्मेदार स्वतंत्र और उभरती हुई वैश्विक शक्ति के रूप में स्थापित करता है, विशेष रूप से दक्षिण पूर्व एशिया और प्रसिद्ध प्रशांत क्षेत्र के संदर्भ में यह सिद्धांत भारत की विदेश नीति की दिशा प्रदान करते हैं, और उसे क्षेत्रीय शांति स्थिरता और विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम बनाते हैं।

संदर्भ सूची

आचार्य, ए. (2001), दक्षिण-पूर्व एशिया में सुरक्षा समुदाय का निर्माण, आसियान और क्षेत्रीय व्यवस्था की समस्या रूटलेज. (पृ. 75)
डॉयल, एम. (1986). उदारवाद और विश्व राजनीति, अमेरिकी राजनीति विज्ञान समीक्षा, 80(4), 1151 - 1169.
गांगुली, एस. (2010) 1980 के बाद का भारत कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रकाशन (प्र. 150)
हाल, टी. (2016), भारत की लुक ईस्ट नीतिर रणनीतिक आयाम, पैंटागन प्रेस. (पृ. 15)
जायसवाल, ए. (2017). भारत और बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था, पियरसन,
केओहाने, आर. ओ., एवं नाइ. ज. स. (1977). शक्ति और परस्पर निर्भरता. लिटिल ब्राउन.
केओहाने, र. ओ., एवं नाइ, जे. एस. (2000). शक्ति और परस्पर निर्भरता. लॉन्गमैन. (पृ. 112)
मीर्शाइमर, जे. जे. (2001). महाशक्ति राजनीति की त्रासदी. डब्ल्यू डब्ल्यू, नॉर्टन. (पृ. 40)
मॉर्गेथाऊ, एच. जे. (1948). राष्ट्रों के बीच राजनीतिर शक्ति और शांति का संघर्ष, नॉफ.पंत, ह. व. (2019). भारत की विदेश नीति: एक अवलोकन, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रकाशन. (पृ. 87)

◂◂ ▸▸

छत्तीसगढ़ की वर्तमान राजनीतिक एवं ऐतिहासिक परिवेश का अध्ययन

पूनम मानिकपुरी*
डॉ. एम.पी. रोहणी**

शोध सारांश

वर्तमान राजनीतिक परिवेश में छत्तीसगढ़ लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत सक्रिय राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र बना हुआ है। वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य छत्तीसगढ़ के ऐतिहासिक विकास राजनीतिक परिस्थितियों तथा समकालीन चुनौतियों का विश्लेषण करना है ताकि राज्य के सामाजिक-राजनीतिक स्वरूप को बेहतर ढंग से समझा जा सके। यह अध्ययन छत्तीसगढ़ की राजनीतिक चेतना एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के मध्य संबंधों को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होगा।

छत्तीसगढ़ भारत का एक महत्वपूर्ण राज्य है, जिसका गठन *1* नवम्बर *2000* को मध्यप्रदेश से पृथक होकर हुआ। यह राज्य अपनी समृद्ध आदिवासी संस्कृति प्राकृतिक संसाधनों तथा ऐतिहासिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। ऐतिहासिक दृष्टि से छत्तीसगढ़ प्राचीन काल में दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था। यहाँ विभिन्न राजवंशों जैसे कलचुरी, मराठा एवं ब्रिटिश शासन का प्रभाव रहा जिसने राज्य की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संरचना को प्रभावित किया। राज्य निर्माण के बाद छत्तीसगढ़ ने प्रशासनिक एवं राजनीतिक रूप से तीव्र विकास किया।

परिचय

छत्तीसगढ़ राज्य का गठन मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के अंतर्गत किया गया, जिसे भारत के राष्ट्रपति द्वारा 25 अगस्त 2000 को स्वीकृति प्रदान की गई। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के साथ 1 नवंबर 2000 को छत्तीसगढ़ विधानसभा अस्तित्व में आई। छत्तीसगढ़ विधानसभा का पहला सत्र रायपुर के राजकुमार कॉलेज के जशपुर हॉल में आयोजित किया गया था। बाद में विधानसभा को रायपुर-बलोदा बाजार मार्ग पर स्थित विधान नगर में नव-निर्मित छत्तीसगढ़ विधानसभा भवन में स्थानांतरित कर दिया गया।

छत्तीसगढ़ का इतिहासः

छत्तीसगढ़ का इतिहास, जिसे प्राचीन काल में दक्षिण कोसल कहा जाता था, चौथी शताब्दी ईस्वी तक जाता है। राज्य का पौराणिक इतिहास महाभारत और रामायण के काल से जुड़ा हुआ माना जाता है। 14वीं शताब्दी के दौरान हैहय वंश ने लगभग छह शताब्दियों तक छत्तीसगढ़ पर शासन किया। मध्यकाल में चालुक्य वंश ने बस्तर में अपना शासन स्थापित किया। अन्नमदेव पहले चालुक्य शासक थे जिन्होंने 1320 में बस्तर में इस वंश की स्थापना की।

1741 में मराठों ने हैहय वंश से राज्य पर अधिकार कर लिया। 1745 ईस्वी में राज्य जीतने के बाद रतनपुर घराने के अंतिम वंशज रघुनाथ सिंह जी को क्षेत्र छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा। अंततः 1758 में छत्तीसगढ़ पर मराठों का पूर्ण अधिकार हो गया और बिंबाजी भौंसले को शासक नियुक्त किया गया। बिंबाजी भौंसले की मृत्यु के बाद मराठों द्वारा सूबा व्यवस्था लागू की गई। यह अशांति और कुशासन का काल था। मराठा सेना बड़े पैमाने पर लूटपाट और डकैती में संलग्न रही। मराठा अधिकारियों ने क्षेत्र के हितों को ब्रिटिशों के सामने कमजोर कर दिया। मराठा शासन के अत्याचारों का गोंडों द्वारा विरोध किया गया। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में पिंडारियों ने राज्य पर आक्रमण किया। 1818 में छत्तीसगढ़ ब्रिटिश शासन के अधीन आ गया। 1854 में नागपुर के ब्रिटिश शासन में शामिल होने के बाद छत्तीसगढ़ को एक डिप्टी कमिश्नरी बनाया गया,

* शोधछात्रा, राजनीतिशास्त्र विभाग, राजनीतिशास्त्र विभाग, डॉ. बी. एस. पोर्ते शासकीय पीजी महाविद्यालय, पेंड्रा (छ.ग.)

** सहायक प्राध्यापक (शोध निर्देशक), राजनीतिशास्त्र विभाग, डॉ. बी. एस. पोर्ते शासकीय पीजी महाविद्यालय, पेंड्रा(छ.ग.)

जिसका मुख्यालय रायपुर में स्थापित किया गया। ब्रिटिश सरकार ने प्रशासनिक और राजस्व व्यवस्थाओं में कुछ सुधार किए। बस्तर के आदिवासियों ने ब्रिटिशों के विरुद्ध दृढ़ता से संघर्ष किया, जिसके परिणामस्वरूप हल्बा विद्रोह हुआ, जो 1774 से 1779 तक लगभग पाँच वर्षों तक चला। स्वतंत्रता संग्राम में इस क्षेत्र के प्रथम शहीद होने के कारण वीर नारायण सिंह का नाम छत्तीसगढ़ के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा गया है।

उत्पत्तिः

छत्तीसगढ़ भारत के उन राज्यों में से एक है जो देश के मध्य भाग में स्थित है। राज्य के उत्तर-पश्चिम में झारखंड, पूर्व में ओडिशा, दक्षिण में आंध्र प्रदेश तथा दक्षिण-पश्चिम में महाराष्ट्र स्थित हैं। इसका गठन मध्य प्रदेश राज्य से किया गया था। छत्तीसगढ़ नाम की उत्पत्ति का इतिहास रोचक और विस्तृत है। प्राचीन काल में छत्तीसगढ़ को दक्षिण कोसल कहा जाता था। इसका प्रमाण अभिलेखों तथा प्रारंभिक लेखकों की साहित्यिक कृतियों में मिलता है। मुगल काल में इस क्षेत्र को छत्तीसगढ़ नहीं, बल्कि रतनपुर प्रदेश कहा जाता था। छत्तीसगढ़ शब्द मराठा शासन के दौरान लोकप्रिय हुआ। इसका प्रथम आधिकारिक उपयोग 1795 में एक सरकारी दस्तावेज़ में किया गया था।

गठनः

छत्तीसगढ़ राज्य के निर्माण की पहली प्रशासनिक पहल तत्कालीन मध्य प्रदेश सरकार द्वारा की गई। 18 मार्च 1994 को मध्य प्रदेश विधानसभा में पृथक छत्तीसगढ़ राज्य की मांग के समर्थन में एक प्रस्ताव पारित किया गया। राज्य की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियों—कांग्रेस और भाजपा—ने इस मांग का समर्थन किया। 1998 में केंद्र सरकार ने इसी प्रस्ताव के साथ एक विधेयक तैयार किया और उसे मध्य प्रदेश विधानसभा की स्वीकृति हेतु भेजा। यह बिना किसी विरोध के पारित हो गया। हालांकि, केंद्र सरकार के पतन के कारण पुनः लोकसभा चुनाव हुए। इसके बाद नवगठित केंद्र सरकार ने फिर से विधेयक तैयार कर राज्य विधानसभा को भेजा। इसे एक बार फिर सर्वसम्मति से समर्थन मिला, जिससे इसके अनुमोदन का मार्ग प्रशस्त हुआ। वर्ष 2000 में भारत के राष्ट्रपति ने 25 अगस्त को मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम को स्वीकृति प्रदान की। अंततः 1 नवंबर 2000 को मध्य प्रदेश का विभाजन कर छत्तीसगढ़ राज्य का गठन किया गया।

छत्तीसगढ़ की राजनीतिक संरचनाः

छत्तीसगढ़ की राजनीतिक संरचना मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के अंतर्गत की गई। इस अधिनियम के अनुसार छत्तीसगढ़ का गठन विभिन्न प्रावधानों के तहत किया ।

छत्तीसगढ़ राज्य का गठनः

निर्धारित तिथि से एक नए राज्य का गठन किया गया जिसे छत्तीसगढ़ राज्य के नाम से जाना जाएगा। इसमें तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य के निम्नलिखित क्षेत्र शामिल किए गए बस्तर, रायपुर, दंतेवाड़ा, धमतरी, दुर्ग, जांजगीर-चांपा, जशपुर, कांकेर, कवर्धा, कोरबा, कोरिया, महासमुंद, रायगढ़, राजनांदगांव, सरगुजा।

उच्च न्यायालयः

1. छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, 2. छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, 3. छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार, 4. बार काउंसिल एवं अधिवक्ताओं से संबंधित विशेष प्रावधान, 5. छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय की कार्यप्रणाली एवं प्रक्रिया, 6. छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय की मुहर की अभिरक्षा, 7. रिट तथा अन्य न्यायिक प्रक्रियाओं का प्रारूप, 8. न्यायाधीशों की शक्तियाँ।

निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमनः

धारा 12 के प्रावधानों को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से निर्वाचन आयोग निम्नलिखित बातों का निर्धारण करेगा— (क) संविधान के संबंधित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों की संख्या निर्धारित करना।(ख) खंड (क)

में उल्लिखित प्रत्येक राज्य के विधानसभा निर्वाचन क्षेत्रों का विभाजन करना, प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की सीमा तय करना तथा यह निर्धारित करना कि किन निर्वाचन क्षेत्रों की सीटें अनुसूचित जातियों अथवा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित होंगी।(ग) आवश्यकता अनुसार प्रत्येक राज्य के संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं और क्षेत्र-विवरण में आवश्यक संशोधन करना।

निर्वाचन आयोग द्वारा ध्यान में रखे जाने वाले प्रावधानः

उपधारा (1) के खंड (ख) और (ग) में उल्लिखित विषयों का निर्धारण करते समय निर्वाचन आयोग निम्नलिखित बातों का ध्यान रखेगा–

(क) सभी निर्वाचन क्षेत्र एक-सदस्यीय होंगे। (ख) जहाँ तक संभव हो, सभी निर्वाचन क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से सघन/सुसंगत क्षेत्र होंगे तथा उनके परिसीमन में भौतिक विशेषताओं, प्रशासनिक इकाइयों की मौजूदा सीमाओं, संचार सुविधाओं और जनसुविधा का ध्यान रखा जाएगा। (ग) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र यथासंभव उन क्षेत्रों में स्थित होंगे जहाँ उनकी जनसंख्या का अनुपात कुल जनसंख्या की तुलना में सर्वाधिक हो।

सहयोगी सदस्यः

निर्वाचन आयोग अपने कार्यों के निर्वहन में सहायता हेतु पाँच व्यक्तियों को सहयोगी सदस्य के रूप में नियुक्त कर सकता है, जिन्हें केंद्र सरकार आदेश द्वारा निर्दिष्ट करेगी। ये व्यक्ति संबंधित राज्य की विधानसभा या लोकसभा के सदस्य होंगे जो उस राज्य का प्रतिनिधित्व करते हों। परंतु, इन सहयोगी सदस्यों को निर्वाचन आयोग के किसी निर्णय पर मतदान करने या हस्ताक्षर करने का अधिकार नहीं होगा। यदि किसी सहयोगी सदस्य का पद मृत्यु या त्यागपत्र के कारण रिक्त हो जाता है, तो उपधारा (3) के प्रावधानों के अनुसार यथाशीघ्र उस रिक्ति को भरा जाएगा।

निर्वाचन आयोग द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रियाः

निर्वाचन आयोग–

(क) निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन संबंधी अपने प्रस्तावों को, यदि किसी सहयोगी सदस्य द्वारा असहमति व्यक्त की गई हो तो उसके पृथक प्रस्तावों सहित, राजपत्र (Official Gazette) में प्रकाशित करेगा। साथ ही आयोग आपत्तियाँ और सुझाव आमंत्रित करने हेतु एक सूचना जारी करेगा तथा एक ऐसी तिथि निर्दिष्ट करेगा जिसके बाद प्रस्तावों पर पुनर्विचार नहीं किया जाएगा।(ख) निर्दिष्ट तिथि से पूर्व प्राप्त सभी आपत्तियों और सुझावों पर विचार करेगा।(ग) सभी आपत्तियों एवं सुझावों पर विचार करने के बाद एक या अधिक आदेशों द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन का अंतिम निर्धारण करेगा तथा उन आदेशों को राजपत्र में प्रकाशित करवाएगा। ऐसे प्रकाशन के पश्चात उन आदेशों को विधि का पूर्ण बल प्राप्त होगा और उन्हें किसी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

सामाजिक अवसंरचनाः

आज का छत्तीसगढ़ सामाजिक अवसंरचना की दृष्टि से अपनी परंपरा और इतिहास का प्रतिबिंब है। देश के अनेक अन्य क्षेत्रों के विपरीत, राज्य की महिलाओं ने सदैव पर्याप्त स्वतंत्रता का आनंद लिया है। यही कारण है कि आधुनिक छत्तीसगढ़ की महिलाएँ भी समान सामाजिक स्थिति का उपभोग करती हैं। मध्य प्रदेश सरकार की 1998 की मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, जो जिले अब छत्तीसगढ़ में शामिल हैं, उनका प्रदर्शन लैंगिक विकास सूचकांक में काफी बेहतर था। परंपरागत रूप से भी छत्तीसगढ़ की महिलाएँ अपेक्षाकृत उदार और स्वतंत्र रही हैं। देश के कई भागों में प्रचलित पर्दा प्रथा छत्तीसगढ़ में उतनी प्रभावशाली नहीं है। यहाँ 'चूड़ी पहनाना' नामक एक प्रथा भी है, जिसके अनुसार यदि कोई महिला चाहे तो वह अपना विवाह समाप्त कर

सकती है। हालांकि उच्च जातियों की महिलाएँ इस प्रथा का लाभ नहीं उठा पातीं। फिर भी, इन प्रथाओं की उपस्थिति यह सिद्ध नहीं करती कि यहाँ पुरुष-प्रधान समाज नहीं है।

प्रथम स्वतंत्रता संग्रामः

1857 में भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में बस्तर ने सक्रिय भूमिका निभाई। यह वही वर्ष था जब सिपाही विद्रोह की महान क्रांति हुई, जिसने ब्रिटिशों के दमनकारी शासन को बड़ा आघात पहुँचाया। बस्तर का स्वतंत्रता आंदोलन देश के प्रारंभिक स्वतंत्रता आंदोलनों में से एक था। बस्तर का दक्षिणी भाग इस प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन का केंद्र बिंदु बना। ध्रुवराव ने इस आंदोलन का नेतृत्व किया और ब्रिटिशों के दमनकारी शासन के विरुद्ध युद्ध लड़ा। ध्रुवराव बस्तर क्षेत्र में पाई जाने वाली मारिया जनजातियों में से एक जनजाति से संबंधित थे। उनकी जनजाति को डोरलाओं के नाम से जाना जाता है। उनके सभी जनजातीय साथियों तथा अन्य जनजातियों के लोगों ने भी इस स्वतंत्रता आंदोलन में उनका समर्थन किया। यह विद्रोह का प्रमुख केंद्रों में से एक था और इतिहास स्वतंत्रता के प्रथम संघर्ष में योगदान के लिए बस्तर के नाम को सदैव स्मरण रखेगा

छत्तीसगढ़ में विद्रोहः

आदिवासी बहुल राज्य छत्तीसगढ़ का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अत्यंत समृद्ध है। छत्तीसगढ़ के इतिहास पर लिखी जाने वाली किसी भी पुस्तक में छत्तीसगढ़ के विद्रोहों पर अनेक अध्याय शामिल करने होंगे। राज्य ने वर्षों के दौरान अनेक जनजातीय विद्रोहों का अनुभव किया है। इनकी शुरुआत अठारहवीं शताब्दी में हुई और यह बीसवीं शताब्दी के कुछ दशकों तक जारी रहे। इनमें से कुछ विद्रोह स्थानीय जनजातियों तक सीमित थे, जबकि अन्य बड़े पैमाने के जनआंदोलन थे। छत्तीसगढ़ के कुछ प्रमुख विद्रोह इस प्रकार हैं–

हल्बा विद्रोह – 1774 में प्रारंभ, 1779 तक जारी, भोपालपट्टनम संघर्ष – 1795, परलकोट विद्रोह – 1825, तारापुर विद्रोह – 1842 में प्रारंभ, 1854 तक जारी, मारिया विद्रोह – 1842 में प्रारंभ, 1863 तक जारी, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम – 1856 में प्रारंभ, 1857 तक जारी, कोइ विद्रोह – 1859, मुरिया विद्रोह – 1876, रानी विद्रोह – 1878 में प्रारंभ, 1882 तक जारी, भूमकाल – 1910।

कोइ विद्रोह बस्तर क्षेत्र के आदिवासी लोगों का एक महत्वपूर्ण जनउभार था। यह विद्रोह ब्रिटिशों के निरंकुश और दमनकारी शासन के विरोध में किया गया था। छत्तीसगढ़ के इतिहास का यह महत्वपूर्ण विद्रोह, जिसे कोइ विद्रोह के नाम से जाना जाता है, वर्ष 1859 में हुआ था।अन्य जनजातीय विद्रोहों की तुलना में कोइ विद्रोह को एक गंभीर जनउभार माना जाता है, जिसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। यह विद्रोह दक्षिणी बस्तर क्षेत्र में आकार लेने लगा। आदिवासी लोगों ने ब्रिटिशों के उस निर्णय को स्वीकार करने से इंकार कर दिया, जिसके अंतर्गत ठेके प्रदान किए गए थे। जिन ठेकेदारों को वृक्ष काटने का ठेका दिया गया था, वे निर्दोष आदिवासी लोगों का अनेक प्रकार से शोषण भी करते थे। इससे आदिवासी पुरुषों की आर्थिक और मानसिक समस्याएँ और बढ़ गईं। जब स्थिति अत्यधिक गंभीर हो गई, तब आदिवासी लोगों ने बस्तर में कोइ विद्रोह का आह्वान किया। उन्होंने सामूहिक रूप से निर्णय लिया कि वे एक भी वृक्ष की कटाई सहन नहीं करेंगे। ब्रिटिशों ने अशांति को दबाने के लिए अनेक उपाय अपनाए और आदिवासी नेतृत्व वाले विरोध को रोकने का प्रयास किया। किंतु इस बार आदिवासी अपने निर्णय पर अडिग रहे। उन्होंने अपने प्राकृतिक संसाधनों और समृद्ध वनों के शोषण की अनुमति नहीं दी।

मारिया विद्रोहः

मारिया विद्रोह अपनी विशेषताओं के कारण अद्वितीय माना जाता है। यह बस्तर क्षेत्र में हुआ था। मारिया जनजाति का यह विद्रोह एक दीर्घकालिक आंदोलन था, जो 1842 से 1863 तक चला। यह विद्रोह मुख्यतः मानव बलि की प्रथा को बनाए रखने के उद्देश्य से किया गया था। यद्यपि ऐसी प्रथा के समर्थन में संघर्ष करना अमानवीय प्रतीत होता है, फिर भी आदिवासी लोगों के पास कोई अन्य विकल्प नहीं था। मराठों

और ब्रिटिशों द्वारा बार-बार आक्रमण किए गए। मराठों और ब्रिटिशों के संयुक्त शासन ने आदिवासी लोगों के लिए अपनी पहचान और मौलिकता बनाए रखना लगभग असंभव बना दिया। एंग्लो-मराठा शासन ने आदिवासी जनजातियों को उनकी पारंपरिक आस्थाओं और प्रथाओं से दूर होने के लिए विवश किया। ब्रिटिश और मराठा निरंतर मंदिरों में प्रवेश करते थे, जिससे आदिवासी लोगों की मान्यता के अनुसार मंदिरों का पवित्र वातावरण दूषित होता था। मारिया समुदाय की पहचान बचाने का एकमात्र उपाय आक्रमणकारियों के विरुद्ध विद्रोह करना था। मारिया विद्रोह को प्रमुख जनजातीय विद्रोहों में से एक माना जाता है।

मुरिया विद्रोहः

मुरिया विद्रोह बस्तर क्षेत्र में उत्पन्न एक अन्य महत्वपूर्ण विद्रोह था। यह विद्रोह 1876 में प्रारंभ हुआ, इसलिए इसे 1876 का मुरिया विद्रोह भी कहा जाता है। यह अत्याचार सह रहे आदिवासी समुदाय के लिए एक महत्वपूर्ण प्रेरणा बना। सभी आयु वर्ग के लोगों का दमन और शोषण पूरे क्षेत्र में किया जा रहा था। वर्ष 1867 में गोपीनाथ कपारदास को बस्तर राज्य का दीवान नियुक्त किया गया। गोपीनाथ कपारदास सरल और निर्दोष आदिवासी लोगों का शोषण करता था। दीवान के अत्याचारों से त्रस्त होकर आदिवासी लोगों ने राजा से उसे पद से हटाने की अपील की, किंतु राजा ने अपनी प्रजा का साथ नहीं दिया। यह स्थिति लंबे समय तक बनी रही और लगातार उपेक्षित किए जाने के बाद आदिवासियों के पास विद्रोह के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं बचा।

परलकोट विद्रोहः

वर्ष 1825 अबुझमारियों के लिए एक महत्वपूर्ण वर्ष था, जो वर्तमान छत्तीसगढ़ क्षेत्र के निवासी थे। परलकोट विद्रोह विदेशी शासन के आक्रमण के विरुद्ध विरोध का प्रतीक था। यह विद्रोह विदेशी आक्रमणों के प्रति अबुझमारियों के मन में संचित असंतोष की अभिव्यक्ति था। उनका क्रोध मुख्यतः मराठों और ब्रिटिश विदेशी शासकों के विरुद्ध था। परलकोट विद्रोह छत्तीसगढ़ के इतिहास के प्रमुख जनजातीय विद्रोहों में से एक माना जाता है। अबुझमारिया नेता गेंद सिंह ने इस विद्रोह का नेतृत्व किया और अन्य अबुझमारियों ने उनका समर्थन किया। इस विद्रोह का उद्देश्य एक ऐसे समाज की स्थापना करना था जो सभी बुराइयों से मुक्त हो। विदेशी शासन की नीतियों ने आदिवासी समुदाय की स्वतंत्रता को संकट में डाल दिया था और अबुझमारियों ने इसका विरोध किया। मराठों ने स्थानीय लोगों पर भारी कर लगाए, जिन्हें चुकाना उनके लिए असंभव था। उन्होंने विदेशी शक्तियों द्वारा किए गए अन्याय के विरुद्ध विद्रोह किया। उनका उद्देश्य विदेशी हस्तक्षेप से मुक्त बस्तर का निर्माण करना ।

पृथक छत्तीसगढ़ः

पृथक छत्तीसगढ़ आंदोलन ने 1990 के दशक से पहले ठोस रूप नहीं लिया, यद्यपि इसके बीज बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में ही बो दिए गए थे। पृथक छत्तीसगढ़ राज्य की मांग का जन्म भी बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। यह पहल छत्तीसगढ़ की पहचान को प्रमुखता देने के उद्देश्य से की गई थी। पृथक छत्तीसगढ़ की पहली मांग 1924 में रायपुर कांग्रेस इकाई द्वारा उठाई गई थी। आंदोलन के प्रारंभिक चरण में इसे आम जनता का समर्थन प्राप्त हुआ, किंतु इसे व्यापक रूप से फैलने नहीं दिया गया। इस दौरान विभिन्न सर्वदलीय सेमिनार, रैलियाँ और जनसभाएँ आयोजित की गईं ताकि इस उद्देश्य को समर्थन मिल सके। स्वतंत्रता के बाद भी पृथक छत्तीसगढ़ के लिए प्रयास जारी रहे, परंतु 1955 तक कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली। इसी वर्ष नागपुर विधानसभा में पृथक छत्तीसगढ़ की मांग रखी गई। इससे पहले 1954 में राज्य पुनर्गठन आयोग के गठन के समय भी पृथक छत्तीसगढ़ की मांग उठाई गई थी, किंतु इसे अस्वीकार कर दिया गया। अस्वीकृति का कारण यह बताया गया कि छत्तीसगढ़ क्षेत्र की समृद्धि और तीव्र विकास से बड़े राज्य मध्य प्रदेश के अविकसित और निर्धन क्षेत्रों की भरपाई हो रही थी।

पृथक छत्तीसगढ़ आंदोलन विभिन्न रूपों में निरंतर चलता रहा। कभी यह तेज़ हुआ तो कभी इसकी गति धीमी पड़ी, किंतु पृथक छत्तीसगढ़ का सपना बना रहा। 1990 के दशक के उत्तरार्ध में परिस्थितियाँ बदलीं। अनेक रैलियों, जनसभाओं तथा प्रमुख राजनीतिक दलों के समर्थन ने पृथक छत्तीसगढ़ आंदोलन को नई दिशा प्रदान की।

तारापुर विद्रोहः

तारापुर विद्रोह बस्तर क्षेत्र के जनजातीय विद्रोहों का एक और महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो वर्तमान छत्तीसगढ़ का हिस्सा है। यह उन प्रमुख विद्रोहों में से एक था जिसमें बस्तर के सामान्य लोगों ने विदेशी शासकों के विरुद्ध संघर्ष किया। तारापुर विद्रोह 1842 से 1854 तक चला। बस्तर में विदेशी शासकों के विरुद्ध निरंतर विद्रोह होते रहे। बस्तर के मूल निवासियों को लगा कि उनकी स्थानीय परंपराओं और संस्कृति को गंभीर क्षति पहुँच रही है तथा सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्थाएँ बाधित हो रही हैं। इस प्रकार उन्होंने अपनी मूल संस्कृति को पुनर्स्थापित करने के लिए एंग्लो-मराठा शासन का विरोध किया। आदिवासी लोगों पर भारी कर लगाए गए और उन्हें कर चुकाने के लिए बाध्य किया गया। स्थानीय दीवान, जो सामान्य जनता से कर वसूलता था, उनके लिए उत्पीड़न का प्रतीक बन गया। अधिकांश जनाक्रोश स्थानीय दीवान पर केंद्रित हुआ क्योंकि उच्च अधिकारी उनकी पहुँच से बाहर थे। आदिवासियों का क्रोध लगातार बढ़ता गया, जिसके परिणामस्वरूप तारापुर विद्रोह हुआ।

हल्बा विद्रोहः

हल्बा विद्रोह को भारत के वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्य के इतिहास का एक महत्वपूर्ण जनजातीय विद्रोह माना जाता है। यह विद्रोह छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले के क्षेत्र में हुआ था। इसने बस्तर जिले में स्थायी परिवर्तन उत्पन्न किया।चालुक्यों के पतन के बाद ऐसी परिस्थितियाँ बनीं कि मराठा और ब्रिटिश दोनों एक के बाद एक शासन स्थापित करने के लिए इस क्षेत्र में आए। हल्बा विद्रोह उनके विरुद्ध 1774 में प्रारंभ हुआ। डोंगर के तत्कालीन शासक/गवर्नर अजमेर सिंह हल्बा विद्रोह के प्रवर्तक थे। यह विद्रोह डोंगर में एक नए और स्वतंत्र राज्य की स्थापना की इच्छा से प्रारंभ किया गया था। हल्बा जनजाति तथा सैनिकों ने अजमेर सिंह का साथ दिया।

विद्रोह का मुख्य कारण आम जनता के पास धन और भोजन की कमी थी। लंबे सूखे ने लोगों को विशेष रूप से प्रभावित किया, विशेषकर उन लोगों को जिनके पास बहुत कम कृषि योग्य भूमि थी। इस गंभीर समस्या के साथ-साथ मराठों और ब्रिटिशों द्वारा आम जनता पर डाले गए दबाव और भय ने विद्रोह को जन्म दिया। अंततः ब्रिटिश सेना और मराठों ने विद्रोह को बलपूर्वक दबा दिया और नरसंहार किया, जिसमें हल्बा जनजाति के अनेक लोग मारे गए। इसके बाद हल्बा सेना भी पराजित हो गई। फिर भी हल्बा सेना की हार के बाद परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि बस्तर जिले का इतिहास सदा के लिए बदल गया ।

छत्तीसगढ़ के समाज सुधारकः

रैदास पंथ

छत्तीसगढ़ का इतिहास विभिन्न सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों और विद्रोहों का साक्षी रहा है। समय-समय पर अनेक लोगों ने स्थापित सामाजिक संरचनाओं और प्रथाओं का विरोध किया। जहाँ आदिवासी लोगों ने अपने अधिकारों और संस्कृति की रक्षा के लिए संघर्ष किया, वहीं दलित जैसे अन्य कमजोर वर्गों ने धार्मिक और सामाजिक अत्याचारों की निंदा की।इसी विद्रोही मानसिकता के परिणामस्वरूप रामनामी पंथ, सतनाम पंथ, कबीर पंथ और रैदास पंथ जैसे अनेक धार्मिक संप्रदायों का गठन हुआ। रामानंद एक प्रतिष्ठित सामाजिक एवं धार्मिक सुधारक थे, जिनके अनेक अनुयायी थे। उनके अनुयायियों में एक दलित रविदास (जिन्हें रैदास भी कहा जाता है) रामानंद के समर्पित शिष्य थे।

रैदास रामानंद की शिक्षाओं से अत्यधिक प्रभावित थे और उन्होंने अपने दार्शनिक विचार जोड़कर समानता का संदेश फैलाना प्रारंभ किया। शीघ्र ही उन्होंने क्षेत्र के गरीब वर्ग का ध्यान आकर्षित किया और उन्हें लगा कि उन्हें एक ऐसा नेता मिल गया है जो उनके लिए आवाज़ उठाएगा। इसी प्रकार रैदास पंथ अस्तित्व में आया। रैदास पंथ के अनुयायी स्वयं को रैदासी या रैदास पंथी कहते हैं। इस पंथ का पालन मुख्यतः दलित समुदाय करता है, जो सामाजिक और धार्मिक समानता में विश्वास रखता है।

रामनामी पंथ

रामनामी पंथ छत्तीसगढ़ के धार्मिक संप्रदायों में से एक है, जिसके अनेक अनुयायी दलित समुदाय से आते हैं। छत्तीसगढ़ के अन्य सुधार आंदोलनों की तरह रामनामी पंथ भी हिंदू समाज में ब्राह्मणों के अत्याचारों के विरोध के रूप में अस्तित्व में आया। एक समय दलितों को अत्यधिक भेदभाव और दमन का सामना करना पड़ा। उन्होंने इस धारणा का विरोध किया कि ब्राह्मण सर्वोच्च और प्रभुत्वशाली वर्ग हैं। उन्होंने इस पंथ की स्थापना की, जो भगवान राम को अपना ईश्वर मानता है। आज भी रामनामी पंथ के अनुयायी ब्राह्मणों को ईश्वर तक पहुँचने का माध्यम मानने से इंकार करते हैं। वे स्वयं अपने ईश्वर की पूजा करना अधिक उचित समझते हैं।

सतनाम पंथ

छत्तीसगढ़ सदैव आदिवासी बहुल क्षेत्र रहा है। बड़ी जनजातीय आबादी की अपनी संस्कृति और परंपराएँ रही हैं। छत्तीसगढ़ का इतिहास बताता है कि यद्यपि उनकी संस्कृति पर रूढ़िवादी हिंदू धर्म का प्रभाव था, फिर भी उन्होंने पदानुक्रम आधारित धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था का विरोध किया। अनेक धार्मिक और सामाजिक सुधार आंदोलनों के परिणामस्वरूप सतनाम पंथ, कबीर पंथ, रामनामी पंथ और रैदास पंथ जैसे नए संप्रदाय अस्तित्व में आए। सामाजिक अत्याचारों के विरोध और समानता की मांग ने सतनाम पंथ को जन्म दिया। यह आंदोलन उन्नीसवीं शताब्दी में दलितों के छोटे समूहों द्वारा प्रारंभ किया गया।

विनम्र किसान गुरु घासीदास के नेतृत्व में यह आंदोलन गरीब वर्गों में लोकप्रिय हुआ। उन्होंने सतनाम पंथ की स्थापना की और स्वयं को सतनामी कहा। सतनामी एक निराकार परमशक्ति में विश्वास रखते हैं और केवल सत्य के शाश्वत नाम का अनुसरण करते हैं। वे मद्यपान, धूम्रपान, तंबाकू चबाने से दूर रहते हैं तथा कुछ विशेष प्रकार की सब्जियाँ, लाल दालें और मांस खाने से परहेज करते हैं। वे पारंपरिक हिंदू मूर्तियों और देवी-देवताओं को नहीं मानते। वे जातिविहीन समाज में विश्वास रखते हैं और समानता को बढ़ावा देते हैं। सतनाम समुदाय मुख्यतः बटाईदार किसानों और भूमिहीन मजदूरों से बना है। इस संप्रदाय के प्रथम नेता गुरु घासीदास ने गुरु-परंपरा की स्थापना की, जो वंशानुगत है। छत्तीसगढ़ में भंडार और गिरौद सतनाम पंथ के प्रमुख केंद्र हैं।

निष्कर्षः

आदिवासी बहुल राज्य छत्तीसगढ़ का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अत्यंत समृद्ध है। छत्तीसगढ़ के इतिहास पर लिखी जाने वाली किसी भी पुस्तक में छत्तीसगढ़ के विद्रोहों पर अनेक अध्याय शामिल करने पड़ेंगे। इस राज्य ने वर्षों के दौरान अनेक जनजातीय विद्रोहों को देखा है। इन विद्रोहों की शुरुआत अठारहवीं शताब्दी में हुई और यह बीसवीं शताब्दी के कुछ दशकों तक जारी रहे। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन की प्रथम प्रशासनिक पहल तत्कालीन मध्यप्रदेश सरकार द्वारा की गई थी। 18 मार्च 1994 को मध्यप्रदेश विधानसभा में पृथक छत्तीसगढ़ राज्य की मांग के साथ एक प्रस्ताव पारित किया गया। राज्य की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियों कांग्रेस और भाजपा ने इस मांग का समर्थन किया।

References:

1. Singh, A. P. (2021). Political culture and regional development in Chhattisgarh. Indian Journal of Political Science, 82(3), 45–58.
2. Verma, S. (2022). Impact of political participation on rural society in Chhattisgarh. Journal of Social Studies, 14(2), 101–115.
3. Singh, P. (2021). Social structure and tribal culture in Chhattisgarh. Indian Journal of Sociology, 18(2), 55–70.
4. Verma, A. (2020). The role of Bastar in the first war of Indian independence. Journal of Modern Indian History, 12(1), 88–102.
5. Singh, D. P. (2021). Tribal rebellions and resistance movements in Chhattisgarh. Journal of Tribal Studies, 15(3), 40–58.
6. Yadav, S. (2019). Social and cultural identity of tribal communities in Bastar. International Journal of Social Sciences, 8(1), 66–79.
7. Guha, R. (1999). Elementary aspects of peasant insurgency in colonial India. Oxford University Press.
8. Sinha, A. (2020). The Muria and Paralkot rebellions in colonial Bastar. Indian Historical Studies, 18(1), 95–112.
9. Kumar, S. (2021). Tribal uprisings and anti-colonial resistance in Bastar region. Journal of Indian Tribal Studies, 13(2), 52–68.
10. Mishra, A. (2020). The separate state movement of Chhattisgarh: A socio-political analysis. Indian Political Review, 17(1), 101–118.
11. Kumar, R. (2020). Political structure and administrative development of Chhattisgarh after state formation. Journal of Indian Political Studies, 11(3), 78–96.
12. Singh, A. (2021). Electoral reforms and constituency delimitation in India. Indian Journal of Political Science, 82(4), 115–129.
13. Verma, P. (2020). Representation of Scheduled Castes and Scheduled Tribes in state legislatures of India. Journal of Constitutional Studies, 14(2), 66–81.

महिला सशक्तिकरण और बिहार में परिवर्तित मतदान व्यवहार (2010–2020): कल्याणकारी राजनीति से निर्वाचनात्मक एजेंसी तक

मनीष कुमार*
डॉ. अखिलेश पाल**

1. प्रस्तावना

2010 से 2020 के बीच बिहार का निर्वाचन परिदृश्य एक महत्वपूर्ण परिवर्तन को प्रतिबिंबित करता है, विशेषकर महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी के संदर्भ में। ऐतिहासिक रूप से जाति-आधारित लामबंदी और पुरुष-केंद्रित नेतृत्व द्वारा संचालित बिहार की राजनीति लंबे समय तक पहचान-आधारित गठबंधनों तथा संरक्षण नेटवर्कों के इर्द-गिर्द संरचित रही है (Jaffrelot, 2003; Kumar, 2010)। तथापि, हाल के चुनावों में महिला मतदाता सहभागिता में निरंतर वृद्धि परिलक्षित होती है। 2020 के बिहार विधानसभा चुनाव में महिला मतदाता प्रतिशत 59.69% तक पहुँचा, जो पुरुषों के 54.45% की तुलना में अधिक था, और इस प्रकार लैंगिक अंतर में ऐतिहासिक उलटफेर दर्ज हुआ (Election Commission of India [ECI], 2020)।

यह परिवर्तन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में और अधिक स्पष्ट हो जाता है। 1967 के विधानसभा चुनाव में महिला मतदान प्रतिशत 41.09% था, जबकि पुरुषों का मतदान प्रतिशत 60.82% रहा (ECI, 2020)। दशकों तक महिलाओं की भागीदारी पितृसत्तात्मक मानदंडों, निम्न साक्षरता, सीमित गतिशीलता तथा राजनीतिक नेटवर्कों तक प्रतिबंधित पहुँच के कारण बाधित रही (Chhibber, 2002; Rai, 2011)। निर्वाचन प्रतिस्पर्धा मुख्यतः जातिगत समीकरणों द्वारा संचालित थी, विशेषकर मंडल युग के पश्चात, जब पिछड़ी जातियों की लामबंदी बिहार की राजनीति की केंद्रीय धुरी बन गई (Jaffrelot, 2003)।

यह परिवर्तन 2005 के बाद शासन सुधारों और लैंगिक-उन्मुख कल्याणकारी हस्तक्षेपों के साथ गति पकड़ता है। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 50% आरक्षण के विस्तार के निर्णय ने वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया (Jensenius, 2017)। बिहार ग्रामीण आजीविका परियोजना (जीविका) ने स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं के सामूहिक संगठन को सुदृढ़ किया (World Bank, 2016)। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन तथा एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS) के अंतर्गत आशा एवं आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं जैसे जमीनी सेवा नेटवर्कों ने महिलाओं की राज्य संस्थाओं के साथ सहभागिता को विस्तारित किया (Ministry of Health & Family Welfare, 2019)। प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना तथा प्रधानमंत्री जन धन योजना जैसी केंद्रीय कल्याणकारी योजनाओं ने महिलाओं के बीच वित्तीय समावेशन और संपत्ति स्वामित्व को प्रोत्साहित किया (Government of India, 2021)।

इन हस्तक्षेपों ने दो परस्पर संबद्ध परिणाम उत्पन्न किए: विस्तारित गतिशीलता तथा शासन प्रक्रियाओं में गहन एकीकरण। अनुसंधान इंगित करता है कि कल्याणकारी योजनाओं के संपर्क और संस्थागत भागीदारी से नीति-जागरूकता तथा प्रदर्शन-आधारित मूल्यांकन की क्षमता सुदृढ़ होकर राजनीतिक व्यवहार में परिवर्तन संभव होता है (Stockemer, 2017)। बिहार से उभरते प्रमाण दर्शाते हैं कि जिन निर्वाचन क्षेत्रों में लैंगिक अनुपात अधिक संतुलित है, वहाँ मतदान प्रतिशत भी अपेक्षाकृत अधिक है, जो महिलाओं की बढ़ती निर्वाचनात्मक प्रासंगिकता को रेखांकित करता है (ECI, 2020)। महिलाएँ अब केवल जातिगत या पारिवारिक मध्यस्थता के माध्यम से संगठित मतदाता नहीं रह गई हैं, बल्कि वे स्वायत्त मतदाता के रूप में उभर रही हैं।

यद्यपि सहभागिता में वृद्धि हुई है, तथापि वास्तविक राजनीतिक अधिकार अभी भी असमान बना हुआ है। आरक्षण वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व को बढ़ाता है, परंतु दलगत संरचनाओं और विधायी संस्थाओं में महिलाओं का प्रभाव अनौपचारिक पुरुष मध्यस्थता तथा गहराई से जड़ जमाए जाति-पितृसत्तात्मक मानदंडों द्वारा सीमित रहता है (Jensenius, 2017; Rai, 2011)। अतः वर्णनात्मक समावेशन स्वतः ही वास्तविक सशक्तिकरण में परिवर्तित नहीं होता।

यह अध्ययन तर्क प्रस्तुत करता है कि बिहार की महिलाएँ निष्क्रिय सहभागियों से सक्रिय निर्वाचनात्मक हितधारकों में परिवर्तित हुई हैं। तथापि, दलगत संरचनाओं के भीतर विद्यमान संरचनात्मक अवरोध वास्तविक सशक्तिकरण की पूर्ण

* शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
ईमेल– manishsamrat63@gmail.com
** असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्राप्ति को सीमित करते हैं। सशक्तिकरण, कल्याणकारी राजनीति तथा लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण से संबंधित विमर्शों के संदर्भ में बिहार की स्थिति का विश्लेषण करते हुए यह शोध मूल्यांकन करता है कि महिला मतदाता प्रतिशत में वृद्धि क्या गहन लोकतांत्रिक समावेशन का संकेत है, अथवा यह अभी भी स्थायी संस्थागत सीमाओं से परिबद्ध है।

2. सैद्धान्तिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

बिहार में महिलाओं के मतदान व्यवहार में आए परिवर्तन को समझने के लिए इस विमर्श को दो परस्पर संबद्ध रूपरेखाओं के भीतर स्थापित करना आवश्यक है: प्रथम, लैंगिक राजनीतिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत; तथा द्वितीय, निर्वाचन व्यवहार के संरचनात्मक निर्धारक। यद्यपि महिला मतदाता प्रतिशत में वृद्धि सशक्तिकरण का संकेत देती है, किंतु मूल प्रश्न यह है कि क्या यह सहभागिता उस राजनीतिक परिवेश में वास्तविक राजनीतिक एजेंसी में परिवर्तित होती है, जो ऐतिहासिक रूप से जातिगत पदानुक्रमों, धार्मिक लामबंदी तथा प्रतिस्पर्धी दलगत रणनीतियों द्वारा संरचित रहा है।

2.1 लैंगिक आरक्षण और सशक्तिकरण

भारत में लैंगिक आरक्षण पर विमर्श वर्णनात्मक (Descriptive) और वास्तविक (Substantive) प्रतिनिधित्व के बीच अंतर पर केंद्रित है। वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व का आशय निर्वाचित निकायों में महिलाओं की संख्यात्मक उपस्थिति से है, जबकि वास्तविक प्रतिनिधित्व राजनीतिक निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं में महिलाओं के हितों की प्रभावी अभिव्यक्ति से संबंधित है (Jayal, 2006)। 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों के साथ-साथ पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) में महिलाओं के लिए बिहार द्वारा 50% आरक्षण प्रदान किए जाने से जमीनी स्तर पर महिलाओं के वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। तथापि, यह संख्यात्मक समावेशन क्या वास्तविक सशक्तिकरण में परिवर्तित हुआ है, इस पर मतभेद विद्यमान हैं (Jensenius, 2017)।

विद्वानों का तर्क है कि लैंगिक आरक्षण ने राजनीति में महिलाओं की उपस्थिति को सामान्यीकृत किया है, जिससे वे प्रतीकात्मक अवरोध टूटे हैं जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से महिलाओं को घरेलू क्षेत्र तक सीमित रखा था (Jayal, 2006)। जहाँ कहीं प्रतिनिधित्व प्रॉक्सी के रूप में भी विद्यमान है, वहाँ भी आरक्षण ने राजनीतिक महत्वाकांक्षा को जन्म दिया है और निरंतर सहभागिता को प्रोत्साहित किया है। Jensenius (2017) यह भी दर्शाते हैं कि आरक्षण स्थानीय शक्ति-संरचनाओं का पुनर्गठन करता है, क्योंकि यह हाशिए पर स्थित समूहों को राजनीतिक अभिजात वर्ग में सम्मिलित करता है। बिहार के संदर्भ में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी ने ऐसी पीढ़ी का निर्माण किया है जो शासन प्रक्रियाओं, कल्याणकारी योजनाओं तथा प्रशासनिक संस्थाओं से परिचित है।

नवादा और नालंदा जैसे जिलों में किए गए क्षेत्राधारित अनुसंधान तीन परस्पर संबद्ध सशक्तिकरण आयामों को रेखांकित करते हैं: राजनीतिक अभिरुचि, सामाजिक संलग्नता तथा दैनिक जीवन में एजेंसी (DS12698, 2021)। राजनीतिक अभिरुचि महिलाओं की पुनः चुनाव लड़ने की इच्छा तथा अपनी राजनीतिक भूमिका का विस्तार करने की प्रवृत्ति में परिलक्षित होती है, जो अनिच्छुक सहभागिता से सक्रिय संलग्नता की ओर परिवर्तन को दर्शाती है। राजनीतिक पद ने महिलाओं की गतिशीलता, संप्रेषण कौशल तथा नौकरशाही संस्थाओं के साथ संवाद को सुदृढ़ किया है, जिससे वे पारिवारिक और जातिगत संरचनाओं से परे नेटवर्क निर्मित कर सकी हैं। इस प्रकार का अनुभव आत्म-धारणा को निष्क्रिय लाभार्थी से स्वायत्त राजनीतिक कर्ता में परिवर्तित करता है।

एक महत्वपूर्ण किंतु अपेक्षाकृत अल्प-अध्ययनित आयाम शारीरिक एजेंसी है–अर्थात् गतिशीलता और सार्वजनिक उपस्थिति पर नियंत्रण। शासन प्रक्रियाओं में भागीदारी हेतु महिलाओं को बैठकों में सम्मिलित होना, प्रशासनिक कार्यालयों तक यात्रा करना तथा सार्वजनिक विमर्श में भाग लेना आवश्यक होता है, जिससे दैनिक पितृसत्तात्मक प्रतिबंधों को चुनौती मिलती है। यह परिवर्तन आत्मविश्वास तथा स्वतंत्र राजनीतिक निर्णय-क्षमता को प्रोत्साहित करता है (DS12698, 2021)।

तथापि, "मुखिया पति" की परिघटना जिसमें निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर उनके पुरुष रिश्तेदार अनौपचारिक अधिकार का प्रयोग करते हैं ग्रामीण बिहार में पितृसत्ता की बहुस्तरीय प्रकृति को उजागर करती है। यद्यपि वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय विस्तार हुआ है, परंतु राजनीतिक संसाधनों और दलगत संरचनाओं पर वास्तविक नियंत्रण अभी भी असमान है। अतः सशक्तिकरण को एक क्रमिक और विवादास्पद प्रक्रिया के रूप में अवधारित किया जाना चाहिए, जो एक ओर संस्थागत सुधारों और दूसरी ओर स्थायी सामाजिक पदानुक्रमों द्वारा आकार ग्रहण करती है।

2.2 बिहार में मतदान व्यवहार के निर्धारक

यद्यपि लैंगिक आरक्षण ने महिलाओं की राजनीतिक उपस्थिति का विस्तार किया है, तथापि बिहार में मतदान व्यवहार अब भी जातिगत समीकरणों, धार्मिक लामबंदी तथा दलगत रणनीतियों जैसे संरचनात्मक निर्धारकों द्वारा प्रभावित

होता है। अतः महिलाओं की निर्वाचनात्मक भागीदारी का कोई भी विश्लेषण इस व्यापक राजनीतिक संदर्भ के भीतर ही किया जाना चाहिए।

बिहार में जाति राजनीतिक लामबंदी की प्रमुख धुरी बनी हुई है। निर्वाचन परिणाम प्रायः शुद्ध वैचारिक संरेखण के बजाय जातिगत गठबंधनों को प्रतिबिंबित करते हैं। हाल के विधानसभा चुनावों पर किए गए अनुसंधान दर्शाते हैं कि जातीय पहचान अब भी प्रत्याशी चयन, दलगत रणनीतियों तथा मतदाता निष्ठा को प्रभावित करती है (GeoJournal, 2023)। मंडल युग के पश्चात पिछड़ी जातियों की राजनीति का सुदृढ़ीकरण तथा प्रभावशाली जाति-नेताओं के बीच रणनीतिक गठबंधन, जाति-आधारित लामबंदी की निरंतरता को रेखांकित करते हैं। यद्यपि विकास-आधारित विमर्श ने प्रमुखता प्राप्त की है, फिर भी स्थानीय निर्वाचन गणनाओं में जातिगत नेटवर्क गहराई से अंतर्निहित बने हुए हैं।

धर्म भी एक लामबंदीकारी उपकरण के रूप में कार्य करता है, विशेषकर चुनावी वक्तव्यों में पहचान और सामूहिकता के आह्वान के माध्यम से (GeoJournal, 2023)। यद्यपि बिहार अन्य कुछ राज्यों की तुलना में धार्मिक आधार पर अपेक्षाकृत कम ध्रुवीकृत है, फिर भी धार्मिक आख्यान निर्वाचन अपीलों और मतदाता संरेखणों को प्रभावित करते रहते हैं।

पहचान-आधारित कारकों से परे, सैद्धान्तिक प्रतिमान मतदाता सहभागिता के अतिरिक्त स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हैं। तर्कसंगत मतदाता प्रतिमान (Rational Voter Model) यह प्रतिपादित करता है कि व्यक्ति तब मतदान की अधिक संभावना रखते हैं जब भागीदारी के प्रत्यक्ष या परोक्ष लाभ, उससे जुड़ी लागतों से अधिक प्रतीत होते हैं (Stockemer, 2017)। बिहार में महिलाओं को लक्षित कल्याणकारी योजनाएँ जैसे आवास अनुदान, रसोई गैस कनेक्शन तथा वित्तीय समावेशन कार्यक्रम इस लागत-लाभ गणना को परिवर्तित कर सकती हैं, क्योंकि वे निर्वाचन सहभागिता को प्रत्यक्ष लाभों से जोड़ती हैं।

निर्वाचनात्मक लामबंदी प्रतिमान (Electoral Mobilisation Model) राजनीतिक दलों की सक्रिय भूमिका पर बल देता है, जो संगठनात्मक पहुँच और संचार नेटवर्क के माध्यम से मतदाताओं को संलग्न करते हैं (Nooruddin & Simmons, 2015)। दलगत संरचनाओं का पेशेवरकरण, जमीनी स्तर पर लामबंदी तथा कल्याण-आधारित संदेश विशेषकर ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्रों में 2010 से 2020 के बीच मतदान प्रतिशत में निरंतर वृद्धि में योगदानकारी रहे हैं (GeoJournal, 2023)।

प्रायोगिक साक्ष्य यह भी इंगित करते हैं कि बिहार के विधानसभा चुनावों में लैंगिक अनुपात और मतदान प्रतिशत के बीच सकारात्मक सहसंबंध विद्यमान है, जो यह दर्शाता है कि जनसांख्यिकीय संरचना और राजनीतिक लामबंदी परस्पर अंतःक्रिया कर भागीदारी के स्तरों को आकार देते हैं (GeoJournal, 2023)। अतः महिलाओं को एक समरूप मतदाता समूह के रूप में नहीं, बल्कि जाति, धर्म तथा सामाजिक-जनसांख्यिकीय संदर्भों की अंतर्संबद्ध संरचनाओं में स्थित राजनीतिक कर्ताओं के रूप में समझा जाना चाहिए।

3. बिहार में महिला सशक्तिकरण और निर्वाचनात्मक लामबंदी

बिहार में महिलाओं की निर्वाचनात्मक भागीदारी में आए परिवर्तन को केवल मतदान प्रतिशत में संख्यात्मक वृद्धि के रूप में नहीं समझा जा सकता। यह परिवर्तन वस्तुतः कल्याणकारी नीतियों, जमीनी शासन-व्यवस्था तथा राजनीतिक लामबंदी के मध्य संबंधों के व्यापक पुनर्गठन को प्रतिबिंबित करता है। 2010 से 2020 के बीच राज्य एवं केंद्र सरकार की कल्याणकारी पहलों, तथा विस्तारित लैंगिक आरक्षण जैसी संस्थागत सुधार प्रक्रियाओं ने महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को पुनर्संरचित किया और निर्वाचन सहभागिता हेतु प्रोत्साहनों को परिवर्तित किया। यह खंड विश्लेषण करता है कि किस प्रकार कल्याणकारी राजनीति, जमीनी नेटवर्क और संरचनात्मक सीमाएँ परस्पर अंतःक्रिया करते हुए बिहार में महिलाओं के मतदान व्यवहार को आकार देती हैं।

3.1 कल्याणकारी राजनीति और महिला लामबंदी

बिहार में महिलाओं की निर्वाचनात्मक एजेंसी का विस्तार 2005 के पश्चात प्रारंभ की गई कल्याण-केंद्रित शासन रणनीतियों से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। जीविका कार्यक्रम, पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) में महिलाओं के लिए 50% आरक्षण का विस्तार, तथा छात्राओं के लिए साइकिल योजना जैसी राज्य स्तरीय पहलों ने महिलाओं की राज्य संसाधनों और सार्वजनिक संस्थानों तक पहुँच को पुनर्परिभाषित किया (GeoJournal, 2023)।

जीविका कार्यक्रम के अंतर्गत महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों (Self-Help Groups – SHGs) में संगठित किया गया, जिससे उन्हें सूक्ष्म-वित्त तक पहुँच, सामूहिक सौदेबाज़ी की क्षमता तथा प्रशासनिक संरचनाओं के साथ संवाद का अवसर प्राप्त हुआ। ये SHG समय के साथ महत्त्वपूर्ण संघटनात्मक नेटवर्कों में परिवर्तित हो गए, जो आगे चलकर राजनीतिक संचार और लामबंदी के माध्यम के रूप में भी कार्य करने लगे। इस प्रकार कल्याण वितरण केवल लाभ हस्तांतरण तक सीमित न रहकर महिलाओं के शासन प्रक्रियाओं में संस्थागत एकीकरण का माध्यम बन गया।

इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं में 50% आरक्षण के विस्तार ने महिलाओं के वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय वृद्धि की। इस सुधार ने निर्वाचित महिलाओं का एक व्यापक समूह तैयार किया, जो प्रशासनिक प्रक्रियाओं और कल्याणकारी योजनाओं से परिचित था (DS12698, 2021)। यद्यपि प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व संबंधी चिंताएँ बनी रहीं, फिर भी शासन-प्रक्रियाओं के निरंतर अनुभव ने राजनीतिक जागरूकता को सुदृढ़ किया और निर्णय-निर्माण के क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति को सामान्यीकृत किया।

शैक्षिक हस्तक्षेप, विशेषकर साइकिल योजना, ने महिला गतिशीलता और विद्यालयी निरंतरता को और अधिक सुदृढ़ किया। नागरिक जागरूकता में वृद्धि तथा शिक्षा से वंचित होने की प्रवृत्ति में कमी के माध्यम से इन पहलों ने एक अधिक जागरूक महिला मतदाता वर्ग के उद्भव में योगदान दिया (GeoJournal, 2023)।

केंद्रीय स्तर पर प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना तथा प्रधानमंत्री जन धन योजना जैसे कार्यक्रमों ने संपत्ति स्वामित्व और वित्तीय समावेशन के माध्यम से महिलाओं की आर्थिक हिस्सेदारी को सुदृढ़ किया (GeoJournal, 2023)। जब कल्याणकारी अधिकार शासन-प्रदर्शन से जुड़ते हैं, तब मतदान भौतिक लाभों की सुरक्षा के एक साधन के रूप में उभरता है।

2020 में महिला मतदान प्रतिशत का 59.7% तक पहुँचना जो पुरुषों से अधिक था इस बात का द्योतक है कि महिलाएँ अब निष्क्रिय लाभार्थी नहीं, बल्कि सक्रिय निर्वाचनात्मक हितधारक के रूप में उभर रही हैं। इस प्रकार, कल्याणकारी राजनीति ने बिहार के विकसित होते राजनीतिक परिदृश्य में महिला लामबंदी को सशक्त बनाने के उत्प्रेरक के रूप में कार्य किया है।

3.2 जमीनी नेटवर्क और सामाजिक संलग्नता

कल्याणकारी अधिकारों से परे, जमीनी संस्थागत नेटवर्कों ने बिहार में महिलाओं को निर्वाचन राजनीति से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। राज्य का विस्तृत आशा (Accredited Social Health Activists – ASHA) और आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का नेटवर्क केवल सार्वजनिक स्वास्थ्य और बाल देखभाल अवसंरचना के रूप में ही कार्य नहीं करता, बल्कि राज्य और ग्रामीण परिवारों के मध्य संचार सेतु के रूप में भी कार्य करता है (GeoJournal, 2023)। ये मुख्यतः महिला-प्रधान नेटवर्क सरकारी कार्यक्रमों के साथ नियमित संपर्क को प्रोत्साहित करते हैं, जिससे नीतिगत पहलों और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के प्रति जागरूकता में वृद्धि होती है।

ऐसे जमीनी संयोजक कल्याण वितरण और निर्वाचन लामबंदी के संगम पर कार्य करते हैं। राजनीतिक दल प्रायः स्वयं सहायता समूहों और स्थानीय स्वास्थ्य नेटवर्कों का उपयोग योजनाओं तथा चुनावी संदेशों के प्रसार हेतु करते हैं। यद्यपि औपचारिक संदेश-प्रेषण दल-प्रेरित होता है, किंतु विश्वसनीय सामुदायिक नेटवर्कों के माध्यम से संचार उसकी विश्वसनीयता और पहुँच को सुदृढ़ करता है। ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्रों में, जहाँ सघन सामाजिक संबंध और आमने-सामने की अंतःक्रिया केंद्रीय भूमिका निभाते हैं, ये नेटवर्क राजनीतिक धारणा-निर्माण में महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं।

नवादा और नालंदा जैसे जिलों में किए गए क्षेत्राधारित अध्ययनों से संकेत मिलता है कि महिलाओं का सार्वजनिक पदों में प्रवेश उनकी गतिशीलता और सामाजिक संलग्नता का विस्तार करता है (DS12698, 2021)। राजनीतिक सहभागिता संप्रेषण कौशल को सुदृढ़ करती है, प्रशासनिक अधिकारियों के साथ संवाद को बढ़ाती है तथा शासन-प्रक्रियाओं से परिचय को सुदृढ़ करती है। यह अनुभव क्रमशः पुरुष मध्यस्थों पर निर्भरता को कम करता है और आत्मविश्वास को बढ़ावा देता है। जो महिलाएँ पूर्व में घरेलू भूमिकाओं तक सीमित थीं, वे अब नौकरशाही संरचनाओं में स्वतंत्र रूप से संचरण करने लगीं, जिससे पारिवारिक शक्ति-संतुलन में भी परिवर्तन परिलक्षित हुआ।

विस्तृत सामाजिक नेटवर्कों का निर्माण व्यवहारगत दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन लाता है। सह-प्रतिनिधियों और अधिकारियों के साथ नियमित अंतःक्रिया सूचना विनिमय और सामूहिक समस्या-समाधान को सुलभ बनाती है। यह संलग्नता आत्म-धारणा को निष्क्रिय लाभार्थी से सक्रिय निर्णय-निर्माता में रूपांतरित करती है और गतिशीलता पर आधारित पितृसत्तात्मक प्रतिबंधों को चुनौती देती है (DS12698, 2021)।

इन परिवर्तनों के स्पष्ट निर्वाचनात्मक निहितार्थ हैं। जो महिलाएँ राज्य संस्थाओं के साथ निरंतर संपर्क में रहती हैं, वे शासन-प्रदर्शन का स्वतंत्र मूल्यांकन करने की अधिक संभावना रखती हैं। नीतिगत जागरूकता और संप्रेषण क्षमता में वृद्धि पारंपरिक जातिगत या पारिवारिक निर्देशों से परे जाकर सूचित मतदान निर्णयों को संभव बनाती है। इस प्रकार, जमीनी नेटवर्क, कल्याणकारी पहुँच और राजनीतिक अनुभव के साथ मिलकर महिलाओं में अधिक निर्वाचनात्मक एजेंसी के विकास हेतु अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित करते हैं।

3.3 संरचनात्मक सीमाएँ

इन प्रगतियों के बावजूद, बिहार में महिला सशक्तिकरण अभी भी असमान और विवादास्पद बना हुआ है। मतदान प्रतिशत में वृद्धि और जमीनी स्तर पर सक्रिय भागीदारी स्वतः ही दलगत पदानुक्रमों तथा विधायी संस्थाओं में वास्तविक नियंत्रण में परिवर्तित नहीं होती। अनुसंधान संकेत करता है कि उच्च-स्तरीय दलगत निर्णय-निर्माण में महिलाओं का प्रभाव अभी भी सीमित है (GeoJournal, 2023)। प्रमुख राजनीतिक दलों में नेतृत्व पद प्रायः पुरुष अभिजात वर्ग के नियंत्रण में बने हुए हैं, जो गहराई से स्थापित पितृसत्तात्मक मानदंडों को प्रतिबिंबित करते हैं।

प्रॉक्सी राजनीति की परिघटना, जिसे सामान्यतः "मुखिया पति" प्रणाली कहा जाता है, ग्रामीण शासन में पितृसत्ता की बहुस्तरीय प्रकृति को उजागर करती है। अनेक मामलों में निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर उनके पुरुष रिश्तेदार अनौपचारिक रूप से निर्णय-निर्माण की सत्ता का प्रयोग करते हैं। यद्यपि यह प्रवृत्ति विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में भिन्न रूपों में दिखाई देती है, फिर भी यह राजनीतिक प्रक्रियाओं में लैंगिक मध्यस्थता की निरंतरता को रेखांकित करती है (DS12698, 2021)। आरक्षण महिलाओं की औपचारिक उपस्थिति सुनिश्चित करता है, किंतु अनौपचारिक शक्ति-संरचनाएँ अभी भी उनकी वास्तविक एजेंसी को सीमित कर सकती हैं।

इसके अतिरिक्त, जातिगत पदानुक्रम निर्वाचन संरेखणों को निरंतर प्रभावित करता है। यद्यपि कल्याण-आधारित आख्यानों ने प्रमुखता प्राप्त की है, फिर भी जाति-आधारित लामबंदी बिहार की राजनीतिक संस्कृति में गहराई से अंतर्निहित बनी हुई है (GeoJournal, 2023)। महिला मतदाता भी, अपने पुरुष समकक्षों की भाँति, जाति-आधारित सामाजिक नेटवर्कों के भीतर कार्य करती हैं, जो उनकी राजनीतिक प्राथमिकताओं को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार, जाति और लिंग का अंतर्संबंध स्वायत्त निर्वाचनात्मक एजेंसी की अवधारणा को जटिल बनाता है।

ये सीमाएँ संकेत करती हैं कि सशक्तिकरण को रैखिक परिणाम के रूप में नहीं, बल्कि एक क्रमिक और वार्तालापीय प्रक्रिया के रूप में समझा जाना चाहिए। कल्याणकारी अधिकारों और जमीनी भागीदारी ने महिलाओं की दृश्यता और आत्मविश्वास में वृद्धि की है, किंतु घरेलू और दलगत संरचनाओं में निहित संरचनात्मक पदानुक्रम अभी भी विद्यमान हैं। मतदान प्रतिशत में वृद्धि और पितृसत्तात्मक संरचनाओं की निरंतरता का सह-अस्तित्व एक संक्रमणशील राजनीतिक क्षण को प्रतिबिंबित करता है।

4. परिवर्तित मतदान व्यवहार: साक्ष्य और विश्लेषण

पूर्ववर्ती खंडों में यह प्रतिपादित किया गया कि कल्याणकारी विस्तार, लैंगिक आरक्षण तथा जमीनी लामबंदी ने बिहार में महिलाओं की राजनीतिक उपस्थिति को पुनर्संरचित किया है। यह खंड अनुभवजन्य रूप से परीक्षण करता है कि क्या ये संरचनात्मक परिवर्तन 2010 से 2020 के बीच मतदान व्यवहार में मापनीय परिवर्तनों के रूप में परिलक्षित होते हैं। मतदान प्रवृत्तियों, क्षेत्रीय विविधताओं तथा विकसित होते निर्वाचन आख्यानों के विश्लेषण के माध्यम से यह प्रतिपादित किया गया है कि महिलाओं की सहभागिता केवल मात्रात्मक रूप से नहीं बढ़ी है, बल्कि गुणात्मक रूप से भी परिवर्तित हुई है।

4.1 मतदान प्रवृत्तियाँ (2010–2020)

बिहार में निर्वाचन परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण संकेतक विशेषकर महिलाओं के बीच मतदान प्रतिशत में निरंतर वृद्धि है। 2020 के बिहार विधानसभा चुनाव में महिला मतदान प्रतिशत 59.7% दर्ज किया गया, जो पुरुषों के 54.6% से अधिक था (GeoJournal, 2023)। ऐतिहासिक प्रवृत्तियों के इस उलटफेर ने राजनीतिक सहभागिता की लैंगिक संरचना में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन को चिह्नित किया है। जहाँ पूर्ववर्ती दशकों में महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत कम थी, वहीं लैंगिक अंतर का क्रमिक संकुचन और अंततः उसका उलट जाना एक अस्थायी उतार-चढ़ाव के बजाय संरचनात्मक परिवर्तन का संकेत देता है।

निर्वाचन क्षेत्र-स्तरीय विश्लेषण लैंगिक अनुपात (Sex Ratio) और मतदान प्रतिशत के बीच सकारात्मक सहसंबंध को प्रकट करता है। पियर्सन सहसंबंध गुणांक 2010 में 0.540 तथा 2020 में 0.526 दर्ज किया गया (GeoJournal, 2023)। यह स्थायी संबंध संकेत करता है कि जनसांख्यिकीय लैंगिक संतुलन और लामबंदी प्रक्रियाएँ परस्पर अंतःक्रिया करते हुए सहभागिता के स्तरों को आकार देती हैं। जिन निर्वाचन क्षेत्रों में लैंगिक अनुपात अधिक है, वहाँ मतदान प्रतिशत भी अपेक्षाकृत अधिक पाया गया, जिससे समग्र निर्वाचन गतिशीलता में महिलाओं की बढ़ती भूमिका पुष्ट होती है।

लगातार चुनावों में महिला मतदान प्रतिशत में वृद्धि यह दर्शाती है कि महिलाएँ राजनीतिक प्रक्रिया में अधिक गहराई से एकीकृत हो रही हैं। यह प्रवृत्ति कल्याण-आधारित पहुँच, उन्नत संचार नेटवर्क तथा सुदृढ़ दलगत लामबंदी रणनीतियों

के संयुक्त प्रभाव को प्रतिबिंबित करती है। महिलाएँ अब केवल पारिवारिक या जातिगत नेटवर्कों के विस्तार के रूप में मतदान नहीं कर रही हैं, बल्कि स्वायत्त निर्वाचनात्मक कर्ताओं के रूप में उभर रही हैं।

महिला मतदान प्रतिशत का पुरुषों से अधिक होना प्रतीकात्मक तथा वास्तविक दोनों प्रकार के निहितार्थ रखता है। यह राजनीतिक निर्भरता संबंधी दीर्घकालिक धारणाओं को चुनौती देता है और महिलाओं को प्रतिस्पर्धी गठबंधन राजनीति में एक निर्णायक निर्वाचन-समूह के रूप में स्थापित करता है। निकट प्रतिस्पर्धी चुनावों में मतदान प्रतिशत में मामूली परिवर्तन भी सीट वितरण को प्रभावित कर सकता है। अतः महिला मतदाताओं की बढ़ती संख्यात्मक शक्ति बिहार में दलगत रणनीतियों को पुनर्संरचित कर रही है और निर्वाचन प्रतिस्पर्धा की संरचना को पुनःपरिभाषित कर रही है।

चित्र 1: बिहार विधानसभा चुनावों (2010–2020) में महिला एवं पुरुष मतदाता प्रतिशत की तुलना

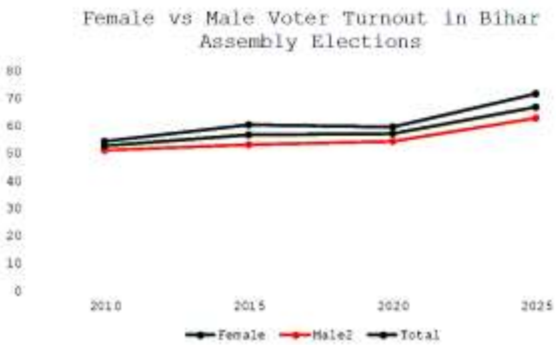

स्रोत: आँकड़े भारत निर्वाचन आयोग (*Election Commission of India)* की रिपोर्टों से संकलित।

चित्र 1 पुरुष एवं महिला मतदान प्रतिशत में क्रमिक अभिसरण (convergence) को दर्शाता है, जो 2020 में जाकर प्रतिच्छेदन (crossover) में परिणत होता है। यह परिवर्तन केवल मतदान केंद्रों तक बेहतर पहुँच का संकेत नहीं है, बल्कि महिलाओं के बीच बढ़ती राजनीतिक प्रेरणा को भी प्रतिबिंबित करता है। महिला सहभागिता की उर्ध्वगामी प्रवृत्ति इंगित करती है कि सशक्तिकरण पहलों, कल्याणकारी योजनाओं से जुड़ी संरचनाओं तथा जमीनी लामबंदी नेटवर्कों ने सामूहिक रूप से मतदान से संबंधित संरचनात्मक एवं सामाजिक अवरोधों को कम किया है।

महिला मतदाताओं की इस बढ़ती प्रासंगिकता ने दलगत रणनीतियों को भी पुनर्संरचित किया है। चुनावी वक्तव्यों में अब कल्याणकारी वितरण, घरेलू अवसंरचना तथा महिला लाभार्थियों को लक्षित सामाजिक सुरक्षा योजनाओं पर अधिक बल दिया जा रहा है। इस प्रकार निर्वाचन गणनाएँ महिलाओं को परिधीय सहभागियों के रूप में देखने से आगे बढ़कर उन्हें प्रतिस्पर्धी राजनीतिक परिदृश्य में एक केंद्रीय और निर्णायक निर्वाचन-समूह के रूप में मान्यता देने लगी हैं।

4.2 ग्रामीण-शहरी विभाजन

यद्यपि समग्र मतदान आँकड़े सहभागिता में वृद्धि को दर्शाते हैं, किंतु ग्रामीण और शहरी निर्वाचन क्षेत्रों के मध्य स्थानिक विविधता महत्वपूर्ण अंतर प्रकट करती है। अनुभवजन्य साक्ष्य संकेत करते हैं कि बिहार में ग्रामीण मतदान प्रतिशत निरंतर शहरी मतदान प्रतिशत से अधिक रहा है (GeoJournal, 2023)। 2010 से 2020 के बीच पूर्वी, उत्तर-पूर्वी, भोजपुर क्षेत्र तथा दक्षिणी क्षेत्रों सहित कई ग्रामीण अंचलों में सहभागिता में सांख्यिकीय रूप से उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई, जबकि शहरी निर्वाचन क्षेत्रों में ठहराव या सापेक्ष गिरावट देखी गई।

इस विभाजन का प्रमुख कारण सामाजिक संरचना और लामबंदी नेटवर्कों में अंतर है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वयं सहायता समूहों, आशा कार्यकर्ताओं, आंगनवाड़ी केंद्रों तथा पंचायती राज संस्थाओं जैसी सघन कल्याण-आधारित संरचनाएँ विद्यमान हैं, जो सूचना प्रसार और सामुदायिक संलग्नता को सुदृढ़ करती हैं। ये नेटवर्क स्थानीय शासन-प्रदर्शन और दैनिक कल्याण परिणामों के मध्य संबंध को अधिक प्रत्यक्ष बनाते हैं, जिससे निर्वाचन सहभागिता हेतु प्रोत्साहन सुदृढ़ होता है। इसके विपरीत, शहरी निर्वाचन क्षेत्रों में सामुदायिक एकजुटता अपेक्षाकृत कमजोर, गतिशीलता अधिक तथा सामाजिक अनामिकता (anonymity) अधिक पाई जाती है। तुलनात्मक विश्लेषण दर्शाते हैं कि बड़े मतदाता-समूह और उच्च शहरीकरण स्तर

अपेक्षाकृत कम मतदान प्रतिशत से संबद्ध होते हैं (Stockemer, 2017), तथा शहरी मतदाता निर्वाचन सहभागिता से कम प्रत्यक्ष लाभ अनुभव कर सकते हैं।

महिलाओं के संदर्भ में ग्रामीण लाभ विशेष रूप से स्पष्ट है। जीविका जैसी योजनाएँ तथा पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण ग्रामीण शासन संरचनाओं में गहराई से अंतर्निहित हैं, जो संरचित सहभागिता के माध्यम से राजनीतिक जागरूकता और लामबंदी क्षमता को सुदृढ़ करती हैं। यद्यपि निर्वाचन क्षेत्र के स्तर पर जातिगत संरचना, साक्षरता दर और दलगत प्रतिस्पर्धा जैसे कारकों के कारण मतदान प्रवृत्तियों में विविधता पाई जाती है, फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों में निरंतर उच्च सहभागिता यह रेखांकित करती है कि बिहार में महिला मतदान प्रतिशत की वृद्धि को समझने के लिए जमीनी लामबंदी की केंद्रीय भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

4.3 विकास बनाम पहचान-आधारित मतदान

मतदान प्रवृत्तियों के अतिरिक्त, बिहार में मतदान व्यवहार की गुणात्मक प्रकृति में भी परिवर्तन परिलक्षित होता है। ऐतिहासिक रूप से जाति-आधारित संरेखण और पहचान-आधारित लामबंदी से प्रभावित निर्वाचन राजनीति अब क्रमशः विकास और शासन-प्रदर्शन जैसे मुद्दों से भी संचालित होने लगी है (GeoJournal, 2023)। 2005 से 2020 के मध्य सीट-हिस्सेदारी और मत-स्विंग के विश्लेषण प्रतिस्पर्धी गठबंधन राजनीति को रेखांकित करते हैं, जो तर्कसंगत मतदाता प्रतिमान (Rational Voter Model) की पुष्टि करते हैं–अर्थात् नीति-प्रदाय और प्रशासनिक प्रभावशीलता निर्वाचन विकल्पों को आकार देते हैं (Stockemer, 2017)।

महिला मतदाताओं के संदर्भ में विकास-आधारित राजनीति का विशेष महत्व है। आवास, ऊर्जा उपलब्धता तथा वित्तीय समावेशन जैसी कल्याणकारी योजनाएँ प्रत्यक्ष रूप से घरेलू कल्याण को प्रभावित करती हैं, जिससे जातिगत संबद्धता पर एकमात्र निर्भरता के बजाय शासन-प्रदर्शन के आधार पर मूल्यांकन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। यद्यपि पहचान-आधारित राजनीति अब भी प्रभावशाली है और धार्मिक आख्यानों की उपस्थिति बनी हुई है, फिर भी कल्याण-उन्मुख अपीलों ने प्रमुखता प्राप्त की है।

महिलाओं के मतदान निर्णय अब बहुस्तरीय विचारों को प्रतिबिंबित करते हैं, जिनमें जातिगत पहचान शासन-परिणामों के अनुभवजन्य मूल्यांकन तथा लक्षित दलगत लामबंदी रणनीतियों के साथ अंतर्संबद्ध होती है (Nooruddin & Simmons, 2015)। इस प्रकार बिहार में मतदान व्यवहार की संरचना में पहचान और विकास के मध्य एक जटिल अंतःक्रिया उभरती दिखाई देती है, जिसमें महिलाएँ सक्रिय और विवेकपूर्ण निर्वाचनात्मक कर्ता के रूप में अपनी भूमिका स्थापित कर रही हैं।

5. विमर्श और निष्कर्ष

पूर्ववर्ती विश्लेषण में 2010 से 2020 के बीच बिहार में लैंगिक आरक्षण, कल्याणकारी राजनीति, जमीनी लामबंदी तथा मतदान व्यवहार के संरचनात्मक निर्धारकों के अंतर्संबंधों का परीक्षण किया गया। अनुभवजन्य साक्ष्य विशेषकर महिला मतदान प्रतिशत में वृद्धि, लैंगिक अनुपात और सहभागिता के मध्य सकारात्मक सहसंबंध, तथा चुनावी अभियानों में कल्याण-आधारित आख्यानों की बढ़ती प्रमुखता यह संकेत करते हैं कि बिहार में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी ने गुणात्मक रूप से परिवर्तन अनुभव किया है। तथापि, यह परिवर्तन बहुस्तरीय और आंशिक है। इस खंड में प्रमुख निष्कर्षों का संश्लेषण, निर्वाचन परिवर्तन का एक संकल्पनात्मक मॉडल, नीतिगत निहितार्थ तथा लोकतांत्रिक गहनता (democratic deepening) संबंधी व्यापक विमर्श में इस अध्ययन की स्थिति प्रस्तुत की गई है।

5.1 प्रमुख निष्कर्ष

1. महिला मतदान प्रतिशत ने बिहार की राजनीति को संरचनात्मक रूप से परिवर्तित किया है।

इस अध्ययन का एक केंद्रीय निष्कर्ष यह है कि महिला मतदान प्रतिशत ने हाशिए की स्थिति से उभरकर निर्वाचन परिणामों को आकार देने वाली केंद्रीय शक्ति का रूप ग्रहण किया है। 2020 के विधानसभा चुनाव में महिला मतदान प्रतिशत 59.7% रहा, जो पुरुषों के 54.6% से अधिक था (GeoJournal, 2023)। यह प्रतिस्पर्धी राजनीति में महिलाओं के संरचनात्मक समावेशन का संकेत देता है। लैंगिक अनुपात और मतदान प्रतिशत के मध्य सकारात्मक सहसंबंध ($r = 0.540$, 2010; $r = 0.526$, 2020) इस संबंध की पुष्टि करता है। महिलाएँ अब एक निर्णायक मतदाता समूह के रूप में उभरी हैं, जिसके परिणामस्वरूप राजनीतिक दलों ने अपने चुनावी अभियानों को कल्याणकारी वितरण और घरेलू-केन्द्रित शासन पर पुनर्संरचित किया है।

2. महिलाओं के निर्वाचन व्यवहार में कल्याणकारी राजनीति की केंद्रीय भूमिका है।

दूसरा महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह दर्शाता है कि कल्याणकारी अधिकार महिलाओं की राजनीतिक संलग्नता को आकार देने में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। जीविका कार्यक्रम और पंचायती राज संस्थाओं में विस्तारित आरक्षण जैसी राज्य स्तरीय पहलों के साथ-साथ उज्ज्वला, प्रधानमंत्री आवास योजना, जन धन तथा सुकन्या समृद्धि जैसी केंद्रीय योजनाओं ने महिलाओं के भौतिक कल्याण को शासन-प्रदर्शन से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ा है (GeoJournal, 2023; DS12698, 2021)। महिलाओं के नाम पर प्रदत्त लाभ उनकी आर्थिक हिस्सेदारी को सुदृढ़ करते हैं और राजनीतिक सहभागिता के प्रोत्साहनों को बढ़ाते हैं, जो तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत (Stockemer, 2017) के अनुरूप है। इस प्रकार मतदान नीति-प्रदाय के मूल्यांकन और प्रतिफलन का माध्यम बन जाता है, जहाँ पारंपरिक पहचान-आधारित संबद्धताओं के साथ प्रदर्शन-आधारित विचार भी जुड़ते हैं।

3. लैंगिक आरक्षण आंशिक रूप से वास्तविक एजेंसी में परिवर्तित हुआ है।

तीसरा निष्कर्ष वर्णनात्मक और वास्तविक प्रतिनिधित्व के मध्य संबंध की समीक्षा करता है। पंचायती राज संस्थाओं में 50% आरक्षण ने महिलाओं के वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व का उल्लेखनीय विस्तार किया है। क्षेत्राधारित साक्ष्य इंगित करते हैं कि अनेक निर्वाचित महिलाएँ राजनीतिक अभिरुचि विकसित करती हैं, पुनः चुनाव लड़ने की आकांक्षा रखती हैं और व्यापक सामाजिक नेटवर्क निर्मित करती हैं (DS12698, 2021)। शासन-प्रक्रियाओं में भागीदारी गतिशीलता, संप्रेषण कौशल तथा प्रशासनिक जागरूकता को सुदृढ़ करती है, जिससे शारीरिक एजेंसी (corporeal agency) और अधिक आत्मविश्वासपूर्ण राजनीतिक सहभागिता विकसित होती है। तथापि, वास्तविक प्रतिनिधित्व अब भी सीमित है। उच्च-स्तरीय दलगत पदानुक्रमों और विधायी निर्णय-निर्माण में महिलाओं का प्रभाव संरचनात्मक अवरोधों से बाधित रहता है (GeoJournal, 2023)। इससे स्पष्ट होता है कि संस्थागत पहुँच स्वतः ही गहन राजनीतिक अधिकार सुनिश्चित नहीं करती।

4. पितृसत्ता अभी भी उच्च राजनीतिक सत्ता का मध्यस्थन करती है।

मतदान प्रतिशत और जमीनी सहभागिता में वृद्धि के बावजूद पितृसत्तात्मक मध्यस्थता विद्यमान है। "मुखिया पति" परिघटना यह दर्शाती है कि औपचारिक रूप से निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के साथ-साथ अनौपचारिक पुरुष अधिकार भी सक्रिय रहता है (DS12698, 2021)। जातिगत पदानुक्रम सशक्तिकरण की प्रक्रिया को और जटिल बनाते हैं, क्योंकि महिला मतदाता उन सामाजिक नेटवर्कों में अंतर्निहित रहती हैं जो राजनीतिक संरेखणों को प्रभावित करते हैं। यद्यपि सहभागिता का विस्तार हुआ है, संरचनात्मक और सामाजिक अवरोध उच्च-स्तरीय राजनीतिक क्षेत्रों में पूर्ण स्वायत्तता को सीमित करते हैं (GeoJournal, 2023)। सहभागिता में वृद्धि और पितृसत्तात्मक मानदंडों की निरंतरता का सह-अस्तित्व यह इंगित करता है कि सशक्तिकरण एक क्रमिक और वार्तालापीय प्रक्रिया है, न कि तात्कालिक या सर्वव्यापी परिवर्तन।

5.2 संकल्पनात्मक मॉडल

इस अध्ययन के निष्कर्षों को बिहार में निर्वाचन पुनर्संरेखण (electoral realignment) की व्याख्या करने वाले एक संकल्पनात्मक ढाँचे में समेकित किया जा सकता है:

लैंगिक आरक्षण + कल्याणकारी योजनाएँ

↓

गतिशीलता एवं आर्थिक स्वामित्व में वृद्धि

↓

राजनीतिक जागरूकता

↓

स्वतंत्र मतदान व्यवहार

↓

बिहार में निर्वाचन पुनर्संरेखण

लैंगिक आरक्षण वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व का विस्तार करता है और सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को सामान्यीकृत करता है। कल्याणकारी योजनाएँ आर्थिक हिस्सेदारी को सुदृढ़ करती हैं तथा शासन-प्रदर्शन को दैनिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ती हैं। इन दोनों तंत्रों के संयुक्त प्रभाव से महिलाओं की गतिशीलता, वित्तीय समावेशन तथा सामाजिक नेटवर्कों का विस्तार होता है।

गतिशीलता और आर्थिक स्वामित्व में वृद्धि राजनीतिक जागरूकता को प्रोत्साहित करती है। महिलाएँ प्रशासनिक प्रक्रियाओं, विकास योजनाओं तथा निर्वाचन प्रतिस्पर्धा से अधिक परिचित होती हैं। यह जागरूकता पितृसत्तात्मक मध्यस्थता पर निर्भरता को कम करती है और स्वतंत्र राजनीतिक निर्णय-क्षमता को सुदृढ़ करती है।

स्वतंत्र मतदान व्यवहार अंततः निर्वाचन पुनर्संरेखण में योगदान देता है, जिससे राजनीतिक दलों को विकास-आधारित आख्यानों और कल्याणकारी वितरण को प्राथमिकता देने के लिए प्रेरित होना पड़ता है। इस प्रकार महिलाओं का बढ़ता मतदान प्रतिशत न केवल सहभागिता के पैटर्न को परिवर्तित करता है, बल्कि नीतिगत एजेंडा और चुनावी रणनीतियों को भी पुनर्परिभाषित करता है।

यह मॉडल जाति और धार्मिक लामबंदी को निरस्त नहीं करता; बल्कि उन्हें एक व्यापक मूल्यांकनात्मक ढाँचे के भीतर समाहित करता है। निर्वाचन व्यवहार पहचान-आधारित संबद्धताओं और शासन-प्रदर्शन के मूल्यांकन के अंतर्संबंध से उभरता है, जहाँ महिलाएँ बहुस्तरीय कारकों के आधार पर राजनीतिक विकल्प निर्धारित करती हैं।

5.3 नीतिगत निहितार्थ

यह अध्ययन वर्णनात्मक उपलब्धियों को वास्तविक सशक्तिकरण में रूपांतरित करने हेतु निम्नलिखित नीतिगत सिफारिशें प्रस्तुत करता है:

1. निर्वाचित महिलाओं के लिए संस्थागत राजनीतिक प्रशिक्षण।

क्षमता-विकास कार्यक्रमों को केवल औपचारिक परिचयात्मक सत्रों तक सीमित न रखकर बजट-निर्माण, विधायी प्रक्रियाओं, सार्वजनिक वक्तृत्व, डिजिटल शासन तथा प्रशासनिक प्रबंधन जैसे विषयों पर निरंतर और संरचित प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। संस्थागत दक्षता का सुदृढ़ीकरण अनौपचारिक पुरुष मध्यस्थों पर निर्भरता को कम करता है और वास्तविक राजनीतिक एजेंसी को बढ़ाता है।

2. वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों का सुदृढ़ीकरण।

जन धन जैसी योजनाओं के माध्यम से वित्तीय समावेशन का विस्तार हुआ है, किंतु प्रभावी उपयोग हेतु वित्तीय साक्षरता आवश्यक है। बैंकिंग प्रक्रियाओं, बचत प्रबंधन तथा ऋण-सुविधाओं तक पहुँच संबंधी प्रशिक्षण महिलाओं की आर्थिक स्वायत्तता को गहरा कर सकता है और प्रदर्शन-आधारित मतदान प्रवृत्ति को सुदृढ़ कर सकता है।

3. दलगत संरचनाओं में महिला नेतृत्व को प्रोत्साहन।

राजनीतिक दलों को आरक्षित सीटों से परे महिलाओं की उन्नति हेतु संस्थागत मार्ग विकसित करने चाहिए। दलगत आंतरिक सुधार, पारदर्शी प्रत्याशी-चयन प्रक्रियाएँ तथा मार्गदर्शन (मेंटॉरशिप) कार्यक्रम पदानुक्रमिक बहिष्करण को कम कर सकते हैं और महिलाओं की उच्च-स्तरीय भागीदारी सुनिश्चित कर सकते हैं।

4. शहरी महिला मतदाता लामबंदी रणनीतियाँ।

ग्रामीण-शहरी मतदान अंतर की निरंतरता (GeoJournal, 2023) को देखते हुए शहरी क्षेत्रों में लक्षित पहल आवश्यक हैं। शहरी महिलाओं के पास ग्रामीण स्वयं सहायता समूहों जैसी सघन संघटनात्मक संरचनाएँ प्रायः नहीं होतीं। डिजिटल सहभागिता, कार्यस्थल-आधारित संपर्क तथा नागरिक शिक्षा अभियानों के माध्यम से इस अंतर को कम किया जा सकता है।

इन उपायों के माध्यम से वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व को वास्तविक राजनीतिक अधिकार में रूपांतरित किया जा सकता है तथा लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को गहन बनाया जा सकता है।

5.4 निष्कर्ष

इस अध्ययन में प्रस्तुत साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि बिहार की महिलाएँ अब निर्वाचन राजनीति के हाशिए पर स्थित "मूक मतदाता" नहीं रह गई हैं। 2010 से 2020 के बीच महिला मतदान प्रतिशत में न केवल वृद्धि हुई, बल्कि वह पुरुष मतदान प्रतिशत से अधिक हो गया, जो सहभागिता के स्वरूप में एक संरचनात्मक परिवर्तन को इंगित करता है (GeoJournal, 2023)। कल्याण-आधारित शासन, जमीनी लामबंदी नेटवर्क तथा लैंगिक आरक्षण ने संयुक्त रूप से इस परिवर्तन में योगदान दिया है।

महिलाओं का राजनीतिक व्यवहार अब पारंपरिक पहचान-आधारित संबद्धताओं के साथ-साथ शासन-प्रदर्शन और कल्याणकारी परिणामों के मूल्यांकन को भी प्रतिबिंबित करता है। आर्थिक हिस्सेदारी और बढ़ी हुई गतिशीलता ने राजनीतिक जागरूकता तथा स्वतंत्र निर्णय-क्षमता को सुदृढ़ किया है। साथ ही, पितृसत्तात्मक मध्यस्थता और जातिगत पदानुक्रम अब भी वास्तविक राजनीतिक शक्ति की सीमाओं को निर्धारित करते हैं।

बिहार में चल रहा यह परिवर्तन लोकतांत्रिक गहनता (democratic deepening) के एक महत्वपूर्ण चरण का प्रतिनिधित्व करता है। वर्णनात्मक प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय विस्तार हुआ है और महिलाओं की निर्वाचनात्मक एजेंसी सुदृढ़ हुई है। तथापि, इन उपलब्धियों को स्थायी वास्तविक सशक्तिकरण में रूपांतरित करने हेतु संस्थागत सुधार, दलगत संरचनाओं का पुनर्गठन तथा निरंतर नागरिक क्षमता-विकास आवश्यक है।

संक्षेप में, बिहार की महिलाएँ निष्क्रिय निर्वाचन सहभागियों से राज्य की राजनीति की दिशा को प्रभावित करने वाली संरचित राजनीतिक कर्ताओं में रूपांतरित हुई हैं। तथापि सहभागिता से सत्ता तक की यात्रा अभी भी प्रगतिशील प्रक्रिया में है। आगामी दशक की चुनौती यह सुनिश्चित करना है कि बढ़ता हुआ मतदान प्रतिशत और कल्याणकारी संलग्नता स्थायी नेतृत्व और न्यायसंगत प्रतिनिधित्व में परिवर्तित हो सके।

References

Bagchi, A. (2018). *Historical trends in women's voter participation in Bihar elections.*

Chhibber, P. (2002). Why are some women politically active? The household, public space, and political participation in India. *International Journal of Comparative Sociology, 43*(3–5), 409–429.

DS12698. (2021). *Mapping development and empowerment of elected women in Bihar.*

Election Commission of India. (2020). *Statistical report on general election to the Legislative Assembly of Bihar, 2020.* https://eci.gov.in

GeoJournal. (2023). Trends and determinants of voter turnout in Bihar state assembly elections (2010–2020). *GeoJournal, 88*, 655–689.

Government of India. (2021). *Economic survey 2020–21: Social sector and welfare programmes.* Ministry of Finance.

Jaffrelot, C. (2003). *India's silent revolution: The rise of the lower castes in North India.* Columbia University Press.

Jayal, N. G. (2006). *Gender and political participation in India.*

Jensenius, F. R. (2017). *Social justice through inclusion: The consequences of electoral quotas in India.* Oxford University Press.

Kumar, S. (2010). Electoral politics in Bihar: Caste, class and power. *Economic and Political Weekly, 45*(10), 14–17.

Ministry of Health & Family Welfare. (2019). *National Health Mission: Framework for implementation.* Government of India.

Nooruddin, I., & Simmons, J. (2015). *Electoral mobilisation and voter turnout.*

Rai, S. M. (2011). *Gender and the political economy of development: From nationalism to globalisation.* Polity Press.

Stockemer, D. (2017). What affects voter turnout? A review of aggregate-level research. *Government and Opposition, 52*(4), 698–722.

World Bank. (2016). *Implementation completion and results report: Bihar Rural Livelihoods Project (Jeevika).* World Bank.

गाँधीजी के आर्थिक दर्शन में ''नैतिकता"

डॉ. चंदा कुमारी*

सारांश

गाँधीजी विशुद्ध अर्थशास्त्री नहीं थे, परंतु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। मानव–सेवा उनका प्रमुख लक्ष्य था। गाँधीजी का आर्थिक विचार अत्यंत मौलिक और महत्वपूर्ण हैं। उनका स्पष्ट मत थाकृ "वह अर्थशास्त्र जो किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के नैतिक कल्याण को आघात पहुँचाता है, वह अनैतिक है और इस कारण पापपूर्ण है।" [1] *उनका आर्थिक दर्शन अहिंसा और सर्वोदय की अवधारणा पर आधारित है। आर्थिक शोषण, दासता, बाल मजदूरी, लैंगिक भेदभाव और अंध–उद्योगीकरण जैसी समस्याएँ गलत आर्थिक नीतियों का परिणाम हैं। गाँधीजी ने इनसे निपटने के लिए मानव–केंद्रित, नैतिक और संतुलित अर्थव्यवस्था का प्रतिपादन किया। उनका लक्ष्य ऐसी जीवन–पद्धति स्थापित करना था, जिसमें भौतिक समृद्धि के साथ नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का भी संतुलन बना रहेय सभी को सामाजिक और आर्थिक न्याय प्राप्त हो।*

भूमिका

आर्थिक विचारों के क्षेत्र में गाँधीजी श्रवीद त्लोपद से गहराई से प्रभावित थे। उन्होंने उनकी प्रसिद्ध कृति न्दजव जीपे रेंज का 'सर्वोदय' नाम से अनुवाद किया, जो आगे चलकर उनके आर्थिक चिंतन की आधारशिला बना। रस्किन के अनुसार मनुष्य ही सर्वोपरि तत्व है, और गाँधीजी ने इसी मान्यता को अपने विचारों में आत्मसात किया। गाँधीजी का स्पष्ट कथन था–

"मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र में कोई मौलिक भेद नहीं करता। जो अर्थशास्त्र किसी व्यक्ति या राष्ट्र के नैतिक कल्याण को क्षति पहुँचाता है, वह अनैतिक और पापपूर्ण है। इसी प्रकार, जो अर्थशास्त्र एक देश को दूसरे देश के शोषण की अनुमति देता है, वह भी अनैतिक है। विदेशी वस्तुओं के उपभोग के कारण यदि अपने पड़ोसी की आजीविका संकट में पड़ती है, तो वह स्थिति पीड़ादायक है। यदि मैं आकर्षक विदेशी वस्त्र पहनूँ, जबकि मेरे पड़ोसी जुलाहे बेरोजगार हों, तो यह मेरे लिए नैतिक दृष्टि से अनुचित है।"[2] गाँधीजी का उद्योगों के बारे में कहते हैं कि –

> "किसी उद्योग का वास्तविक मूल्य उसमें कार्यरत व्यक्तियों के शरीर, मन और आत्मा पर पड़ने वाले प्रभाव से आँका जाना चाहिए, न कि केवल उसके निष्क्रिय भागीदारों को मिलने वाले लाभांश से। जो वस्तु उपभोक्ताओं को कुछ सस्ता पड़ती है, किंतु श्रमिकों के जीवन स्तर को गिरा देती है, वह वास्तव में महँगी है।"[3]

स्वभाविक है कि गाँधीजी ने आधुनिक अर्थशास्त्र की उस प्रवृत्ति की भी आलोचना की, जिसमें मुनाफे को ही सर्वोच्च लक्ष्य मान लिया गया है। उनका मानना था कि इससे अर्थव्यवस्था का उद्देश्य केवल धन–संचय तक सीमित हो जाता है।

'माँग और पूर्ति के नियम' के संदर्भ में वे कहते हैं कि इसे मानव–जीवन का अंतिम मार्गदर्शक सिद्धांत नहीं माना जा सकता। उनके अनुसारकृ"माँग और पूर्ति का सिद्धांत आधुनिक अर्थशास्त्र के सबसे अमानवीय सिद्धांतों में से एक है। मानव संबंधों को केवल इसी आधार पर संचालित नहीं किया जा सकता। यदि सस्ते श्रम के नाम पर अपने पुराने कर्मचारियों को हटाया जाए, तो यह नैतिक दृष्टि से अनुचित है। जो अर्थशास्त्र नैतिक और भावनात्मक पक्षों की उपेक्षा करता है, वह निर्जीव और यांत्रिक हैय ऐसे सिद्धांत व्यवहार में टिक नहीं पाते और अंततः समाज के लिए विनाशकारी सिद्ध होते हैं।"[4] इस प्रकार, गाँधीजी का आर्थिक चिंतन में आर्थिक क्रियाकलापों का अंतिम उद्देश्य केवल लाभ नहीं, बल्कि समग्र मानव कल्याण है।

गाँधीजी की आदर्श आर्थिक संरचना में प्रत्येक व्यक्ति की मूलभूत आवश्यकताओं भोजन, कार्य और स्वतंत्रता की सुनिश्चितता पर विशेष बल दिया गया है। उनका स्पष्ट मत थाकृ "मेरे विचार से भारत तथा विश्व की आर्थिक व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि किसी को भी भोजन और वस्त्र के अभाव का कष्ट न हो। प्रत्येक व्यक्ति को इतना काम अवश्य मिले कि वह अपना भरण–पोषण कर सके। यह आदर्श तभी संभव है

---

* असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान विभाग, रामचंद्र चंद्रवंशी विश्वविद्यालय, पलामू, झारखंड

जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं से जुड़े उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में हों। इनकी उपलब्धता उतनी ही सहज होनी चाहिए जितनी वायु और जल की है। इन साधनों को शोषण का माध्यम नहीं बनने देना चाहिएय उन पर किसी राष्ट्र, समूह या व्यक्ति का एकाधिकार अन्यायपूर्ण है। इसी सिद्धांत की उपेक्षा ही व्यापक दरिद्रता का कारण है।" [5]

इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गाँधीजी राज्य की ऐसी व्यवस्था की परिकल्पना करते हैं, जो सामाजिक न्याय और आर्थिक स्वतंत्रता के सिद्धांतों पर आधारित हो। गाँधीजी के अनुसार, राज्य का राजनीतिक और आर्थिक संगठन इस प्रकार होना चाहिए कि वह समाज के प्रत्येक सदस्य की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। किंतु इसका उद्देश्य केवल भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि स्वस्थ जीवन के साथ–साथ व्यक्ति के नैतिक और बौद्धिक विकास को भी सुनिश्चित करना चाहिए। सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए उन्होंने उत्पादन के साधनों पर सामूहिक नियंत्रण की आवश्यकता स्वीकार की, जिसे सहकारी प्रयासों या सामाजिक स्वामित्व के रूप में विकसित किया जा सकता है। साथ ही, भारी परिवहन, जहाजरानी, खनन तथा बड़े उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का समर्थन करते हुए उन्होंने वस्त्र उद्योग जैसे क्षेत्रों में क्रमिक विकेंद्रीकरण की वकालत की।

गाँधीजी के आर्थिक दर्शन में उन सभी सकारात्मक तत्वों का समावेश है, जो समाज के समग्र उत्थान, स्वावलंबन और नैतिकता को सुदृढ़ करते हैं। उनके विचारों में कुछ हद तक समाजवाद या साम्यवाद से समानता दिखाई देती है, क्योंकि दोनों ही शोषणरहित समाज की कल्पना करते हैं। किंतु जहाँ साम्यवाद प्रायः हिंसात्मक क्रांति पर बल देता है, वहीं गाँधीवाद पूर्णतः अहिंसा और नैतिक परिवर्तन पर आधारित है। गाँधीजी 'सर्वोदय' अर्थात् सबके उदयकृकी अवधारणा के पक्षधर थे, जबकि साम्यवाद में सर्वहारा वर्ग के वर्चस्व की बात की जाती है। गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था कि जब तक आर्थिक विषमता समाप्त नहीं होगी, तब तक समाज में स्थायी शांति संभव नहीं है। वे अमीर और गरीब के बीच की खाई को समाप्त करना चाहते थे, परंतु इसके लिए किसी भी प्रकार की हिंसा के विरोधी थे। उन्होंने संपन्न वर्ग से अपेक्षा की कि वे स्वेच्छा से अपने धन का त्याग करें और उसे समाज के कल्याण में लगाएँ। इसी संदर्भ में उन्होंने 'न्यासिता (ज्तनेजमम्ीपच)' का सिद्धांत प्रतिपादित किया। इसके अनुसार, सम्पूर्ण धन वास्तव में समाज का है, और पूँजीपति केवल उसके संरक्षक (ट्रस्टी) हैं। जिस प्रकार एक न्यासी का कर्तव्य संपत्ति की देखभाल और उसके उचित उपयोग को सुनिश्चित करना होता है, उसी प्रकार पूँजीपतियों का दायित्व है कि वे उत्पादन के साधनों का उपयोग राष्ट्रीय हित और समाज के व्यापक कल्याण को ध्यान में रखते हुए करें। [6]

गाँधीजी के अर्थ–दर्शन में विकेंद्रीकरण का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। उनके अनुसार, समानता जहाँ विकेंद्रीकरण की आधारभूमि है, वहीं विषमता केंद्रीकरण को जन्म देती है। आदर्श समाज वही है जो विकेंद्रीकृ त हो और जिसमें समता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान हो। गाँधीजी का मानना था कि केंद्रीकरण से सत्ता और संसाधन कुछ लोगों के हाथों में सिमट जाते हैं, जिससे उनके दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। इसके विपरीत, विकेंद्रीकरण शक्ति के व्यापक वितरण को सुनिश्चित करता है। केंद्रीकरण जीवन को अधिक जटिल बनाता है, विशेषज्ञों पर निर्भरता बढ़ाता है और सृजनात्मक तथा नैतिक प्रयासों में बाधा उत्पन्न करता है। यह व्यक्तियों की पहल, साहस, आत्मनिर्भरता और सृजनशीलता को क्षीण करता है तथा स्वशासन और अन्याय के प्रतिरोध की क्षमता को कम करता है। इसके परिणामस्वरूप सामाजिक संबंध यांत्रिक और निर्वैयक्तिक हो जाते हैं तथा नैतिक संवेदनशीलता का ह्रास होता है। इसलिए गाँधीजी ने स्पष्ट कहा कि "केंद्रीकरण समाज की अहिंसक व्यवस्था के अनुकूल नहीं है।"[7] उन्होंने आगे यह भी कहा कि यदि भारत को अहिंसक मार्ग से विकास करना है, तो उसे जीवन के अनेक क्षेत्रों में विकेंद्रीकरण अपनाना होगा, क्योंकि केंद्रीकरण को बनाए रखने के लिए बल–प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है। गाँधीजी के अनुसार, अहिंसा का आधार बड़ी मिलों और केंद्रीकृत उत्पादन पर नहीं, बल्कि स्वावलंबी ग्राम–व्यवस्था पर ही संभव है। विकेंद्रीकरण से स्वदेशी, आत्मनिर्भरता और सामाजिक सहयोग की भावना विकसित होती है।

गाँधीजी के अनुसार, विकेंद्रीकरण एक नैतिक व्यवस्था है, जिसमें हिंसा, अन्याय और शोषण का अभाव होता है। इसमें मानव–सुख, सम्मान और समग्र विकास को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि केंद्रीकरण में यंत्रों और उत्पादन की अधिकता को महत्व देकर मानव–मूल्य उपेक्षित हो जाते हैं। इसी संदर्भ में विचारकों ने भी यह माना है कि अत्यधिक केंद्रीकृत और यांत्रिक उत्पादन व्यवस्था बिना किसी प्रकार की हिंसा के संचालित नहीं हो सकती, जबकि विकेंद्रीकरण अहिंसक समाज की आधारशिला है। विकेंद्रीकरण पूँजीवाद की अति–वृद्धि को रोकने का भी प्रभावी उपाय है, क्योंकि पूँजीवाद प्रायः शोषण, असमानता और हिंसा को जन्म

देता है। गाँधीजी ने उत्पादन के साधनों को अधिकाधिक व्यक्तियों के हाथों में वितरित करने की बात कही, जिससे आर्थिक शक्ति का संकेंद्रण समाप्त हो सके। उनका मानना था कि अर्थशास्त्र का उद्देश्य मानव को सुखी बनाना है, और यह तभी संभव है जब आर्थिक लक्ष्यों का नैतिक और आध्यात्मिक आधार सुरक्षित रहे।

इस प्रकार गाँधीजी के आर्थिक चिंतन में समानता के साथ–साथ विकेंद्रीकरण तत्व है। वर्तमान समय में बढ़ती आर्थिक विषमता अर्थव्यवस्था को केंद्रीकरण की ओर ले जाती है, जिससे शोषण, अन्याय और असमानता जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत, विकेंद्रीकरण ऐसी व्यवस्था प्रस्तुत करता है जिसमें उत्पादन के साधनों का व्यापक वितरण होता है और समाज के सभी वर्गों के लिए विकास के समान अवसर उपलब्ध होते हैं। बिना हिंसा, बिना शोषण और बिना अन्याय के सबका समान विकास यही विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का मूल स्वरूप है, जिसे गाँधीजी ने एक आदर्श, मानवीय और अहिंसक समाज की स्थापना के लिए आवश्यक माना।

गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था कि संसार की सभी वस्तुएँ मनुष्य के लिए हैं, न कि मनुष्य वस्तुओं के लिए। उनके अनुसार मनुष्य केवल धन, सोना–चाँदी या भौतिक साधनों के लिए नहीं जीता, बल्कि प्रेम, सहानुभूति और नैतिक मूल्यों जैसे मानवीय गुण उसके जीवन के वास्तविक आधार हैं। [8] वर्तमान आर्थिक व्यवस्था को उन्होंने अत्यधिक यंत्र–प्रधान माना। वे यांत्रिक सभ्यता के अंधानुकरण के विरोधी थे, किंतु समस्त यंत्रों के नहीं। उनका विरोध यंत्रों के अविवेकपूर्ण और असीमित विस्तार से था। उनके शब्दों में –

> "मुझे आपत्ति स्वयं मशीनों से नहीं, बल्कि उनके प्रति अंध–आसक्ति से है। यह पागलपन श्रम–बचाने वाले यंत्रों के पीछे है, जिसके कारण हजारों लोग बेरोजगार होकर भूख से मरने के लिए छोड़ दिए जाते हैं। मैं भी धन चाहता हूँ, परंतु वह कुछ लोगों के हाथों में केंद्रित न होकर सबके बीच वितरित होना चाहिए।"[9] इसी संदर्भ में वे आगे कहते हैं–
>
> "मैं भी श्रम और समय की बचत का पक्षधर हूँ, किंतु यह लाभ समाज के एक वर्ग तक सीमित न रहकर सभी को प्राप्त होना चाहिए। मूल विचार मनुष्य का हैय यह आवश्यक है कि मशीनें मनुष्य को पंगु न बना दें। हमें लोभ के स्थान पर प्रेम और मानवीय संवेदना को प्रतिष्ठित करना चाहिए।" [10]

स्पष्ट है कि गाँधीजी मशीनों के विरोधी नहीं थे, बल्कि वे उन यंत्रों के समर्थक थे जो मानव–सुख में वृद्धि करें और श्रम को सहज बनाएं। वे श्रम और समय की बचत चाहते थे, परंतु इस प्रकार नहीं कि मनुष्य बेरोजगार, दरिद्र या निष्क्रिय हो जाए। आज की स्थिति देंखे तो मानव–श्रम की उपेक्षा के कारण न केवल मानवीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है, बल्कि बेरोजगारी और भूखमरी जैसी समस्याएँ भी बढ़ रही हैं। सरकारी प्रयासों के बावजूद इनका पूर्ण समाधान नहीं हो पा रहा है। अतः गाँधीजी विनाशकारी और मानव–विरोधी मशीनों के विरोधी थे, किंतु उन सभी यंत्रों का स्वागत करते थे जो मानव–श्रम को सम्मान दें, उसका बोझ हल्का करें और विशेष रूप से समाज के गरीब एवं वंचित वर्गों के जीवन को सहज और बेहतर बनाने में सहायक हों।

गाँधीजी की अर्थव्यवस्था में चरखा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह केवल एक उपकरण नहीं, बल्कि कुटीर उद्योग, ग्रामोद्योग और आर्थिक स्वावलंबन का सशक्त प्रतीक है। गाँधीजी का आर्थिक चिंतन देश–काल के अनुरूप था, जिसमें ग्राम–आधारित उद्योगों को केंद्रीय स्थान दिया गया। उनके अनुसार, स्वावलंबन की प्राप्ति बड़े उद्योगों की अपेक्षा छोटे–छोटे कुटीर उद्योगोंकृविशेषतः चरखेकृके माध्यम से अधिक प्रभावी ढंग से संभव है। इससे मानव–श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ती है और मनुष्य यांत्रिक निर्भरता से मुक्त होकर आत्मनिर्भर बनता है। गाँधीजी मानते थे कि भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में गरीबी का समाधान मानव–श्रम आधारित स्वावलंबन से ही संभव है। उन्होंने कहा –

> "मुझे हर ओर चरखा दिखाई देता है, क्योंकि मैं चारों ओर दरिद्रता और निर्धनता देखता हूँ। जब लोगों को अन्न और वस्त्र नहीं मिलते, तब उनके लिए धर्म का कोई अर्थ नहीं रह जाता। वे पशु–तुल्य जीवन जीने को विवश हो जाते हैं, और इसके लिए हम भी जिम्मेदार हैं। इसलिए चरखा हमारे प्रायश्चित का साधन है।"[11]

चरखा केवल स्वावलंबन का प्रतीक ही नहीं, बल्कि नई तालीम और अस्पृश्यता–निवारण का भी माध्यम है। गाँधीजी ने इसकी तुलना उस बीज से की, जो छोटा होने पर भी विशाल वृक्ष का रूप ले सकता है और अनेक जीवों को आश्रय देता है। उसी प्रकार, यदि चरखे की प्रवृत्ति का प्रसार हो, तो उसके साथ

अनेक अन्य कुटीर उद्योग भी विकसित हो सकते हैं, जिससे व्यापक सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन संभव है। गाँधीजी के शब्दों में –

"चरखा लंगड़ों की लाठी है, भूखों के लिए अन्न का साधन है और निर्धन स्त्रियों की रक्षा का किला है।"[12]

वर्तमान वैश्वीकरण और उदारीकरण के दौर में उत्पन्न शोषण, केंद्रीकरण और असमानता की समस्याओं का समाधान भी गाँधीजी ने कुटीर उद्योगों में देखा। चरखा जैसे छोटे उद्योग न केवल रोजगार सृजित करते हैं, बल्कि उन्हें संचालित करने के लिए अधिक पूँजी की आवश्यकता भी नहीं होती। इस प्रकार, यह बेरोजगारी और बेकारी की समस्या का सरल और तात्कालिक समाधान प्रस्तुत करता है।

गाँधीजी के आर्थिक चिंतन में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का केंद्रीय स्थान है। उनके अनुसार आदर्श ग्राम–आधारित अर्थनीति शोषणमुक्त होती है, क्योंकि शोषण ही हिंसा का मूल हैय इसलिए अहिंसक समाज के लिए ग्राम–भावना और स्वावलंबन आवश्यक हैं। इस व्यवस्था में उत्पादन के साधन जनता के हाथों में रहते हैं, जिससे समानता और न्याय की स्थापना होती है। गाँधीजी ने भूमि–समस्या को ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मूल प्रश्न माना। जमींदारी प्रथा के कारण उत्पन्न विषमता और शोषण को समाप्त करने के लिए उन्होंने जमींदारों को 'संरक्षक' (ट्रस्टी) की भूमिका अपनाने का सुझाव दिया, ताकि किसान और जमींदार के बीच सहयोग और विश्वास का संबंध विकसित हो सके। इसी आधार पर उन्होंने सहकारी खेती का समर्थन किया, जिसमें भूमि, श्रम, औजार और संसाधनों का सामूहिक उपयोग हो तथा पारस्परिक सहयोग की भावना विकसित हो। गाँधीजी का मानना था कि भारत का वास्तविक विकास गाँवों के उत्थान में निहित है। उन्होंने शहर–केंद्रित विकास की आलोचना करते हुए ग्रामोद्योग, स्वदेशी और कुटीर उद्योगों के पुनर्जीवन पर बल दिया। उनके अनुसार, चरखा, खादी, मधुमक्खी पालन, हस्तशिल्प आदि के माध्यम से रोजगार, आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय सुनिश्चित किया जा सकता है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि आर्थिक विकास का कोई एक सार्वभौमिक मॉडल नहीं हो सकताय वह देश, काल और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।[13] भारत जैसे श्रम–प्रधान देश में यंत्रीकरण की अंधी दौड़ के स्थान पर मानव–श्रम आधारित, विकेंद्रीकृत और ग्राम–आधारित अर्थव्यवस्था अधिक उपयुक्त है। इस तरह, गाँधीजी का आर्थिक दृष्टिकोण एक ऐसे विकेंद्रीकृत, स्वावलंबी और नैतिक ग्रामीण समाज की परिकल्पना करता है, जिसमें बिना शोषण, बिना हिंसा और बिना असमानता के सबका समग्र विकास संभव हो सके।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः गाँधीजी का दृष्टिकोण और कार्य क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है, जिसमें मानव समाज की लगभग सभी मुलभूत आवश्यकताएँ समाहित थी। गाँधीजी का आर्थिक चिंतन भी इसी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। गाँधीजी एक ऐसी संतुलित, नैतिक और मानवीय व्यवस्था की स्थापना का आग्रह करता है, जिसमें समानता, न्याय और अहिंसा के माध्यम से समग्र सामाजिक कल्याण सुनिश्चित हो सके। गाँधीजी के अर्थ–दर्शन का मूल लक्ष्य समाज के अंतिम व्यक्तिकृसामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सबसे वंचितकृका उत्थान है। उनके अनुसार, जब तक दीन–हीन वर्ग का विकास नहीं होता, तब तक कोई भी आर्थिक नीति सार्थक नहीं मानी जा सकती। यही 'सर्वोदय' की अवधारणा है, जिसमें सबके उदय और कल्याण का मार्ग निहित है। यह व्यवस्था पारस्परिक प्रेम, आत्म–त्याग और समानता पर आधारित है, जहाँ न किसी की उपेक्षा होती है और न ही किसी प्रकार का भेदभाव। गाँधीजी ने आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को भौतिक संपन्नता से अधिक महत्त्व दिया तथा अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र को अविभाज्य माना। उनकी दृष्टि में आदर्श समाज वह है, जहाँ गरीब से गरीब व्यक्ति भी अपने महत्व को महसूस करे, ऊँच–नीच और जातिगत भेद समाप्त हों, स्त्री–पुरुष समान अधिकारों के अधिकारी हों, और समाज अहिंसा, सत्य तथा शोषण–मुक्त संबंधों पर आधारित हो। इस प्रकार, गाँधीजी का आर्थिक चिंतन एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और मानवीय समाज की स्थापना का मार्ग प्रस्तुत करता है, जो भारतीय समाज के लिये प्रासांगिक है।

संदर्भ सूची

1. जे. एस. माथुरः इन्डस्ट्रियल सिविलाइजेशन एण्ड गान्धियन, इकोनोमिक्स, इलाहाबाद, 1971, पृ.104.
2. यंग इंडिया, 13 अक्टूबर, 1921.
3. यंग इंडिया, 6 अप्रैल, 1922.
4. यंग इंडिया, 27 अक्टूबर, 1921.

5. हरिजन, 16 जुलाई, 1932.
6. हरिजन, 20 अप्रैल, 1940.
7. गाँधी, आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, पृ. 227.
8. हरिजन, 18 जनवरी, 1942.
9. हरिजन, 30 दिसंबर, 1939.
10. हरिजन, 4 नवंबर, 1939.
11. यंग इण्डिया, 15 अप्रैल, 1926.
12. यंग इण्डिया, 26 मार्च, 1931.
13. धर्मनीति – सर्वोदय, पृ. 105.

उजड़ते, बसते गाँव एवं पर्यावरण

प्रो. मदन कुमार वर्मा*

सारांशः–

मैंने अपनी कहानी उजड़ते, बसते गाँव एवं पर्यावरण में ये दर्शाने का प्रयास किया है कि कैसे गांव धीरे–धीरे आधुनिकीकरण की तरफ बढ़ रहे है। जिसका परिणाम ये है कि गांव का 'प्राकृतिक पर्यावरण' प्रभावित हुआ है। जिससे गाँवों में संरचनात्मक परिवर्तन के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। और मैंने अपनी इस कहानी के माध्यम से यह दर्शाने का प्रयास किया है कि कैसे पुनः पुराने प्राकृतिक पर्यावरण को गाँवों में वापस लाया जा सकता है। जिसका आधुनिकीकरण के साथ सामंजस्य हो ताकि 'अक्षय विकास' की परिकल्पना साकार हो सके।

मुख्य शब्दः– आधुनिकीकरण, पर्यावरण, अक्षय विकास, बाग, आम, डिजटिलीकरण आदि।

''आयी पूरवा सुहानी रे आयी पूरवा........''

मेरे अपने (रूपपुर) गांव का शांत वातावरण चारो तरफ हल्की–हल्की मंद–मंद हवाए चल रही है। सभी के मकान कच्ची मिट्टी व खपरैल से बने है। सभी दरवाजे पर छप्पर है और प्रायः सभी घरों के सामने नीम का पेड़ है। गांव के चारों तरफ कच्चे मिट्टी के बने चौड़े–चौड़े रास्ते है। और गांव में दो या तीन कुएं है जिससे लोग पानी पीते है। सभी के दरवाजे बरदौर में बैल, गाय व भैस है। गांव के चारों तरफ बड़े–बड़े आम के बाग है जो पुराने जमाने के देशी आम के पेड़ है। गांव के सामने 7 बीघे का कब्रिस्तान है। जिसमें बच्चे गिल्ली डंडा व कब्बडी इत्यादि बदलते मौसम के अनुसार खेल खेलते है। जिसमें प्रायः गाय, बकरी व भैस चरा करते थे। जिसके बीच में एक विशाल बरगद व कहीं–कहीं ढाक के पेड है।

ये पशु चरते–चरते खोर के रास्ते (जिसके दोनों तरफ सरपत की खाई व कहीं–कहीं विशाल आम के वृक्ष थे।) तमसा नदी के शमशान घाट तक जाते थे। जो गांव से 1 किमी की दूरी पर था जहाँ पशु व चरवाहे नहाते थे व पशु नीम के पेड़ के नीचे नहाने के बाद बैठ जाते थे और चरवाहे दोपहर का खाना खाने घर आते थे। और शाम को पशु वापस अपने घरों को आते। कभी–कभी मैं भी भैस चराने जाता था, जहां नदी में हम खूब नहाते थे। ऐसे प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर गांव में हिन्दू–मुस्लिम दोनों बसते थे। जिसमें कभी मुर्हरम, कभी राम लीला तो कभी जन्माष्टमी मनायी जाती रहती थी। गांव से कुछ दूरी पर प्राइमरी व जूनियर स्कूल सरकार द्वारा खोले गये थे। जिसमें सभी गांव के बच्चे पढ़ने जाते थे। सुबह को हम ट्यूशन देवकली गुरूजी पढ़ते थे। मैं भी छोटा था, झोला व तख्ती लेकर प्राइमरी स्कूल में पढ़ने जाता था, जहां बहन जी पढ़ाती थी।

हम थोड़ा और बड़े हुए तो मैं अपनी बड़ी बहनों के साथ दूसरे जूनियर स्कूल में पढ़ने के लिए जाने लगा, मेरे लिए मेरे पिता जी ने एक बड़ी तख्ती बनवायी थी। गांव के सभी बच्चे सुबह तैयार होकर स्कूल जाते थे। जिनके कंधे पर बस्ता व हाथ में तख्ती होती थी। बच्चे खेलते कूदते जाते थे, और कभी–कभी गाँव के विभिन्न विषयों पर आपस में चर्चा करते हुए जाते थे। स्कूल में प्रार्थना के बाद बच्चे अपनी कक्षा में जाते, और शाम को पुनः विभिन्न विषयों चर्चा करते व खेलते कूदते वापस आ जाते। इसके बाद हम सभी लड़के नास्ता कर कब्रिस्तान वाले मैदान व बाग में कब्बड़ी व गिल्ली डंडा खेल खेलने चले जाते थे। फिर सूरज ढलने पर घर आते। फिर वही दिनचर्या शुरू होती। सुबह उठना देवकली गुरू जी में ट्यूशन पढ़ना, और फिर जूनियर स्कूल में पढ़ने जाते थे। एक दिलचस्प बात थी कि हमारे साथ हमारे गांव के मोलवी साहब भी जाते थे। (जो अंकगणित व उरदू बहुत अच्छा पढ़ाते थे।) स्कूल में सबसे ज्यादा सम्मान छात्र मोलवी साहब का करते थे। हम सभी मोलवी साहब के पीछे–पीछे जाते थे तथा विभिन्न विषयों पर सुबह–शाम स्कूल आते–जाते चर्चा किया करते थे। कभी–कभी मोलवी साहब भी इस चर्चा में शामिल हो जाते थे। एक दिन की बात है कि हम सब सुबह–सुबह स्कूल जा रहे थे। रवि नामक एक छात्र बोला कि मेरे खेत में लाइन वाली (विद्युत) वाली ट्यूब – बेल लग रही है। तो दूसरे छात्र बुध ने कहाँ कि मेरे घर में हैण्डपम्प लग रहा है।

* परिसर, उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत यू.पी. 262001, उ0प्र0, मोबाइल नं0:– 9927508508

तभी मोलवी साहब ने हस्तक्षेप करते हुए कहाँ कि देखो बच्चों जमाना व आबो–हवा दोनों बदल रही है। अब धीरे–धीरे रहठ कुंओं व तालाब से सिंचाई का स्थान ट्यूबेल व नहरें ले लेगी। तथा गांवों में कुओं का स्थान हैण्डपम्प ले लेगें। खपरैल मकानों व दीवालों का स्थान छते व पक्के ईंट के मकान ले लेगें। छप्पर की जगह टीन शेड ले लेगें रास्ते चौड़े व पक्के हो जायेगे। गांव की विद्युतीकरण हो जायेगा। कहीं–कहीं सोलर लाइटे लग रही है। कहीं–कहीं गॉवो में पानी की टंकी की भी व्यवस्था है। जिससे गाँव की पानी की आपूर्ति हो रही है। तभी एक छात्र चन्द्रमा बीच में बोली मोलवी साहब यही नहीं अब तो किसानी भी बदल रही है। अब बैलों के स्थान पर गेहूं धान की मड़ाई थ्रेसर व कही–कहीं कम्बाइन मशीन से हो रही है। तथी मोलवी साहब ने कहाँ बच्चों से क्यों भूल रहे हो कि अब बैलों का स्थान ट्रक्टर लेते जा रहे है। मोलवी साहब ने आगे ये भी कहाँ कि अब नयी सड़के बन रही है। तथा पुराने ऊखुड़ पिराई में बैल कोल्हू का स्थान विद्युत क्रेशर ले रहे है। नई – प्रजाति कि किस्मे आ रही है। जिससे पैदावार बढ रही है धान, गेहूँ की नयी – नयी किसमो से उपज में क्रांति आ गयी। पर पुरानी गुण वत्ता नहीं रही।

मौलवी साहब ने कहाँ कि देखो बच्चा जमाना सदा बदलता रहा है बदलता रहेगा। लेकिन बच्चे दुःख इस बात का है कि इससे 'पर्यावरण असंतुलन हो' रहा है। जिसके कई प्रमाण है।

1. अब पहले जैसे आम के बाग व पेड़–पौधे न रहे।
2. अब पहले जैसी रिम–झिम की बरसात नहीं होती है।
3. अब गर्मी में बहने वाली लू भी कम चलती।
4. कभी वारिस कभी होती है कभी नहीं।
5. कभी बाढ, आती है तो कभी अकाल।

अधिकाँश विद्वानों का यही कहना है कि भारत का पर्यावरण तभी असंतुलित हुआ जब से ब्रिटिश सरकार ने रेलवे पट्टियों के लिए वृक्षों को कांटा। और लोग न बागों को काँटा। कई लोगों ने वन को काट डाला। बात करते –करते बच्चों का स्कूल आया। प्रार्थना के बाद सभी बच्चे कक्षा में चले गये। फिर बच्चे शाम को घर आये खाना–पीना खाकर गाँव के कब्रिस्तान में खेलने चले गये। अब धीरे–धीरे कबड्डी व गिल्ली डंडा के स्थान पर बच्चे क्रिकेट खेलने लगे। एक दिन की बात है सुबह स्कूल जाते बसंत ऋतु के मौसम पर चर्चा शुरू की। विशेषकर आने वाले आम की फसल पर चर्चा शुरू की। एक बच्चे रमेश ने कहां कि मेरे बाग इस बार बहोत आम के बऊर आये है तो दूसरे कहाँ ने कि मेरे बाग में भी काफी बऊर आये है। मोलवी साहब ने समझाते हुए कहाँ कि इस बार आम की फसल अच्छी है। पर बच्चों दुःख इस बात का है कि तमाम हरे आम के पेड़ लोगों द्वारा कटवा दिये जा रहे है। जिसका पर्यावरण पर प्रभाव पड़ा है क्योंकि नये पौधे लग नही रहे है। आने वाले आम की फसल का प्रभाव ये पड़ा कि धीरे–धीरे कई बच्चे अब शाम को कब्रिस्तान में खेलने के बजाय शाम को अपने आम की बाग की रखवाली करने चले जाते। क्योंकि आम की फसल आने पर उसकी रखवाली जरूरी थी।

धीरे–धीरे 'बच्चों का सलाना इन्तहान जाने के बाद बच्चों की गर्मी की छुट्टी हो गयी। अब अधिकांश बच्चे दिन भर गांव के बाहर आम के बाग की रखवाली करते और खेलते थे। सभी बच्चों की निगाहे इस पर रहती थी कि कब आम गिरे और हम खाये। तभी एक बच्चे रमेश ने पड़ोस के बाग के बच्चे रवि की बुलाया रवि देखो–देखो तोते आम खा रहे है। और बच्चों ने तोतो के आम खाता देखकर खुश हो गये। दूसरे दिन एक बच्चे रवि ने एक गिलहरी को आम खाते देखा। बच्चों से कहां कि देखों गिलहरी आम खा रही है सभी बच्चे गिलहरी को आम खाता देखकर खुश हो गये। एक दिन की बात है कि आम के बाग में सभी बच्चे थे। अचानक कोयल कूकने लगी। बच्चों ने कोयल को देखा और उसके कूकने की आवाज सुनकर बच्चो खुश हो गये। धीरे–धीरे कच्चे आम पकने लगे। एक दिन रवि व बुध अपने–अपने बाग की रखवाली कर रहे थे कि एक किसान पेड़ की छांव में बैठ गया और कहाँ कि लगता है बारिश अभी दूर है हमें गेहूं की मँडाई कर लेनी चाहिए। तभी पशुओं का एक झुंड पेड़ की छांव में आ कर रूक गया। हल्की–हल्की हवा चल रही थी लगता था, पूरी कुदरत बाग में आम के पेड़ों के नीचे आ गयी है खाने को पके आम थे और चारों तरफ कुदरत के नजारे। बच्चे जब पका आम गिरता दौड़ पड़ते, और अपने मिट्टी के घर के बनाये छोटे गुल्लक के मकान में आम डाल देता। जिस दिन आँधी या तजे हवा बहती बच्चे ज्यादा खुश होते क्योंकि उस दिन ज्यादा पके आम गिरते। धीरे आम की फसल जा रही थी। तभी पूर्वानुमान हवा से लगाकर एक किसान ने कहा कि बरसात करीब है। आम की फसल भी धीरे–धीरे चली गयी बच्चों के स्कूल भी खुल गये। बरसात शुरू हो गयी, हम सब पुनः मौलवी साहब के पीछे अगली कक्षा में पढ़ने के लिए जाने

लगे। धीरे–धीरे बच्चे बड़े हो गये। यही बच्चों की हर साल की जीवनचर्या थी। धीरे–धीरे बच्चे बड़े हो गये सभी बड़े के बच्चों ने गांव छोड़ बड़े शहरों में पढ़ना शुरू किया अब ये यदा–कदा गांव आया करते थे।

बुध, चन्द्रमा, रवि सभी बच्चे शहरों में पढ़ने लगे और यदा–कदा गांव में आते थे दो या एक दिन गांव में रहते फिर पढ़ने के लिए शहर चले जाते थे। एक बार गर्मियों की छुट्टी में सभी बच्चे गांव आये थे। इन लड़को के पुराने शिक्षक देवकली मास्टर साहब व मौलवी साहब का इन्तकाल हो चुका था। सभी लड़कों ने गांव के चारो तरफ टहलना शुरू किया तो गांव का नजारा देख सारे बच्चे दंग रह गये। यकायक चन्द्रमा चीख पड़ी वो रवि देखों कितने–कितने विशाल आम के वृक्ष सूख रहे है। ता दूसरी तरफ देखों आम के बाग का मालिक आम के हरे देशी पेड़ कटवा रहा। बच्चों ने आम के पेड़ काटने का विरोध किया तो खरीददार कहने लगा बाग के मालिक से बात करो। लड़को ने कहां ये वृक्ष आम मत काटो। कल जब फैसला हो जायेगा तब काटना। तो खरीददार मान गया। इसके बाद लड़के और आगे निकले तो देखा लोग ताल–तलैया पाटकर घर बना लिये है। जिससे गर्मी के मौसम में पशु–पक्षी के लिए पानी की समस्या पैदा होने लगी। वो डबरा भी जहाँ सैकड़ों भैसे पड़ी रहती थी पानी का नामो–निशान न था क्योंकि अब बरसात ही नहीं होती। इसके बाद लड़के और आगे बढ़े धीरे–धीरे तमसा नदी का तट सामने आ गया। तमसा नदी को देख सारे लड़के के होश उड़ गये इस नदी में एक बूंद पानी न था। कारण क्या है? ये प्रश्न सभी लड़कों के दिमाग में गूंजने लगा? बचपन का वो पुराना दृश्य लड़को के अन्तरगं मन दौड़ पड़ा कैसे हम और पशु तमसा में स्नान करते थे। और दोपहर में नीम के पेड़ के नीचे पशु बैठते थे। हम लोगा खाना खाने घर जाते थे। सब कुछ नष्ट हो गया। लड़कों ने कलजे पर पत्थर रखकर घर की तरफ लौटना शुरू किया। तभी कुछ किसान व चरवाहे आ गये, पूछने पर दोनों ने बताया। भईया तमसा जी ने धीरे–धीरे अपना धारा मुडने कारण है।

1. तमसा नदी में एक भीटा (टीला) मुख्य धारा गिरा कर पाटना।
2. जिससे जिस तरफ से तमसा नाले के रूप में बहती थी तो अब मुख्य धारा हो गयी।

इसके बाद बच्चे अपने घर आये रास्ते में बच्चों ने आपसी विचार–विमर्श किया तभी बुध बोला आज हम सभी लोग प्रधान से मिलेगे और इस विषय पर चर्चा करेगें। सभी बच्चों ने बुध की बात का सर्मथन किया। सभी लड़के अपने घर खा–पीकर प्रधान की चौपाल में इकट्ठा हुए। लड़कों चाचा ताऊ व काका इत्यादि का सम्बोधन कर प्रधान को नमस्कार किया। प्रधान इतने लड़कों को एक साथ देखकर चौक पड़ा ! और कहां ; आखिर क्या बात है, तुम एक साथ आये थे। तभी एक लडका रवि बोला, काका गांव की कई समस्याएं लेकर हम आये है। और आपसे समाधान चाहते है। प्रधान बोले तुम लोग पढ़ने लिखने वाले विद्यार्थी तुमको गांव की समस्या से क्या लेना–देना है ? तभी चन्द्रमा बोली नहीं चाचा, ये गांव पहले है तब पढ़ाई–लिखाई। यदि गांव उजड़ गया तो हमारे पढ़ने लिखने का क्या मतलब है? प्रधान कहाँ ठीक कह रही हो बेटी अब अपनी–अपनी समस्याएं बताओ। चन्द्रमा बोली।

पहला प्रश्न यह है कि गांव के बाग में हरे आम के पेड़ काटे जा रहे है इन्हें रोका जाए।

दूसरा गांव का प्रत्येक 5 एकड़ की जमीन रखने वाला किसाान कम से कम 10 बिसवा जमीन पर फलदार विशेषकर आम के वृक्षों का रोपड़ करें।

तीसरा तमसा नदी की धारा मुड़ जाने से भू–जल का स्तर गिर रहा व पर्यावरण का नुकसान हो रहा है तमसा नदी की धारा को पुनः पूर्ववत किया जाय।

चौथा गांव के ताल–तलैया पट गये इनकी पुनः खुदाई हो ताकि भू–जलस्तर बढ़े व पशु–पक्षी व जानवरों को गर्मी व अन्य महीनों में पानी मिले।

प्रधान ने उपरोक्त सभी बातो पर अपनी सहमति दी। तो इसके पश्चात लड़के अपने–अपने घर चले गये। लड़को से विदा लेते समय प्रधान ने लड़कों से कहा कि मैं इस सप्ताह ग्राम सभा की बैठक बुलाऊगां। तथा बाग मालिक बंजर से बात करूंगा हरे पेड़ क्यों काट रहे हो? जाते–जाते प्रधान ने कहां बच्चों देखों गांव का भविष्य अब तुम्हारे हाथ में है, हमारा समय बीत चुका है। दूसरे दिन प्रधान स्वयं बंजर के घर गये। बजर के सामने बात रखी। तो बंजर ने कहाँ कि प्रधान जी मुझे पैसों की जरूरत है। इसलिए ऐसा कर रहा हूं। कहां यदि कोई मेरी बाग ही खरीद लेता तो मैं बेच देना। प्रधान जी ने कहां बंजर बाग मुझे दे दो। मैं खरीद लंगू ा। प्रधान व बंजर के बीच बाग का सौदा तय हो गया। और प्रधान बंजर अग्रिम धनराशि बयान के रूप में देखकर बाग लिखवाने का कार्य शुरू कर दिया। और बाग खरीद लिया। जिससे बाग कटने से बच गये, पर पेड़ों का सूखना जारी रहा।

अगले इतवार के दिन उसी बाग में जहां वृक्ष कांटे जा रहे थे। प्रधान ने खुली ग्राम सभा की मीटिंग बुलायी। प्रधान ने लड़कों की शेष तीन मांगो को पंचायत के समक्ष रखा। और कहाँ कि हमारे गावं के नौजवान व साक्षर बच्चों की निम्न माँगे है।

प्रथमः– आम के बाग सूख रहे पुनः बाग लगाये।

द्वितीयः– तमसा नदी की धारा को पुनः लाया जाय।

तृतीयः– ताल तलैया व पोखरे खुदवाये जाये।

चतुर्थः– बंजर जमीन पर व खाली जमीन पर प्रधान बरगद, पीपल आदि वृक्ष लगवाये।

पंचमः– प्रत्येक किसान जिसके पास पाँच एकड़ जमीन है, 10 बिसवा जमीन पर बाग लगाये।

उक्त सभी मुद्दों का उद्देश्य यही है कि गांव का प्राकृतिक पर्यावरण बनाये रखा जाये तथा भू–जल स्तर को पुनः बढ़ाया जाये। सभी ने प्रधान की मांग का समर्थन किया। तभी रवि बोला। ग्राम वासियों हमारी आप से विनम्र निवेदन है कि प्रत्येक किसान जिसके पास 5 एकड़ से ज्यादा भूमि है वो 10 बिसवा जमीन पर आम के वृक्ष लगाये। तथा जनता ने प्रधान से निवेदन किया कि वो बंजर व खाली पड़ी जमीन पर वृक्ष लगवाये। जैसे पीपल, बरगद आदि। सभी पांच एकड़ वाले किसानों 10 बिसवा जमीन पर आम के वृक्ष लगाने का समर्थन किया इसका समर्थन किया, पर दो किसान 'कालू व दयालू' ने विरोध किया तो प्रधान ने आम के बाग लगाने के फायदे बताये तो दोनो मान गय। इसके बाद चन्द्रमा ने आगे बढ़कर कहाँ कि पंचो मैं तमसा नदी की धारा को मोड़ने हेतु मुख्यामंत्री पोर्टल पर शिकायत करूंगी। सारी जनताा ने चन्द्रमा की बात का सर्मथन तालिया बजाकर किया। इसके बाद प्रधान से चन्द्रमा ने कहां कि प्रधान काका दस्तावेज में दर्ज ताल तलैया व नये तालाब खुदवाये ताकि जल सचं य हो सके। जिससे भूजल स्तर बढ़ेगा व पशु–पक्षियों को समय–समय पर पाली मिलेगा। इसके बाद पंचायत को प्रधान ने समापन भाषण व लोगो को धन्यवाद देते हुए समाप्त किया।

इसके बाद गांव के सभी बच्चे जो शहर में पढ़ रहे थे रवि, बुध, चन्द्रमा आदि शहर चले गये। शहर आकर चन्द्रमा ने मुख्यमंत्री पोर्टल पर जन–शिकायत के रूप में तमसा नदी की धारा सूखने की शिकायत मुख्यमंत्री पोर्टल पर दर्ज करायी और सभी छात्र अपने अध्ययन–अध्यापन में लग गये। एकदिन शाम चन्द्रमा व रवि ने हास्टल के 'कामन हाल' में पर्यावरण प्रदूषण व घटता जल स्तर पर मीटिंग बुलायी और अपनी बात छात्रों के समाने रखी। कि हमने अपने गांव के पर्यावरण प्रदूषण व गिरते जल स्तर को सुधारने के लिए क्या–क्या प्रयास शुरू किया है और सभी छात्रों से अनुरोध किया कि वो भी अपने गांव के प्रधान व सदस्यों से मिलकर इस विषय पर कार्यवाही करें, क्योंकि गांव हमारे व देश का भविष्य है सभी लड़कों उसकी बात का सर्मथन किया। चन्द्रमा ने सभी को धन्यवाद दिया।

दूसरी तरफ गांव में प्रधान जी ने गाँव में अपनी गतिविधि शुरू की।

1. गांव के सभी किसानों को आम व अन्य वृक्ष के पौधे वितरित किये गये। बरसात में और स्पष्ट हिदायत दी गयी। तारो की बाउंड्री बनाकर व पौधों की उचित देखभाल कर उनकी सुरक्षा की जाये।
2. गर्मी के मौसम के बाद बारिस शुरू होने से पहले प्रधान ने गांव की ताल–तलैया जो कागज में दर्ज थे खुदवाये।
3. प्रधान ने खाली पड़े जमीन व बंजर जमीन पर ग्राम सभा के गूलर, पाकड़ पीपल, बरगद, नीम व देशी आम के वृक्ष लगवाये और कटीले तारों से उन्हे सुरक्षित करें। उनकी देखभाल का प्रबंध किया।
4. 5 एकड से ज्यादा जमीन वाले किसानो ने 10 बिसता जमीन पर आम के वृक्ष लग वाये।

चंन्द्रमा ने द्वारा मुख्यमंत्री पोर्टल पर तमसा नदी के सम्बंध में शिकायत करने पर लखनऊ से कार्यवाही शुरू हुई। सरकार ने तमसा नदी की जांच करायीं जांच करवाने के बाद खुदाई करवायी। तथा तमसा जी के किनारे–किनारे वृक्ष भी लगवाये। जिस हेतू चन्द्रमा को ग्राम सभा व जिलाधिकारी ने सम्मानित किया।

अब पर्यावरण प्रदूषण व भू–जल स्तर के सुधार हेतु गांव के सारे कार्य पूरे हो गये थे। प्रधान ने इस अवसर पर पूरे ग्राम सभा की मीटिंग बुलायी और प्रधान जी ने अपने सम्बोधन में कहाँ कि ग्राम वासियों पुनः गांव में हरियाली वापस लाने व तमसा जी को लाने के सारे कार्य पूरे हो गये है। अब आवश्यकता इस बात की है कि इन पेड़–पौधो को सुरक्षित कैसे तैयार किया जाए। विभिन्न गांव के लोगों ने इस विषय पर भिन्न मत दिये। पर अन्त में पूरे ग्राम सभा ने सर्व–सम्पत्ति ने निर्णय लिया कि पांच सदस्यों की एक समिति बनेगी जिसका अध्यक्ष प्रधान होगा। वह प्रतिदिन हर क्षेत्र में लगे पेड़–पौधे व अन्य चीजों की रखवाली व सुरक्षा

सम्बंधी कार्य को करायगे ां ताकि पौधे का नुकसान न हो। इसके बाद प्रधान ने कहाँ कि ग्राम वासियों बड़े हर्ष का विषय है कि हमारे गाँव में निम्न कार्य हो गये। या जल्द पूरे हो जायेगें।

1. जल्द ही पानी की टंकी से गांव को पानी मिलने लगा।
2. कहीं–कहीं सोलर लाइट लग जायेगी।
3. सम्पूर्ण गांव की विद्युतीकरण हो गया।
4. सरकारी दो ट्यूब बेल लग गयी।
5. गाँव मुख्य संड़क से जुड़ गया।
6. पंचायत डिजटिलीकरण हो जल्द हो जायेगा।

जिसका हर्ष व कर तल ध्वनि से सभी गांव के सदस्यों ने समर्थन किया। इसके बाद ग्राम सभा की कार्यवाही स्थगित कर प्रधान ने सभा के समापन का भाषण दिया।

अब क्या प्रधान के नेतृत्व में गठित टीम पूरे गांव का मुआयना कर पेड़–पौधों व नदी धारा मोड़ने इत्यादि के विषय में आवश्यक दिशा–निर्देश व कार्यवाही करने का आदेश देती। इस बीच प्रधान ने गांव के किसानों को डेयरी फार्मा व मुर्गी फार्मा, बकरी पालन के कई केन्द्र खुलवाये जिसका कई किसानों ने लाभ उठाया। बीच–बीच शहर के लड़के भी आ जाते वो भी गांव के पर्यावरण संरक्षण भू–जलस्तर सुधारने के कार्यो में बढ़ चढकर भाग लेते धीरे वृक्षों की देखभाल करते–करते 10 वर्ष बीत गये नदी पुनः प्रवाहमान हो गयी। ताल–तलैया खुद गये। गांव की विद्युतीकरण होने के साथ–साथ पंचायत का डिजटली करण भी हो गया। पानी की ट ।की भी लग गयी। कई घरों व रास्तों पर सोलर लाइट भी लग गयी।

अब पुनः प्रधान ने ग्राम सभी की एक मीटिंग और बुलायी जिसमें शहर में पढ़ने वाले छात्र भी शामिल थे और प्रधान ने ग्राम सभा के सम्बोधन भाषण में कहां कि प्यारे ग्रामवासियों 10 वर्ष पहले हमने जो वृक्ष लगाये थे। वे सब अब धीरे–धीरे बड़े हो गये जिनके निरंतर देखभाल की जरूरत अब भी है। अब तो करीब–करीब गांव का आधुनिकीकरण भी हो गया है। जिससे गांव के विकास में चार चांद लग गये है।जैसेः–

1. ट्रक्टर व कम्बाइन मशीन से खेती हो रही है।
2. विद्युतक्रेशर से गन्ने पेरे जा रहे है।
3. गांव की सड़क व गलियों में पक्के रोड है।
4. पंचायत का डिजिटलीकरण हो गया।
5. गांव का विद्युतीकरण हो गया है।
6. सरकारी ट्यबेूल व नहरों से सिंचाई हो रही है।
7. डेयरी फार्मा व मुगी फार्मा खुल गया है।
8. गांव में प्राथमिक विद्यालय खुल गया है।
9. कहीं–कहीं गांवों को सोलर लाइटे लग गयी है।
10. तमसा जी की धारा पुनः गांव में आ गयी है।
11. गाँव मे ंपानी की टंकी से जलापूर्ति हो रही है।

प्रिय ग्रामवासियों ये मीटिंग मैंने इसलिए बुलायी है कि उक्त कार्य बिना आपके सहयोग के सम्भव न था। यद्यपि विपक्ष ने इसमें बाधा डालने का प्रयास किया पर हमने उसे विफल कर दिया और हमें अन्त में सफलता मिली है ये हमारे आपके परिश्रम का फल है। इसके बाद ग्राम सभा विसर्जित होने पहले छात्रा चन्द्रमा बोलने को उठी और पंचायत सदस्यों हम वो पर्यावरण व वो दौर वापस नहीं ला सकते जो हमारे बचपन में था। जब विशाल–विशाल आम के वृक्ष थे। हरतरफ हरियाली भी एवं पर्यावरण शुद्धता तभी 'रवि बोला हां चन्द्रमा ये वो गुजरा जमाना नहीं जो हमने बचपन में देखा था। तभी चन्द्रमा बोली रवि ये गुजरा जमाना नहीं गुजरे जमाने की फोटो कापी है क्योंकि गुजरा हुआ जमाना आता नहीं दुबारा हाफिज खुदा तुम्हारा।' और पंचायत सभा विसर्जित हो गयी।

स्रोत –

- www.google.co.in

मुंगेर के स्वतंत्रता सेनानी और खादी आन्दोलन

अंकित कुमार*
प्रो. (डॉ.) दीनेश प्रसाद कमल**

मुंगेर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक प्रमुख केंद्र रहा है, जहां कई वीरों ने देश की आजादी के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। प्रमुख सेनानियों में कैलाश राजहंस (तारापुर), अयोध्या प्रसाद सिंह (टेटिया बम्बर), और कमलेश्वरी राय शामिल हैं। मुंगेर के तारापुर में 15 फरवरी 1932 को 34 स्वतंत्रता सेनानी शहीद हुए थे।

मुंगेर के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी और योगदानः

कैलाश राजहंस : तारापुर प्रखंड के देवगांव निवासी, जो 100 वर्ष की आयु तक जीवित रहे और स्वतंत्रता संग्राम में अहम भूमिका निभाई।

अयोध्या प्रसाद सिंह (Tetia Bamber): इन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर अगस्त क्रांति में भाग लिया था और वेटनरी अस्पताल के लिए अपनी जमीन दान कर दी थी।

कमलेश्वरी रायः मुंगेर के एक प्रतिष्ठित स्वतंत्रता सेनानी।

रामफल मंडलः मुंगेर में इनकी प्रतिमा का अनावरण किया गया है।

तारापुर के शहीदः 15 फरवरी 1932 को तारापुर थाना परिसर में तिरंगा फहराने के दौरान अंग्रेजों द्वारा मारे गए 34 वीर सपूत, जिन्हें बिहार सरकार राजकीय सम्मान देती है।

मुंगेर क्षेत्र में बाबू श्री कृष्ण सिंह के नेतृत्व में भी स्वतंत्रता आंदोलन काफी सक्रिय रहा था। आर्थिक आधार को मजबूत बनाने के लिए गाँधीजी द्वारा रचनात्मक कार्य पूरे देश में चलाया गया। इसी रचनात्मक कार्य में चरखा, खादी ग्रामोद्योग तथा कुटीर उद्योग प्रमुख है। इनके माध्यम से गाँधीजी ने न केवल गुजरात में बल्कि सम्पूर्ण भारत में लोगों को आत्मनिर्भर बनने का संदेश दिया।

गाँधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में चरखा को महत्वपूर्ण माना। क्योंकि चरखे का इतिहास ग्रामीण स्त्रियों के जीवन के साथ जुड़ा हुआ है। मिलों के आगमन के पहले मनुष्य की आवश्यकता के कपड़े चरखे और करघे पर ही बनाये जाते थे। चरखा प्रायः स्त्रियाँ ही चलती थीं। इस जमाने में भी जब बापू ने चरखे के पुनरूद्धार की बातें सोची, तब स्त्रियों ने ही आगे आकर इस काम को पुनः उठाया। 1920 ई0 में भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई की बागडोर जब गाँधी के हाथों आयीं। लड़ाई के अस्त्र–शस्त्र जो आज तक चले आते थे, उन्हें बापू ने निकम्मा साबित किया और संसार को सत्याग्रह का अमोध अस्त्र दिया। सत्य और अहिंसा जिसका विरद था और चरखा उसका मूर्त स्वरूप। यह नया अस्त्र हजारों स्त्रियों की अहिंसात्मक युद्ध के मैदान में खींच लाया और लाखों स्त्रियों ने अपने घरों में चरखा चलाकर सारे भारत में अहिंसात्मक युद्ध का वातावरण निर्माण किया।[1]

बाबू श्री कृष्ण सिंह ने मुंगेर में घर–घर चरखा और खादी का प्रचार करने, विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के लिए धरना देने, छुआछूत की भावना मिटाने, मद्य–निषेध आन्दोलन को अग्रसर करने तथा पर्दा–प्रथा तोड़ने के कार्यक्रमों में महिलाओं की सच्ची लगन और त्याग भावना देखकर स्वतंत्रता संग्राम के पुरूष सैनिकों को भी बहुत बल और प्रेरणा मिली। राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'महात्मा गाँधी एवं बिहार' में लिखा है कि ''ग्रामीण स्त्रियों की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। महिला स्वयंसेविकाएं उनके घरों में जाती हैं और विश्वास प्राप्त करती हैं। वयस्क महिलाएँ भी गाँधीजी द्वारा खोला गया पाठशाला जिसे आश्रम कहा जाता था, उसमें आती थी और पर्दा की कठोरता धीरे–धीरे कम होने लगी थी। स्त्रियाँ पहले से अधिक मुक्त हवा में सांस ले रही हो ऐसा लगता था। उन्होंने चरखा चलाने के अतिरिक्त पढ़ना–लिखना भी सीखा। साथ ही महिलाओं ने ग्रामीण आयोजनों जैसे, रामायण पाठ तथा आश्रम की प्रार्थना आदि में खुलकर भाग लेने लगी थी।'

* शोधार्थी, UGC- NET, JRF इतिहास विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना
** प्राध्यापक, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना

चरखे के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी ने कहा था कि आगे आने वाली पीढ़ियाँ एक बात के लिए मेरे प्रति कृतज्ञ रहेगी और वह है – चरखे का पुनरूत्थान। चरखे के अतिरिक्त बापू ने और क्या–क्या देश को और मानवता को नहीं दिये? लेकिन उन सबमें सर्वोपरि उन्होंने चरखे को ही माना। अपने रचनात्मक कामों में चरखे की तुलना वे सूर्य से करते थे। वे कहते थे कि ''जैसे सूर्य के चारों ओर सारे ग्रह घूमते हैं, वैसे ही चरखे के चारों ओर देश–सेवा के सारे काम चलने चाहिए।'' इसलिए तो भारत के राष्ट्रध्वज में भी चरखा ही अंकित किया गया था। अब भी उसमें जो चक्र है, वह चरखे का भी प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए जिस चरखे को गाँधी जी के जीवन का मंत्र कहा जा सकता है, उसके अनेकानेक अर्थ निकाले जाते हैं, जो स्वाभाविक ही है।[2] खादी उन सभी बेकारों को कुछ पैसे घर बैठे देने वाला रोजगार है। यह उनके व्यर्थ बीतते हुए समय की कीमत है। सिर्फ चरखे को अपनाने से ही प्रत्येक व्यक्ति की औसत आमदनी सवाई बढ़ जाती है और वस्त्र के लिए तो कहीं भटकना ही नहीं पड़ता। सभी बैठे हुए लोग असहाय विधवाएँ और अनाथ हैं जिन्हें रोजगार मिल सकता है। इसलिए खादी की आमदनी से इतने लोगों की परवरिश होती है।[3] मजदूरों को खाने–पीने भर काफी मजदूरी मिल जाती थीं।

गाँधीजी ने खादी के उत्पादन एवं उपयोग को आवश्यक बताया था। उनका मानना था कि खादी के लिए अधिक उपयुक्त महिलाएँ ही हैं, क्योंकि वे शांति के प्रतीक हैं तथा खादी का अस्त्र चरखा अहिंसक हैं। स्त्रियों में स्वावलंबन, आजिविका, आर्थिक स्थिति में सुधार आदि के रूप में गाँधीजी ने चरखा को अपनाने का मंत्र दिया था। गाँधीजी ने महिलाओं को खादी पहनने तथा सूत काटने का सुझाव दिया था। नागपुर कांग्रेस के बाद स्वदेशी का प्रचार किया। 1921 के विजयवाड़ा कांग्रेस के प्रस्ताव के बाद बिहार आने पर दो लाख चरखा के लक्ष्य को पूरा करने में लग गया। सरला देवी ने छोटानागपुर क्षेत्र में तथा सावित्री देवी पटना, जमुई, मुँगेर एवं झरिया जाकर खादी का प्रचार किया। रामतनुक देवी मुजफ्फरपुर जिले में घूम–घूमकर खादी का प्रचार किया। 1922 में लीला सिंह, शारदा कुमारी देवी तथा श्रीमती शफी पूरे प्रांत में घूम–घूमकर स्वदेशी वस्त्र का प्रचार किया।[4]

15 जनवरी, 1922 ई0 को शफी मंजिल मुजफ्फरपुर में महिलाओं की एक जनसभा में लीला सिंह ने खद्दर तथा चर्खा अपनाने की अपील की। 18 जनवरी को श्रीमती शफी तथा शारदा कुमारी देवी मुजफ्फरपुर शहर में हिन्दू और मुसलमान औरतो के बीच खादी प्रचार करती रही। उन्होंने बड़े घराने की औरतों को कताई सिखाई तथा चरखा एवं खद्दर बेची। श्रीमती शफी ने स्वदेशी वस्त्रों के प्रोपगंडा प्रोग्राम में सघन दौरा किया था। 7 मई, 1922 ई0 को वे हायाघाट तथा विलासपुर गई। देहाती क्षेत्रों में उनके दौरों से ग्रामवासियों में नये उत्साह का संचार हुआ। महिलाओं ने इनकी सभाओं में बहुत सारे मूल्यवान गहने दे डाले। इस तरह बिहारी महिलाओं ने उत्साहपूर्वक खद्दर तथा चरखा को अपनाया।[5] 1920–21 में विन्ध्वासिनी देवी, भगवती देवी, प्रियंवदा देवी, सावित्री देवी जैसी प्रभूति महिलाएँ खादी धारणा करने लगी थीं तथा खादी कार्यकर्ती के रूप में तैयार हो रही थीं।[6] गाँधी कुटीर गाँव के गरीब स्त्रियों में चरखा का प्रचार करने में अत्यधिक सक्रिय थी। उनके सूत को खरीद कर उन्हें प्रोत्साहन देता था। प्रत्येक कतिन को महीना में 60 रूपये की आय हो जाती थी और इससे खासकर निस्सहाय विधवाओं को आजीविका का साधन मिल जाता था।[7]

वास्तव में खादी का कार्य वस्त्र स्वावलम्बन तथा संगठन को ध्यान में रखकर व्यावसायिक पद्धति पर चलाया जाता था। निश्चित रूप में एक अच्छी रकम मिलना, एक ऐसा आकर्षण था कि मध्यवर्ती परिवार के हजारों नर–नारियों का ध्यान अनायास ही इसकी विशेषताओं की ओर आकृष्ट होने लगा। औरतों को अपने घरों में बैठकर बिना बाजार में आये ही काम और उसके बदले कपड़ा और मजदूरी मिलने लगी। पर्दा–प्रथा को दूर करने में खादी के काम और विशेषकर चरखे ने महत्वपूर्ण योगदान दिया।[8]

संघ के कार्यकर्त्ता तथा कार्यकर्त्तियाँ कुलियों की तरह कन्धे और सिर पर रूई लेकर गाँव–गाँव घुमते थे। अधिकतर क्षेत्रों में लोग त्याग की भावना और विदेशी गुलामी से मुक्ति पाने की कामना से, अपने कन्धों और सिरों पर ही रूई और कपड़े ढ़ोते हुए फेरी करते थे।[9]

बेकारी, भूखमरी और बेरोजगारी से चरखा ही एक मात्र लोगों के इल्लत को बचाते हुए उनकी सारी जरूरतों को आंशिक या पूर्णतः पूरा करने का साधन था। सभ्य परिवारों की स्त्रियों के लिए तो यह सचमुच ही ऐसे अवसरों पर गीता सिद्ध हुआ।[10]

महिलाओं के प्रयत्न से चरखा अभियान को बल मिल रहा था। अगस्त महीने में मैरवा थाना में 6,000 चरखे और 136 करघे चलाये जा रहे थे। यहाँ लगभग 5,500 रूपये का सूत तैयार किया गया और 104 टन सूत खरीदा गया।[11] बिहार में चरखा और खादी की प्रगति के संबंध में प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी की 6

नवम्बर, 1930 ई0 की साप्ताहिक रिपोर्ट में कहा गया था, ''इस प्रान्त में हाथ से काते सूत से उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुयी है। लोग बड़ी संख्या में चरखा अपना रहे हैं और इसके विषय में बराबर पूछा जाता है कि सूत का वे क्या करें। संथाल परगना में प्रति महीना 100 मन सूत का उत्पादन हो रहा है। सारण जिलान्तर्गत एकमा थाना में नियमित रूप से 237, गुथनी थाना में 2997 चरखा और 50 करघा चलाये जा रहे हैं। मुंगेर जिलान्तर्गत बड़हिया थाना में चरखा की संख्या 300 तक पहुँच गयी है।''

रचनात्मक कार्यक्रम के सन्दर्भ में राँची में स्वदेशी सप्ताह मनाया गया। इसमें दो दिन विशेष रूप से चरखा और तकली प्रतियोगिता आयोजित की गई। एक दिन पुरूषों के लिए और दूसरे दिन महिलाओं के लिए। आदिवासी पुरूष और महिलाएँ प्रतियागिताओं में उत्साह के साथ भाग लेने आये। देवघर, सहरसा और पटना सिटी तथा अन्य स्थानों पर प्रतियोगिताएँ आयोजित की गई। देवघर में खादी उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए खादी बोर्ड की स्थापना की गई। वहाँ एक महिला सभा की भी स्थापना की गई। उसमें 100 महिलायें सदस्य बनी।[12]

प्रारम्भ में खादी स्वदेशी धर्म के रूप में सामने आया और बाद में विदेशी कपड़े के बहिष्कार के साधन के रूप में। बिहारी महिलाओं ने दोनों रूपों में खादी आन्दोलन में जमकर भाग लिया। 1930 ई0 के प्रारम्भ में खादी प्रचार कार्य मे श्रीमती हसन इमाम, उनकी लड़की महमूदा, शमी, माधुरी देवी, सुश्री गौरी दास आदि दिन–रात लगी रहती थीं। इसी सन्दर्भ में श्रीमती हसन इमाम ने शमी तथा सुश्री गौरी दास के साथ हजारीबाग, चम्पारण तथा मुजफ्फरपुर का दौरा किया था। श्रीमती हसन इमाम ने मुजफ्फरपुर में महिलाओं के एक समिति का गठन किया जिसका काम चरखा का प्रचार तथा काँग्रेस के अन्य कार्यक्रमों को बढ़ाना था।[13] श्रीमती इमाम के खादी प्रचार का मुख्य केन्द्र पटना था। उन्हीं दिनों श्रीमती मीरा देवी पटना, दानापुर तथा सारण जिले के कुछ स्थानों का दौरा किया और चरखा एवं खद्दर का जोरदार प्रचार किया।

बिहार में खादी प्रचार में राजेन्द्र प्रसाद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बिहार–उड़ीसा विधान परिषद् में नीलकांत चटर्जी ने 1924 ई0 को इस आशय का एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि 'सभी सार्वजनिक स्कूलों में छात्रों को चरखा द्वारा सूत कातने की शिक्षा देने की व्यवस्था की जाए।' पटना में दिसम्बर 1924 ई0 में खादी प्रदर्शनी लगाई गई। इसमें कुछ उच्च सरकारी अधिकारियों ने भी भाग लिया। जिसमें पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सर डौसन मिलर और बिहार के एक्जक्यूटिव कौंसिल के सदस्य सर ह्यूमैक फरसन भी शामिल थे। राजेन्द्र प्रसाद ने खादी प्रचार में हुए प्रगति का विवरण दिया। उन्होंने बेलगाँव काँग्रेस के अवसर पर अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनी आयोजित की।

बाबू श्री कृष्ण सिंह खादी आन्दोलन के प्रसार प्रचार के अतिरिक्त स्वयं बेचने के लिए भी दूर दूर तक जाते थे। समाज में महिलाओं की आत्मनिर्भरता से देश में स्वतंत्रता की भावना का प्रसार होगा, ऐसा मानते हुए वे कार्य कर रहे थे।

संदर्भ :

1. साहु, ध्वजा प्रसादः 'चरखा चलाने वाली बिहारी महिलाओं का सेवा–कार्य,' शिवपूजन सहाय (सं0), पूर्वोद्धृत, पृ0 203
2. गुप्त, देवेन्द्रः 'खादी का अर्थ क्या'? महिला चरखा समिति, रजत जयंती अंक, पटना, मार्च, 1965, पृ0 68
3. प्रसाद, राजेन्द्रः गाँधीजी की देन, पृ0 44
4. अमरेन्द्र कुमारः स्वाधीनता संग्राम में बिहार की महिलाएँ, पटना, 1998, पृ0 76
5. सर्चलाइट, 22 मई, 1922
6. सहाय, शिवपूजन (सं0): बिहार की महिलायें, पृ0 334–335
7. दत्ता, के0के0: बिहार में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, खण्ड–1, पृ0 418
8. झा, दिगम्बर (सं0): बिहार की खादी आन्दोलन और उसका विकास, पृ0 58–59
9. सिंह, कुमारी शीलाः महात्मा गाँधीः के रचनात्मक कार्यक्रमों में बिहारी महिलाओं का योगदान,पटना,1990,पृ0 98
10. झा, दिगम्बर (स0), बिहार का खादी आन्दोलन और उसका विकास, पटना, 1971, पृ0 60
11. बिहार प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी की सप्ताहिक रिपोर्ट, 26 दिसम्बर, 1930
12. दत्ता, के0के0: खण्ड–2, पृ0 9, 124–125
13. बिहार प्रदेश कांग्रेस समिति, 15 अगस्त, 1935 के सप्ताहांत का रिपोर्ट

◀◀ ▶▶

कबीर की कविता में लोक व्याप्ति

डॉ. पिन्टू यादव*

साहित्य और लोक में अटूट बंधन हैं लोक ने साहित्य को जीवन मूल्य दिया है तो वही साहित्य ने भी लोक को अमरता प्रदान किया है। सामाजिक उन्नति के लिये युगों से लोक और साहित्य का समवेत प्रयास अनवरत चलता रहा है। एक तरफ से लोक समाज को केन्द्र में रखकर व्यक्ति ने अपनी अभिव्यक्ति की तो दूसरी तरफ साहित्य ने उस संचित ज्ञान निधि को संरक्षण प्रदान किया। कोई भी साहित्य चाहे वही किसी भी युग का हो वह लोकधर्मिता से दूर जा ही नहीं सकता है और अगर वह ऐसा करेगा तो उसकी जन में प्रासंगिकता क्षीण हो जायेगी।

'लोक' शब्द का प्रयोग हिन्दी साहित्य में भी व्यापक एवं विशद् अर्थों में हुआ है। हिन्दी साहित्य में लोक का प्रयोग कहीं मृत्युलोक के संदर्भ में तो कहीं सम्पूर्ण संसार के व्यापक अर्थ में हुआ है और कहीं लोक शब्द वेद के प्रतिकूल लोक परंपरा का अर्थ देता है। इस अर्थ में लोक शब्द का प्रयोग संत काल में कई स्थानों पर हुआ है।[1]

इस प्रकार भारतीय साहित्य में प्रयुक्त 'लोक' शब्द के अनेक अर्थ मिलते हैं। कहीं लोक, इहलोक, परलोक, सातलोक आदि शब्दों की व्याख्या करते हुये स्थानीय अर्थ प्रस्तुत करते हैं, कहीं वेद परिपाटी और लोक परिपाटी के रूप में नाट्यधर्मी और लोकधर्मी के रूप में प्रयुक्त होकर शास्त्रेत्तर जनता में प्रचलित तथा उससे संपर्कित अर्थ देता है, तो कहीं लोक शब्द का अर्थ जनसामान्य से ही सिद्ध होता है। इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि जो लोक संस्कृति संस्कृत निष्ठता तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से मुक्त रहते हुये अपनी पुरातन स्थिति में विद्यमान है उसे लोक की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। वास्तव में लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक राष्ट्र का अमर स्वरूप है, लोक व्यवहारिक ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन में शास्त्रों का पर्यवसान है। अर्वाचीन मानव के लिये लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक की धात्री सर्वभूत माता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव यही हमारे जीवन का अध्यात्मशास्त्र है। इसका कल्याण हमारे मुक्ति का द्वार, निर्वाण का नवीन रूप है। लोक पृथ्वी, मानव इसी त्रिलोकी में जीवन का कल्याणतम रूप है।[2] लोक तत्व सभी मानवों के अन्दर विद्यमान रहते है और ये लोकतत्व कहीं प्रखर रूप में अभिव्यक्त होता है तो कहीं पर स्फुट के रूप में। लोक समाज का तात्पर्य उस समस्त प्रकार के मानवीय समाज से है जो अपने हृदय में मानवीय चेतना तथा लोक संस्कार संजोये हुए है। यह समाज कम शिक्षित तथा ग्रामीण है। वह समाज अभिजात्य तथा पांडित्य से बहुत दूर है तथा इस समाज में कृत्रिमता का अभाव तथा सहजता और सरलता का प्रायुर्य माना जाता है।

कबीर लोक में व्याप्त तमाम प्रचलित बातों और विश्वासों को स्वीकार नहीं करते बल्कि अपनी कसौटी पर परखते भी हैं। कबीर अंधविश्वास को दूर करने के लिये जिस मार्ग पर चले थे वह सहज सरल नहीं था। इसी कारण उनका पूरा जीवन अंधविश्वासों का विरोध करने में ही बीता था अपने मृत्यु के लिये मगहर जाना इसी अंधविश्वास को तोड़ने का ही काम था क्योंकि ऐसा माना जाता है कि काशी में मरने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। कबीर ने इस लोक व्याप्ति को खण्डित करते हुये कहा-

"लोका मति कै मोरारे लोका मति के भोरा रे।
जो कासी तन तजै कबीर, तो रामहिं कहा निहोरा रे।। टेक ।।

* पी—एच.डी., हिंदी विभाग, एम.एस. यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, गुजरात

तब हमें वैसे अब हम ऐसे, इहै जनम का लाहा ।।
ज्यूँ जल में जल पैसि न निकसै, यूँ दुरि मिलै जुलाहा ।।
राम भगति पार जाकौ हित चित, ताकौ अचिरज काहा ।।
गुर प्रसाद साथ ही संगति, जग जीते जाइ जुलाहा।"[3]

कबीर इस अंध विश्वास को तोड़ते ही नहीं बल्कि स्वयं उस राह पर चलकर भी दिखाते हैं। लोक में धर्म के नाम पर जो कुछ है वह सब सही है यह विवेक सम्मत नहीं है। धर्म वह है जो विवेक की कसौटी पर खरा हो तथा समाज के लिये कल्याणकारी हो। कबीर मानते हैं कि धर्म रूढ़ियों और अन्धविवासों का भी वहन करता है तथा समय के साथ धर्म के स्वरूप में भी बदलाव होता है।

कबीर जैसे सामान्य जुलाहे के लिये यह लोक धर्मी चेतना कोई मामूली नहीं थी इस लोक धर्म का निर्वहन करते हुये कबीर ने पूजा अर्चना कर्मकाण्ड, पाखण्डी जीवन पद्धति, एवं पुरोहितवादी रूढ़ियों को चुनौती की थी कबीर के लिये ईश्वर भी एक बुनकर ही है और उसकी यह दुनिया और मानवीय काया झीनी-झीनी बीनी चदरिया है। वे अपने जीवन के ताने-बाने को इस तरह बुनते हैं कि उसमें भक्ति का रस सराबोर हो उठता है।

"हरि मोर रहँटा मैं रतन पिअरिया।
हरि को नाम लै कातल बहुरिया ।।
छ मास ताग बरस दिन कुकुरी।
लोग बोले भल कातल बपुरी।।
कहै कबीर सूत भल काता।
रहँटा न होय मुक्ति कर दाता।।"[4]

कबीर लोक को विस्तार दे रहे थे उनका मुख्य उद्देश्य मनुष्य के मुक्ति की आकांक्षा थी। लेकिन मुक्ति ऐसी नहीं जिसमें पाखण्ड हो मुक्ति ऐसी जिसमें जीवन कर्म संलग्न हो।

"कबीर के यहाँ जीवन के कर्म से उनके धर्म का जीवन अलग नहीं है। वैसे ही उनके कवि-कर्म और जीवन-कर्म में अपूर्व एकता है। कबीर की जीवन जीने की कला ही उनकी कविता की कला बन गई है।"[5]

कबीर की कविता एक ऐसा ताना-बाना बुनती है जिसमें उसका अर्थ वृहत्तर संवेदन संसार को रचना है। इनकी कविता की यह विशेषता है कि वह शिष्ट और लोक काव्य के भेद को मिटाती है।

वह वाचिक संस्कृति की देन है और लोक प्रतिभा की सृजनशीलता का विलक्षण उदाहरण। वाचिक संस्कृति 'लोक' के अस्तित्व को नया आयाम देती है। यह साहित्य जब तक मौखिक रहता है तभी तक इसमें ताजगी तथा जीवन पाया जाता है। लिपि की कारा में कैद करते ही इसकी संजीवनी शक्ति नष्ट हो जाती है।[6] क्योंकि वह लोक-जीवन के अनुभवों से रची हुई है इसलिए जनता के जीवन और स्मृति में बसी हुई, है, इस कारण उनकी कविता की असंख्य पंक्तियाँ लोकोक्तियाँ बनकर लोक जीवन में प्रचलित हैं। उनकी कविता की मुख्य विशेषता यह है कि जनता केवल उसे पढ़ती और सुनती ही नहीं इसे जीती भी है। लोक साहित्य का ध्येय जनता के बौद्धिक विलास कभी न रहा है, न रहेगा। शिष्टजन भी लोक साहित्य का आस्वादन कर लौकिक अनुभूतियों का समाहार अपने व्यक्तित्व निर्माण में करने के लिए प्रयासरत रहता है। आदिम मनोवृत्तियाँ लोक साहित्य का आधार है, शिष्ट जन भी इसी मनोवृत्तियों का संचय कर लोक से शिष्ट बनने की प्रक्रिया की श्रृंखला को पूरा करते है। व्यक्ति की संस्कृति इस समूह की संस्कृति से अलग नहीं की जा सकती, जिसका वह सदस्य है। इसी प्रकार समूह संस्कृति को समाज की संस्कृति से अलग करना असंभव है। संस्कृति विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों का योग नहीं है, यह वास्तव में संबद्ध जाति की संपूर्ण जीवन पद्धति का प्रतिफलन है। अतः किसी समाज की संस्कृति को समझने का अर्थ है वहाँ के लोगों को समझना और इसके लिऐ कल्पनात्मक समझ की जरूरत है। आदिम समाज में प्रत्येक व्यक्ति सांस्कृतिक गतिविधियों में हिस्सा लेता था। किन्तु

जटिल समाजों में यह संभव नहीं है।[7] कबीर का समाज आदिम तो नहीं था, परन्तु मध्ययुगीनता का आवरण ओढ़े हुए आधुनिकता को मुहाने पर खड़ा जरूर था। उस समाज की सांस्कृतिक गतिविधियों से सहारे प्रारम्भिक आधुनिकता के मूल मंतव्य को समझा जा सकता है। आधुनिकता केवल समय बोधक शब्द नहीं, बल्कि मूल्य बोधक टर्म्स भी हैं।[8] कबीर की कविता 'समय और मूल्य' से प्रतिरोध की कविता है। 'प्रतिरोध की भावना' ही कबीर की कविता में आधुनिकता को परिभाषित करता है।

"संत मत के समस्त कवियों में कवि कबीर सबसे अधिक प्रतिभाशाली एवं मौलिक थे। उन्होंने कविता लिखने की प्रतिज्ञा करके कहीं पर कुछ नहीं लिखा है, न उन्हें पिंगल और अलंकारों का ज्ञान था तथापि उनमें काव्यानुभूति इतनी प्रबल एवं उत्कृष्ट थी कि वे सरलता के साथ महाकवि कहलाने के अधिकारी है।। सत्य यह है कि उनकी कविता में छन्द, अलंकार, शब्द शक्ति आदि गौण हैं तथा संदेश देने की प्रवृत्ति प्रधान है। इन संदेशों में आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा, पथ प्रदर्शन तथा संवेदना की भावना सन्निहित है।"[9]

कबीर की कविता प्रतिरोध की कविता है, लोक कल्याण की कविता है जिससे मानव प्रेम की लोक व्याप्ति समाज में जागृत होती दिखती है। उनके प्रेम और विरोध का ही प्रतिफलन है कि अध्यात्म और कर्म के रास्ते व्यक्ति की स्थापना करते हैं। कबीर की कविताओं में जो सांस्कृतिक चेतना दिखती है वह लोक व्याप्ति का व्यापक रूप लेकर आगे बढ़ती है।

संदर्भ-सूची

1. ओमप्रकाश शर्मा, हिन्दी सन्त साहित्य की लौकिक पृष्ठभूमि, पृ० 6-7
2. सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति विशेषांक, पृ० 65
3. कबीर ग्रन्थावली, सं० श्याम सुन्दर दास, पृ० 215
4. शुकदेव सिंह (संपादक), कबीर-बीजक नीलाभ प्र० इलाहाबाद, पृ० 119
5. श्याम सुन्दर, दास, कबीर ग्रन्थावली, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ०सं० 83
6. डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय, पूर्वोद्धत, पृ० 11
7. कृष्ण दत्त शर्मा इलिपट धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टि, आलोचना त्रैमासिक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली अंक 85, अप्रैल जून 1988, पृ० 48
8. पुरुषोत्तम अग्रवाल, अकथ कहानी प्रेम की कबीर और उनका समय राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ० 67
9. डॉ० नगेन्द्र, डॉ० हरदयाल (संपा०) हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर बुक्स, नई दिल्ली, संस्करण 2023, पृ०सं० 120

भारतीय चित्रकला में नारी चित्रण का विश्लेषण

नमिता गार्गी*
डॉ. प्रदीप कुमार निवोरिया**

शोध सारांश–

भारतीय चित्रकला या सृष्टि की किसी भी विधा की चर्चा हो बिना नारी के इसकी पूर्णता की कल्पना करना भी संभव नहीं। चित्रकला और नारी का संबंध अटूट है चित्रकला ही नहीं अपितु कला जगत में भी नारी शब्द बड़े ही वृहद रूप में लिया गया है। नारी को यदी कला के सृजन का आधार कहें तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। नारी चित्रण अभिव्यक्ती का कारक है तथा कला के लिए प्रेरणा श्रोत भी है, विशेष कर चित्रकला में। हमारे शास्त्रीय चित्र व्याकरण या चित्रों के सिद्धांतों में भी जितनें व्याख्यान प्रस्तुत है वह अधिकांशतः नारी सौंदर्य को ही प्रस्तुत करती है।

शब्द कुंजी - लौकिक, आध्यात्मिक, अतिशोयक्ति, अभिव्यंजना, सप्तमातृका, सृजन, माधुर्य।

प्रस्तावना -प्रारम्भ से हीं भारतीय चित्रकार प्रकृति के साथ ही नारी के विलक्षण सौंदर्य से प्रेरित होकर कला का सृजन करते आ रहे हैं नारी के नाना रूपों में उसके सौंदर्य को देखा जाता है। यदि हम प्राचीन भारतीय चित्र कृतियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो यह बात स्पष्ट हो जाती है और हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उसने नारी के रूपों का विस्तृत अध्ययन किया है, उसके सौंदर्य से आलोकित होकर अपनी कृतियों को जन्म देने में समर्थ रहा है। नारी में दो विशेष गुण ही आकर्षण का कारण है।

नारी सौन्दर्यचित्रण- चित्रांकन में नारी सौंदर्य या नारी चित्रांकन का स्थान किसी जीव में आत्मा की तरह है अगर चित्रकला से नारी को निकाल दिया जाए तो ऐसा प्रतीत होगा जैसे किसी शरीर से आत्मा निकाल ली गई हो। वह मृतप्राय: हो जाएगी। जब मानव को चित्रकला का कोई ज्ञान नहीं था तब भी उसने टेढी मेढी रेखाओं से सृष्टि की सृजन शक्ति नारी को अपना प्रेरक बिंदु माना कहीं जोगिनी दाई तो कहीं सप्तमातृका के रूप में कहीं देवी का प्रतीक मानकर तो कहीं शक्ति स्वरूपा मानकर उसका चित्रण अवश्य ही किया है। मध्यकालीन चित्र कृतियों में नारी सौंदर्य जो रीतिकालीन कृतियों के काव्यों पर आधारित है दर्शनीय है। नारी का यह रूप जिसमें सौंदर्य की अभिव्यंजना होती है विशेष रूप से श्रृंगारिक है। नारी के इस रूप में माधुर्य है, जो कलाविदों को अपनी और आकर्षित करता रहा है। प्राचीन युग से हीं मानव अपने जीवन को चित्र एवं अलंकरण से सुसज्जित करता आ रहा है। भारतीय विभिन्न धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथ भी इस बात की पुष्टि करते हैं तभी तो- मनुष्य ने अजंता, बाग़ गुफ़ा, एलोरा, एलिफेंटा, बादामी, सित्तनवासल, खजूराहों आदि क्षेत्रों में नारी के श्रृंगार, त्याग, ममता व शक्ति रूपों का चित्रण किया है। सभी धर्म चाहे बौद्ध धर्म हो, जैन धर्म हो या ब्राह्मण धर्म सभी ने नारी चित्रण को वरीयता दी है। मानव को अपने सौंदर्यपाश में सदा बांधे रखने वाली भारतीय नारी ने चित्रविदों को भी अपने सुंदर मुखरित रूप रश्मि से आलोकित किया है तथा आज भी कलाविदों के लिए आकर्षण का केंद्र बनी हुई है। हमारे ऋषि-मुनियों ने भी प्राचीन काल से ही नारी का दर्शन शक्ति के रूप में किया है इस दृष्टि से सारे तत्व में अन्तःशक्ति के रूप में नारी की परिकल्पना की गई है। सभी प्राणियों में शक्ति रूप में स्थित दुर्गा, ललित कला शक्ति रूप में सरस्वती तथा विश्व को संपदा देने वाली शक्ति लक्ष्मी के रूप में विद्यमान है। हम उसकी सौंदर्य सत्ता से विमुख नहीं हो सकते यह सिर्फ प्राचीन मूर्ति शिल्प, चित्रकला या साहित्य में ही नहीं अपितु आज वर्तमान में की गई आधुनिक कला के साथ भी उतनी ही मान्य है।

रूपात्मक स्वरूप- इन्हीं दो पहलूओं ने कलाकार को अपनी ओर केंद्रित करने में विशेष सफलता प्राप्त की है। वैदिक युग तथा उसके पूर्व में नारी को आदर्शमय रूप में प्रतिबिंबित किया गया। महाकाव्य काल में भी यह रूप आदर्श पूर्वक बना रहा तथा बौद्ध कालीन युग में भी नारी सौंदर्य हीं कला का केंद्र बिंदु रही।

नारी अपने विलक्षण सौन्दर्य के कारण जनमानस के हृदय की साम्राज्ञी बनी हुई है। मानव जीवन में नारी का अभाव एक बहुत बड़ी रिक्तता का अनुभव कराता है। फिर कलाविद उससे कैसे विमुख रहते। चित्रकार की दक्ष तूलिका ने तो नारी के सौंदर्य तथा रूप लावण्य को और अधिक आकर्षक बना दिया है। भारतीय नारी - श्रृंगार की प्रतिमूर्ति है। मानव को अपने सौंदर्यपाश में सदा बांधे रखनें वाली भारतीय नारी

* शोधार्थी, एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह
** निर्देशक (विभागाध्यक्ष), एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह

ने चित्रविदों को भी अपने सुंदर मुखरित रूप रश्मि से आलोकित किया है तथा आज भी कलाविदों के लिए आकर्षण का केंद्र बनी हुई है और न सिर्फ चित्रकला में अपितु अन्य कलाओं में भी पर्याप्त स्थान पाया है।

भारतीय कला का आधार धर्म की व्यापक्ता है। भारत में मध्यकाल का समय धार्मिक आंदोलनों का रहा। निर्गुण उपासना से लोगों को आत्म संतुष्टि नहीं मिली अंत में सगुणोंपासना का प्रसार हुआ और धार्मिक आस्था को स्थिरता प्रदान करने के लिए विभिन्न सौंदर्यमय भव्य मंदिरों का निर्माण हुआ। पूजा या उपासना की यह नवविधि अत्यंत अलंकारिक एवं चित्रमय थी जिसके फलस्वरूप एलोरा एलिफेंटा की गुफा के सौन्दर्ययुक्त विलक्षण मंदिरों का निर्माण हो सका। नारी पुरुष के अनेक मुद्राओं का विलक्षण रूप यहाँ चित्रित है। भित्ति चित्रों में प्रतिमाओं में नारी के छलकते सौंदर्य से परिपूर्ण रेखांकन पैरों तथा सुंदर अलंकरण से युक्त छवि है। खजुराहो जो अपने सामाजिक और भोगात्मक मूर्ति शिल्प के लिए विशेष रूप से जानी जाती है प्रमुखतः नारी अंकन या नारी मूर्ति शिल्प के लिए विश्वप्रसिद्ध है ।

गुणात्मक स्वरूप- नारी के गुणात्मक सौंदर्य में सौम्य और रौद्र भावों की प्रधानता है दोनों के मिश्रण से त्रिगुणात्मक शक्तियों का जन्म होता है सत्, रज् और तम् इन्हीं तीनों गुणों की प्रतीकात्मक रूप तीन देवियां है सत् स्वरूपा सरस्वती, रज् स्वरूपा लक्ष्मी तथा तम् स्वरूपा शक्ति या काली। मनीषियों के इस आध्यात्मिक चिंतन का प्रभाव भारतीय कलाविदों पर भी पड़ा और इस चिंतन को आधार मानकर कलाकारों ने अमूर्त भावनाओं को अपनी कृतियों के माध्यम से मूर्त रूप प्रदान कीया। चित्रकार के मन का कल्पित रूप नारी के नाना स्वरूपों में प्रस्फुटित हो आज हमारा मार्ग प्रदर्शित कर रहे हैं।

नारी का यथार्थ रूप जो हमारे समक्ष उद्धृत होता है इसमें सौंदर्य और गुण दोनों ही विराजमान है निसंदेह दोनों मिलकर नारी को एक विलक्षण व अलौकिक रूप प्रदान करते हैं जिसे रूप आकार की कृतियों में देखकर मन प्राण का अविरल स्वर थम जाता है। नारी के रूपात्मक गुण एवं गुणात्मक गुण के अलावा भारतीय कला साहित्य और अध्यात्म में नारी के कई रूपों का विवरण विशेष उल्लेखनिय है -जैसे नारी का मातृत्व रूप तथा नारी शक्ति स्वरूप

नारी का मातृत्व रूप में चित्रांकन। नारी जीवन का लक्ष्य मातृत्व की प्राप्ति ही है, नारी जीवन पर्यंत अपूर्ण रहती है यदि उसे मातृत्व पद न प्राप्त हुआ हो। समकालीन कलाकृतियों में भी नारी को मातृ शक्ति के रूप में अंकित किया गया है। सैन्धव कालीन पात्र खंडों पर चित्रित मानव आकृतियों और टिकरों से उसके मातृत्व सत्तात्मक होनें का पता चलता है। अजंता की गुफा चित्रों में मातृत्व की सुंदर एवं आदर्श स्वरूप का चित्रांकन देखने को मिलता है। यहाँ तथागत माता का सुंदर चित्र है, मायादेवी स्वप्न और गर्भ में श्वेत हाथी के प्रवेश का दृश्य अंकित है । इस प्रकार नारी के अनेक रूपों में श्रेष्ठ मातृत्व रूप भी भारतीय चित्रकला का विषय रहा है। पहाड़ी शैली के रियासतों चित्रांकनों में दैनिक जीवन के अनेक चित्रण प्राप्त हुए हैं, जिसमें नारी के मातृत्व का चित्रांकन दर्शनीय है। माता शिशु विषय पर अनेक चित्र देखने को सुलभ है, शिशु को पीठ पर लादे हुए, गोद में लेकर शिशु को दुग्धपान कराते हुए, शिशु के साथ आनंद लेते हुए चित्रित किए गए हैं जिसमें नारी सौंदर्य के साथ ही साथ मातृत्व की झलक मिलती है जो नारी के आदर्शमय रूप को अभिव्यक्त करती है।

भारतीय नारी शक्तिस्वरूप है इस तथ्य से हम कभी भी विमुख नहीं हो सकते अतीत में सैन्धव कालीन प्राप्त सामग्रियों में भी यह बात स्पष्ट हो जाती है कि नारी को शक्ति का प्रतिरूप मानते आ रहे हैं नारी सृजन की क्षमता से युक्त है और यह शक्ति के बिना संभव नहीं है इसीलिए मानव विभिन्न टिकरो और मुद्राओं में नारी को शक्ति देवी मानकर उसकी आराधना करता आ रहा है। चित्रों में उकेरे गए नाना रूपों में शक्ति की अनेक मुद्राएं भारतीय जनमानस में नारी के पवित्र भावना को अभिव्यक्त करता है। प्राचीन युग में तो नारी को देवी स्वरूप माना गया था तभी तो दुर्गा सप्तशती में कहा गया है- या देवी सर्वभूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता। हमारे ऋषि-मुनियों ने भी प्राचीन काल से ही नारी का दर्शन शक्ति के रूप में किया है। इस दृष्टि से सारे तत्व में अन्तःशक्ति के रूप में नारी की परिकल्पना हमारे आध्यात्म का आधार है सभी प्राणियों में शक्ति रूप में स्थित दुर्गा, ललित कला शक्ति रूप में सरस्वती तथा विश्व को संपदा देने वाली शक्ति लक्ष्मी के रूप में विद्यमान है।

इस तथ्य से भी विमुख नहीं हुआ जा सकता कि कला को आत्मानंद की अनुभूति कराने वाली शक्ति को नारी का प्रतिरूप कहा गया है। यही नहीं नारी को सृष्टि की आधारशिला ही माना गया है। नारी अपने विभिन्न स्वरूपों में तथा विभिन्न नामों से अभिहित की गई है नाना संज्ञा से पुकारे जाने वाली भारतीय नारी के पीछे उसके कर्म की शक्ति है मात्र शारीरिक सौंदर्य ही नारी को आदर युक्त स्थान दिलाने में सक्षम नहीं है, बल्कि नारी अपनें सौन्दर्य के साथ ही साथ अपने विलक्षण गुणों के कारण ही पूज्य बनी हुई है। भारतीय वांग्मय ऐसे अनेक दृष्टांत से भरे पड़े हैं। नारी के विशेष गुणों के कारण ही उसे आदिशक्ति का प्रतिरूप माना गया है तभी तो देवी के रूप में पूजित है और देवी भागवत जैसे ग्रंथ की रचना में नारी का आदर्श एवं पवित्र शक्ति के रुप में उसका चित्रण किया गया है। चित्रकला में नारी को आज ही नहीं आदिकाल से ही या यह कहें की हर काल मे विशेष स्थान दिया गया है। धर्म शास्त्र नीति एवं लालित्य युक्त ललित साहित्य, काव्य सभी में नारी का पावन पवित्र सौंदर्य का चित्रण है ।

निष्कर्ष- विभिन्न कथा ग्रंथों, काव्य ग्रंथों, पौराणिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथों पर आधारित असंख्य चित्रों की रचना की गई जिसमें नारी की भाव-भंगिमा अपना विशेष महत्व रखती है जहां एक और बाल्मीकि और व्यास की ग्रंथ चित्रों में नारी का आदर्शमय रूप है वही केशव बिहारी आदि श्रृंगारिक कवियों के ग्रंथों में नारी का सौंदर्यमय, श्रृंगार झलकता है। राधा कृष्ण के पावन पवित्र रूपों में भी नारी की श्रृंगारिक अभिव्यंजना दृष्टिगत होती है जिसमें ऐसे श्रृंगारिक रूप की कल्पना की गई जो लालित्य एवं लावण्य से परिपूर्ण है। नारी का स्थान हमारी संस्कृति में भगवान के तुल्य समझा जाता है और नारी चित्रण से सुंदरता तथा शुभता का प्रदर्शन किया जाता रहा है। नारी सौंदर्य से परिपूर्ण है। सुंदरता का प्रतीक है। फिर चाहे वह मां शक्ति का रूप हो, मां काली का या विद्या-कलाओं की देवी सरस्वती का, अप्सराओं या सामाजिक चित्रण हो इन सब का प्रतिनिधित्व नारी चित्रण द्वारा ही होता है विभिन्न कालखंडों में प्रचलित चित्रकला में यह हमें प्रतिलक्षित होता है। संस्कृत साहित्य में भी जितने बड़े काव्य प्रस्तुत हुए हैं उनमें मुख्य रूप से नारी चित्रण तथा नारी सौंदर्य की ही व्याख्या मिलती है। विभिन्न काल खंडो में प्रमुख्तया किसी विशेष देव या उपासक की मूर्ति या चित्रकला की गई, पर उसे भी पूर्णता नारी सौंदर्यत के साथ हीं प्राप्त हुई जैसे अजंता में देखा जाए तो वस्तुतः वहाँ भगवान बुद्ध की जातक कथाएं एवं बुद्ध के जीवन से जुड़ी विभिन्न कथाएं वर्णित है पर इसे सुंदर और आकर्षक बनाए रखने के लिए यहां भी नारी चित्रण प्राप्त होते है। इस प्रकार खजुराहो में नारी के चित्रण में केश सज्जा से लेकर वस्त्र आभूषण एवं शरीर के कटाक्ष को बहुत ही सहज रूप में प्रस्तुत किया गया है ऐसा ही उदाहरण हमें अन्यत्र जगहों से भी प्राप्त होते है।

नारी का स्थान यहां सिर्फ अलंकरण या सौंदर्य से ही नहीं है। हमारी संस्कृति में नारी का स्थान देव तुल्य समझा जाता है नारी को सिर्फ प्रेजेंटेबल या सौंदर्य के रूप में प्रस्तुत करना और सुख की कामना नहीं की जाती है यहां नारी को शुद्धता और जननी के रूप में देखा जाता है। जगतजननी अर्थात जगत का सृजन करने वाली अगर जगत जननी मौजूद ही ना हो तो जगत की कल्पना करना भी व्यर्थ है जहां जगत जननी जरूरी है वही जगत जननी की मौजूदगी ही सुंदरता भी है क्योंकि जगत जननी सिर्फ जन्म नहीं देती उसके पालन का दायित्व भी निभाती है। जैसा कि किसी नारी के स्वभाव में निहित होता है संभालना, सहेजना और उच्चता की ओर उच्चता के लिए प्रयासरत रहना। अपनें इन्हीं आदर्शो के कारण नारी नें भारतीय दर्शन मे अपना विशेष स्थान प्राप्त किया है तथा इस चिंतन का प्रभाव विश्व भर के दर्शनशास्त्र और कला जगत में भी देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ रीता प्रताप, भारतिय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 29 संस्कारण, 2018
2. मागो, प्राण नाथ, भारत की समकालीन कला एक परिप्रेक्ष्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, तीसरी आवृति 2012
3. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय चित्रकला का इतिहास, मित्रा प्रकाशन, इलाहाबाद ,1963
4. नायक, लक्ष्मी नारायण, कला सैद्धांतिक, द्वितीय संस्कारण 1994
5. समकालीन कला, अंक 17, 1996, ललित कला अकादमी
6. समकालीन कला, अंक 43, 2000, ललित कला अकादमी
7. समकालीन कला, अंक 29, 2020, ललित कला अकादमी
8. डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, भारतीय चित्रकला में नारी अंकन
9. https://avatsara.worrdpress.com
10. https://hindi.matrubharti.com

डिजिटल युग में नगरीय महिलाएँ और AI: अवसर बनाम खतरे का समाजशास्त्रीय विमर्श

डॉ. स्वर्णलता कुमारी*

सारांश

कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी AI ने 21वीं सदी के शहरी समाज की संरचना को मूल रूप से बदल दिया है। नगरीय महिलाएँ इस बदलाव के केंद्र में हैं। महिलाएँ सभी कार्यों में AI की मदद लेना शुरू कर दिए हैं। AI के माध्यम से अपने समय और पैसे दोनों की बचत करने में सफल हो रहे हैं। नगरीय महिलाएँ बहुत हद तक इससे अवगत हो गई हैं। ऑनलाइन शॉपिंग, ऑनलाइन ट्रांसफर मनी, ऑनलाइन स्टडी, ऑनलाइन ही ग्रॉसरी का सामान खरीदना, जिस कार्य से संबंधित जानकारी लेनी हो उससे संबंधित ऐप डाउनलोड कर उससे सीखना आदि कार्य अब महिलाएँ घर बैठे आसानी से कर पाती हैं। पहले इस पर अधिकार पुरुष वर्ग और युवा वर्ग के विद्यार्थियों तक ही था, पर नगरीय महिलाएँ इनसे सहायता लेकर बहुत कुछ सीख ली हैं। महिलाओं को सृजनात्मक कार्यों में अधिक रुचि देखी गई है, किंतु AI के प्रयोग से उनके अंदर की क्रिएटिविटी कहीं खोती जा रही है और वे उन पर आश्रित होते जा रहे हैं। AI ने कार्य को जहाँ आसान बनाया है वहीं इसने महिलाओं के जीवन में कई मुश्किलें भी बढ़ा दी हैं।

प्रस्तुत आलेख डिजिटल युग में नगरीय महिलाओं पर AI के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करता है। अध्ययन यह दर्शाता है कि AI जहाँ आर्थिक और शैक्षणिक सशक्तिकरण के नए अवसर दे रहा है, वहीं डिजिटल विभाजन, लैंगिक पूर्वाग्रह और रोजगार-संकट जैसे खतरे भी उत्पन्न कर रहा है। इससे जुड़े क्रमशः दो प्रमुख उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं को भी अध्ययन में शामिल किया गया है।

उद्देश्य

- नगरीय महिलाओं के जीवन पर AI द्वारा उत्पन्न अवसरों– आर्थिक, शैक्षणिक और सामाजिक सशक्तिकरण का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना।
- AI से उत्पन्न खतरों जैसे डिजिटल विभाजन, रोजगार असुरक्षा का अध्ययन कर सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पनाएँ

- AI उपकरणों तक पहुँच और AI साक्षरता नगरीय महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।
- AI आधारित लैंगिक पूर्वाग्रह नगरीय महिलाओं के लिए डिजिटल युग में नई सामाजिक असमानताएँ उत्पन्न कर रहा है।

मुख्य शब्द: महिला सशक्तिकरण, डिजिटल विभाजन, सृजनात्मकता, लैंगिक पूर्वाग्रह

भूमिका

"तकनीक समाज को बदलती है और समाज तकनीक को आकार देता है।" (Manuel Castells, The Rise of the Network Society, 2010, P. 05)

21 वीं सदी का भारत "डिजिटल इंडिया" के नारे के साथ AI क्रांति के मुहाने पर खड़ा है। हम जिस दौर में जी रहे हैं उसे इतिहासकार ने "चौथी औद्योगिक क्रांति" का नाम दिया है। AI अर्थात् आर्टिफिशियल

* अतिथि प्राध्यापिका (Visiting Faculty), समाजशास्त्र विभाग, जे.डी. विमेंस कॉलेज, पाटलिपुत्र यूनिवर्सिटी, पटना

इंटेलिजेंस जिसको हम हिंदी में "कृत्रिम बुद्धिमत्ता" से जानते हैं। हम कृत्रिम का अर्थ उस वस्तु से समझते हैं जिसे मानव द्वारा निर्मित किया गया होता है। यह AI अर्थात् कृत्रिम बुद्धिमत्ता मानव द्वारा निर्मित एक डिजिटल उपकरण है जो आधुनिक समाज को एक नई ऊँचाई और विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। AI की विशिष्टता सर्वप्रथम पुरुषों को और फिर युवा वर्ग के विद्यार्थियों ने समझा, अब नगरीय महिलाएँ भी इसे भली-भाँति समझ रही हैं।

इसके प्रयोग से महिलाओं का आत्मविश्वास भी बढ़ा है। इसके माध्यम से नगरीय महिलाएँ नये-नये तकनीक, भाषा, रोबोटिक्स तथा चिकित्सा से संबंधित ज्ञान को बढ़ा रही हैं। वर्तमान तकनीक और प्रौद्योगिकी युग में AI को 'इंटेलिजेंट एजेंट' का नाम दिया गया है। जॉन मैकार्थी द्वारा इस आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का आविष्कार किया गया जो मनुष्य के जैसा ही सोच सके और कार्य कर सके। किंतु इसमें भावनात्मक रूप से व्यक्ति से जुड़ पाना संभव नहीं है। यही कारण है कि AI से हम बस वही ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं जिसके लिए व्यक्ति स्वयं के दिमाग का प्रयोग करता है। AI किसी व्यक्ति का स्थान नहीं ले सकता। नगरीय महिलाएँ जहाँ इसके प्रयोग से स्वयं को सशक्त बना रही थीं वहीं AI में भावनात्मक जुड़ाव नहीं होने के कारण उसने किसी की तस्वीर, आवाज का गलत प्रयोग कर उनके जीवन को अंधकार में डाल दिया है जिससे महिलाएँ कई प्रकार से शोषण का शिकार हो रही हैं। अश्लील टिप्पणियाँ, फेक प्रोफाइल, साइबर स्टॉकिंग आदि कई ऐसी समस्याओं से नगरीय महिलाएँ आम तौर से जूझ रही हैं। इस प्रकार की डिजिटल हिंसा महिलाओं की स्वतंत्रता, सम्मान और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही है। (भारद्वाज, डिजिटल समाज और महिला सुरक्षा, 2022, P. 54)

अब महिलाएँ इस डिजिटल युग में AI के माध्यमों से अपनी पहचान बना रही हैं तथा सामाजिक मुद्दों पर खुलकर अपने विचार भी प्रकट कर रही हैं। इससे महिलाओं को सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त बनने का अवसर प्राप्त हुआ है। (Sen, Development as Freedom, 1999, P. 87)

अवसर के विभिन्न आयाम

1. आर्थिक स्वायत्तता का विस्तार :

- ***श्रम बाजार का लोकतंत्रीकरण -***

पहले किसी भी कार्य के लिए डिग्री, अंग्रेजी भाषा, नगर आदि की जरूरत होती थी, किंतु AI के माध्यम से ग्लोबल नौकरी पाने की सुविधा घर से ही प्राप्त हो रही है। फ्रीलांसिंग (स्वयं मालिक-स्वयं कार्यकर्ता) जॉब में चैट जी पी टी के माध्यम से विदेशी ग्राहकों के लिए ईमेल लिखना, ग्रामरली के माध्यम से अंग्रेजी में सुधार करना, कैनवा टूल्स से किसी के फोटो को डिजाइन करना, एनिमेट करना, फोटो को साफ-सुथरा करना, शानदार वीडियो बनाना आदि एक अनोखा अवसर प्रदान कर रहा है जीविकोपार्जन के लिए। नगरीय महिलाएँ भी इस अवसर से लाभान्वित हो रही हैं और अपना जीविकोपार्जन कर रही हैं। (बिहार के दरभंगा की 12वीं पास लड़की अब Upwork से $400 रू / महीने कमाती है, रीना पटेल, वर्किंग द नाइट शिफ्ट, 2010, P. 47)

- **सूक्ष्म उद्यमिता को बढ़ावा**

किसी भी व्यापार की शुरुआत करने के लिए पूँजी, दुकान, स्टाफ, स्थान की जरूरत होती थी किंतु AI के माध्यम से 'Zero Investment Business' संभव हो रहा है। उदाहरण के लिए मीशो रिसैलिंग में AI के माध्यम से प्रोडक्ट फोटो का बैकग्राउंड हटाकर, ChatGPT से आकर्षक विवरण बनाकर उसे व्हाट्सएप पर बेचने का कार्य किया जा रहा है। AI के टूल्स Canva, Chatgpt, Shopify द्वारा बिना किसी टेक्निकल बैकग्राउंड के महिलाएँ ऑनलाइन बुटीक, कोचिंग, कंटेंट बिजनेस आदि कर रही हैं।

- **वित्तीय समावेशन**

AI-बेस्ड क्रेडिट स्कोरिंग से उन महिलाओं को भी लोन मिलना आसान हो गया है जिनके पास गिरवी रखने के लिए कुछ नहीं होता अर्थात् बिना कागज के ही फोन पे / गूगल पे सही डाटा उनका कोलेटरल बन जाता है और 50,000/- रुपये तक लोन मिलना संभव हो गया है। (RBI रिपोर्ट ऑन करेंसी एंड फाइनेंस, 2024, P. 112)। जीविका दीदी जो बिहार की 1.3 करोड़ महिलाएँ SHG से जुड़ी हैं, अब उन्हें AI के माध्यम से पता चलता है कि किस प्रोडक्ट का डिमांड ज्यादा और किसका कम है।

- **गिग इकोनॉमी**

ये AI का एक ऐसा टूल्स है जिसके माध्यम से तुरंत कार्य के पैसे प्राप्त किए जाते हैं जिसमें Ola-Uber, Zomato-Swiggy डिलीवरी वर्कर, अर्बन कंपनियाँ आदि प्लेटफार्म द्वारा AI मैचिंग से महिलाओं को फ्लेक्सिबल काम मिल रहा है। इसमें AI तय करता है किसकी बुकिंग का कितना रेट है उसे स्वीकार करें या न करें। अक्सर ज्यादा रेट वाला बुकिंग लेकर कम पैसे वाले कार्य नहीं करने को अलर्ट करता है। निगरानी पूँजीवाद श्रमिक का केवल शोषण करता है। (शौशना जुबॉफ, द एज ऑफ सर्विलांस कैपिटलिज्म, 2019, P. 95)

2. शैक्षणिक कौशल और गतिशीलता

AI के Tutor Apps द्वारा पर्सनल ट्यूटर प्रदान किये जाते हैं। अक्सर महिलाओं की शादी के बाद पढ़ाई बंद हो जाती थी किंतु अब AI के विभिन्न ऐप जैसे यूट्यूब, डुलिंगो, खान एकेडमी पर नगरीय महिलाएँ AI बेस्ड पर्सनलाइज्ड लर्निंग से अपनी गति से कोडिंग, मार्केटिंग डिजाइन, भाषा पर अपनी पकड़ बनाना खासकर अंग्रेजी भाषा बोलना और पढ़ना सीख रही हैं। डुलिंगो AI सादा मुफ्त पढ़ाई की सेवा देता है जिसमें ट्यूटर से कितने भी प्रश्न पूछें वे डांटते नहीं और इसमें नगरीय महिलाएँ खाना बनाने के बाद भी रात के ग्यारह बजे भी पढ़ सकती हैं। चैटजीपीटी के द्वारा दसवीं के साइंस के पढ़ाई को भी आसानी से भाषा में समझाया जाता है जिससे कामकाजी माताओं का तनाव कम हुआ है। इसमें किसी भी भाषावादी होने से नगरीय महिलाओं को कोई परेशानी नहीं होती है। केन्वा AI, मीशो रिसैलिंग, चैटजीपीटी, ग्रामरली डिजिटल मार्केटिंग इन सबके द्वारा नगरीय महिलाएँ मैट्रिक पास भी और ग्रेजुएट भी सभी जीविकोपार्जन कर रही हैं। (SHG जीविका दीदी इसी का जीवंत उदाहरण है)। AI से Skill सीखने का काम अब महिलाएँ घर बैठे पढ़ाई कर रही हैं। (Coursera पेपर 62% भारतीय महिलाएँ हैं, अजय अग्रवाल, जोशुआ गांस, प्रेडिक्शन मशीन्स: द सिंपल इकोनॉमिक्स ऑफ आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, 2017, P. 287)

3. सार्वजनिक जीवन में भागीदारी

सुरक्षा : महानगरों जैसे दिल्ली, मुंबई आदि शहरों में AI इनेबल सीसीटीवी से हॉटस्पॉट आइडेंटिफाई किए जाते हैं। सेफ्टीपिन ऐप क्राउड सोर्स डाटा कलेक्ट करता है अर्थात् जनता से ही ये ऐप सारी जानकारियाँ प्राप्त कर सेफ्टी स्कोर बताती है जिससे कहाँ पर महिलाएँ असुरक्षित हो सकती हैं इसकी प्रेडिक्टिव पुलिसिंग से सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं की सुरक्षा बढ़ी है। (शौशना जुबॉफ, द एज ऑफ सर्विलांस कैपिटलिज्म, 2019, P. 312)

4. घरेलू श्रम का पुनर्गठन

महिलाएँ घर का काम करते-करते थक जाती हैं, अब इसके साथ-साथ वे ऑफिस भी जाती हैं। ऐसी परिस्थिति में घर का जो जरूरत का सामान होता है उसे खरीदने के लिए बाहर जाने का समय नहीं मिल पाता। यहाँ AI के बेहतरीन रूप बिग बास्केट, ब्लिंकिट, मिंत्रा, अमेजन, फ्लिपकार्ट आदि नगरीय महिलाओं के लिए ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। घर के सारे कामों की जिम्मेदारी महिलाओं की होती है। ऑफिस आकर बच्चों को होमवर्क कराने के लिए खान मिशन AI उपलब्ध है। बच्चे को घर पर छोड़कर जॉब पर जाने में डर होती थी किंतु सीसीटीवी, स्मार्ट लॉक के द्वारा अब वे आशापूर्ण होकर ऑफिस जा सकती हैं। AI के उपकरणों का घर में प्रयोग करने से नगरीय महिला का 3-4 घंटे रोज बच रहा है। इसी वजह से नगरों में कामकाजी महिलाओं की

संख्या में 17% वृद्धि हुई है। (IMF, Nazeer, Kalpana Kochhar, AI and the Future of Women's Work, 2023, P. 15)

खतरे का आयाम

1. डिजिटल विभाजन का नया रूप

आज का युग डिजिटल युग है। समाज में जिन महिलाओं के पास Internet, Phone, Computer, AI है, जिन नगरीय महिलाओं को तकनीकी ज्ञान है वे आज आगे बढ़ जाएँगी और जिनको इसका ज्ञान नहीं है ये आज के इस डिजिटल युग में पिछड़ जाएँगी। नया खतरा "AI Divide" के रूप में बढ़ रही है। NSSO 2023 के अनुसार नगरीय महिलाओं में केवल 31.0% महिलाएँ ही AI टूल्स से परिचित हैं। इससे नए-नए स्किल रहेंगे तो जॉब रह पाएँगी नहीं तो नगरीय महिलाएँ बेरोजगार हो जाएँगी। डीपफेक ब्लैकमेल से नगरीय महिलाओं को जिन्हें इसकी जानकारी न हो उसे ब्लैकमेल किया जा सकता है ऐसे में नगरीय महिलाएँ डिप्रेशन का शिकार हो सकती हैं। इससे नगरीय महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक, सुरक्षा तीनों प्रकार का खतरा हो सकता है। (भारद्वाज, डिजिटल समाज और महिला सुरक्षा, 2022, P. 54)

2. रोजगार पर संकट

AI के BPO, Data entry, customer support जैसे क्षेत्रों में जहाँ महिलाओं की भागीदारी ज्यादा थी, वहाँ AI के माध्यम से जॉब्स स्वचालित कर रहे हैं।

3. जेंडर बायस का पुनरुत्पादन

महिलाओं और पुरुषों में लैंगिक पूर्वाग्रह बढ़ता ही जा रहा है। समाज के साथ-साथ अब AI भी असमानता उत्पन्न कर रहा है। AI भी समझ जाता है कि ये पितृसत्तात्मक समाज महिलाओं के प्रति बायस है। इसलिए यह भी महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा कम महत्व देते हैं। एक ही कार्य के लिए बराबर डिग्री होने पर भी पुरुषों का सिलेक्शन और महिलाओं का नहीं होता है। (हायरिंग AI में पुरुषों को प्राथमिकता मिलना, क्रेडिट स्कोरिंग में भेदभाव ये समाज के पुराने रूढ़ियों को ही बढ़ाते हैं)। पूर्वाग्रह वह चश्मा है जिससे दुनिया गलत दिखती है। (सिमोन द बोउवार, The Second Sex, 1949, P. 16)

4. निजता और सुरक्षा का हनन

डीपफेक,AI-बेस्ड स्टॉकिंग, ऑनलाइन हरासमेंट के नए तरीके सामने आए हैं। AI से नकली अश्लील फोटो, वीडियो से महिलाओं की नौकरी चली जाती है, शादी टूट जाती है। उन्हें ऑनलाइन हरासमेंट ऐसे करते हैं कि वे आत्महत्या तक करने को मजबूर हो जाते हैं। डिजिटल फुटप्रिंट से महिलाओं की असुरक्षा बढ़ी है।

5. श्रम बाजार का स्त्रीकरण और विखंडन

- **Automation का खतरा :** BPO, टेली-कॉलिंग, डाटा एंट्री इन क्षेत्रों में 60% से अधिक महिलाएँ हैं। McKinsey की रिपोर्ट कहती है कि 2030 तक भारत में 12 मिलियन महिला जॉब्स AI से प्रभावित होंगी।
- **गिग वर्क की अनिश्चितता :** AI एल्गोरिदम रेटिंग गिरते ही काम मिलना बंद हो जाएगा। मैटरनिटी लीव, PF जैसी सुरक्षा नहीं मिलती।

6. एल्गोरिथमिक बायस अदृश्य भेदभाव

अमेजन ने 2018 में अपना हायरिंग AI बंद किया क्योंकि वह महिला रिज्यूम को रिजेक्ट कर रहा था। AI ने पिछले 10 साल का मेन डोमिनेंट डाटा सीखा था। क्रेडिट, मैट्रिमोनियल ऐप्स, हेल्थ इंश्योरेंस में भी यही बायस दिखता है। तकनीक तटस्थ नहीं होती। ये उस समाज का आईना है जो इसे बनाता है। (अमिता गुरुमूर्ति, आईटी फॉर चेंज रिपोर्ट 2022, Page 8)

7. मानसिक स्वास्थ्य और परफेक्ट वूमेन का दबाव

इंस्टाग्राम के AI फिल्टर्स, प्रॉडक्टिविटी AI ऐप्स ये सब मिलकर "सुपर वूमेन" का दबाव बनाते हैं। घर, बच्चे, करियर, फिटनेस सब में परफेक्ट ही महिलाओं को देखना चाहता है। नगरीय महिलाओं में चिंता बढ़ने का कारण "डिजिटल कंपेरिजन" बताया गया है। जब महिलाएँ घर से बाहर निकली तो समाज ने "परफेक्ट दिखो" का नया पिंजरा बना दिया। (नाओमी वुल्फ, द ब्यूटी मिथ, 1990, P. 10)

सुझाव

1. साइबर अपराध पर सख्ती से रोक लगाई जाए।
2. सभी विद्यालयों और कॉलेज में इसकी जानकारी प्रदान की जाए।
3. समाज लैंगिक पूर्वाग्रह को खत्म किया जाए।
4. महिलाओं को डिजिटल साक्षरता और साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूक किया जाए।

निष्कर्ष

"भविष्य पहले ही आ चुका है : बस समान रूप से वितरित नहीं है।"

– विलियम गिब्सन

AI स्वयं में न अच्छा है न बुरा। यह एक उपकरण है जिसका प्रयोग अपनी सोच के अनुसार व्यक्ति करता है। नगरीय महिलाओं के लिए यह अवसर बनेगा या खतरा, यह इस पर निर्भर करता है कि नीतियाँ, शिक्षा और सामाजिक चेतना इसे कैसे आकार देती हैं। यह नगरीय महिला को "डिजिटल लक्ष्मी" भी बना सकता है और "डिजिटल दासी" भी। फर्क बस इस बात से पड़ेगा कि समाज इसे कैसे नियंत्रित, शिक्षित और डेमोक्रेटिक करती है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल AI समाज में व्याप्त विचारधारा पर कार्य करता है। इससे महिलाएँ बहुत कुछ सीखकर स्वयं को आर्थिक, शैक्षणिक और सामाजिक रूप से सशक्त कर पाई हैं। किंतु हमारी परिकल्पनाएँ भी प्रस्तुत लेख में सत्य पाई गई हैं कि लैंगिक असमानता और पितृसत्तात्मक सोच से नगरीय महिलाओं के लिए डिजिटल युग में असमानताएँ उत्पन्न कर रहा है।

अतः यह कहा जा सकता है कि AI नगरीय महिलाओं के लिए अवसर और खतरा दोनों ही साबित हो सकता है। इसके लिए नगरीय महिलाओं को डिजिटल जागरूकता और साक्षरता की आवश्यकता है। समाज का भी यह कर्तव्य है कि वे भी महिलाओं के प्रति सजग हों।

संदर्भ सूची

- Castells, M. (2010), The Rise of the network society, Wiley-Blackwell, P. 05, 78.
- West, C., & Zimmerman, D. (1987). Doing gender. Gender and Society, Society, 1(2), 125-151.
- National Crime Records Bureau (2024), Crime in India Report, Government of India, P. 214
- Sen, A. (1999). Development as Freedom. Oxford University Press, P. 87.
- Wolf Naomi (1990), The Beauty Myth, P. 10
- भारद्वाज, ममता (2022), डिजिटल समाज और महिला सुरक्षा, नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन, पृ. 54
- पटेल, रीना (2010), वर्किंग द नाइट शिफ्ट, पृ. 47
- अग्रवाल, अजय (2017), इकोनॉमी ऑफ आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, पृ. 287
- गुरुमूर्ति, अमिता (2022), आईटी फॉर चेंज रिपोर्ट, पृ. 8

◀◀ ▶▶

मलिन बस्तियों के उत्थान में सात निश्चय योजनाओं की भूमिका

डॉ. सुनीता कुमारी*

शोध सार

प्रस्तुत अध्ययन मलिन बस्तियों के उत्थान में सात निश्चय योजनाओं की भूमिका है। भारत में शहरीकरण की प्रक्रिया ने मलिन बस्तियों की संख्या और समस्याओं बढ़ाया है। इन बस्तियों में रहने वाले लोग आधारभूत सुविधाओं से वंचित रहते हैं, जैसे स्वच्छ जल, बिजली, सड़क, नाली, शौचालय, शिक्षा और रोजगार। बिहार सरकार ने इन चुनौतियों से निपटने के लिए सात निश्चय योजनाएँ लागू कीं। इन योजनाओं में हर घर नल का जल, हर घर बिजली, गली–नाली पक्कीकरण, शौचालय निर्माण, महिला सशक्तिकरण, कौशल विकास और युवा शक्ति शामिल है। इन योजनाओं में मलिन बस्तियों में जीवन स्तर सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। स्वच्छ जल और बिजली की उपलब्धता ने स्वास्थ्य और जीवन–शैली को बेहतर बनाया। गली–नाली पक्कीकरण और शौचालय निर्माण ने स्वच्छता की स्थिति में सुधार किया। महिला सशक्तिकरण और कौशार विकास में सामाजिक समागता और रोजगार के अवसर बढ़ाए। हालांकि, योजनाओं के क्रियान्वयन में भष्टाचार, संसाधनों की कमी और जन–जागरुकता की चुनौतियाँ भी सामने आई। कुल मिलाकर, सात निश्चय योजनाएँ मलिन बस्तियों के उत्थान में एक प्रभावी पहल साबित हुई हैं और सामाजिक–आर्थिक विकास की दिशा में ठोस कदम हैं।

विशिष्ट शब्द : मलिन बस्ती, स्वस्थता, चुनौतियां, सात निश्चय, जीवन शैली आदि।

उद्‌देश्य–प्रस्तुत अध्ययन उद्देश्य यह है की सात निश्चय योजना से मलिन बस्तिओं की स्थिति में हुए सुधार की ज्ञात करना।

उपकल्पना – सात निश्चय योजना में मलिन बस्तियों में विकास हो रहा है।

सारांश – आजादी के बाद देश में बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेक प्रकार के उद्योग की स्थापना किया गया। जहाँ भी बड़े उद्योग लगे वहां मलिन बस्तिओं विकास स्वतः ही हो गया। वर्तमान में बिहार सरकार ने सात निश्य योजना प्रारंभ किया जिसका सकरात्मक प्रभाव मलिन बस्तिओ में भी देखने को मिल रहा है। सात निश्चय योजना के अंतर्गत अनेक पहल किये गये हैं, जैसे आर्थिक हल, युवाओं को बल– बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके अंतर्गत तीन प्रमुख गोजनाएँ आती हैं– मुख्यमंत्री निश्चय स्वयं सहायता भत्ता योजना (MNSSBY), कुशल युवा कार्यक्रम (KYP) और बिहार स्टूडेंट केडिट कार्ड योजना (BSCC)। इन योजनाओं का उद्देश्य युवाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना और उन्हें शिक्षा तथा रोजगार के अवसरों से जोड़ना है।[1]

स्वयं सहायता भत्ता योजना – इस योजना के तहत बेरोजगार युवाओं को आर्थिक सहायता दी जाती है ताकि वे अपने जीवन–यापन में सक्षम हो सकें। कुशल युवा कार्यक्रम युवाओं को आधुनिक तकनीकी और व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण प्रदान करता है, जिससे वे रोजगार लिए तैयार हो सकें। वहीं, स्टुडेंट क्रेडिट कार्ड योजना के माध्यम से उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले ब्याज दर पर ऋण उपल्ब्ध कराया जाता है, ताकि आर्थिक तंगी उनकी पढ़ाई में बाधा न बने।

हर घर बिजली योजना – यह बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का एक अहम हिस्सा है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में हर घर तक बिजली पहुँचाना है।

योजना से लाभ

- पहले बिहार के कई गाँव और कस्बे बिजली से वंचित थे, जिससे शिक्षा, स्वास्थ्य और नकारात्मक असर पड़ता था।
- इस योजना के तहत सरकार में लक्ष्य रखा कि हर घर में बिजली का कनेक्शन दिया जाए, चाहे वह ग्रामीण क्षेत्र हो या शहरी।
- गरीब परिवारों मुफ्त बिजली कनेक्शन उपलब्ध कराया गया ताकि आर्थिक स्थिति बिजली पाने में बाधा न बने।

* समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

- बिजली वितरण व्यवस्था को मजबूत करने के लिए ट्रांसफॉर्मर लगाए गए, तार बदले गए और सबस्टेशन बनाए गए।
- इस योजना से न केवल घरों में रोशनी पहुँची, बल्कि छोटे उद्योग, पढ़ाई और स्वास्थ्य सेवाओं भी गति मिली।

हर घर नल का जल योजना – ने बिहार के विकास में बुनियादी बदलाव आया है और यह राज्य में पीने के लिए स्वच्छ जल के मामले में आत्मनिर्भर बनाने की दिशा एक बड़ा कदम है। हर घर नल योजना बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। योजना को उद्देश्य है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रत्येक घर को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराया जाय।[2]

योजना से लाभ

- पहले बिहार के कई गाँवों और कस्बों में लोग कुएँ, तालाब या हंडपंप से पानी लेते थे, जिसमें जलजनित बीमारियाँ फैलती थीं।
- इस योजना के तहत सरकार में लक्ष्य रखा कि हर घर में पाइपलाइन से नाम का जल पहुँचे।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायत स्तर पर जलापूर्ति योजनाएँ बनाई गई और शहरी क्षेत्रों में नगर निगमों के माध्यम से पाइपलाइन नेटवर्क विकसित किया गया।
- पानी की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए जल शुद्धिकरण यंत्र (Water Treatment Plan) लगाए जाए।
- गरीब परिवारों को भी बिना किसी शुल्क के नल का जल उपलब्ध कराया गया।

स्वस्थ बिहार – योजना, बिहार सरकार की सात निश्चय का एक प्रमुख अंग है। इस योजना उद्देश्य राज्य में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करना और आधुनिक चिकित्सा सुविधाएँ उपलक्ष्ध कराना है।

योजना से लाभ

- ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं को सुलभ और गुणवत्तापूर्ण बनाने पर जोर दिया गया है।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (PHC), सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (CHC) और जिला अस्पतालों को आधुनिक उपकरणों और पर्याप्त दवाओं से सुसज्जित किया जा रहा है।
- टेलीमेडिसिन और डिजिटल हेल्थ सुविधाओं क्षेत्रों में भी विशेषज्ञ डॉक्टरों की सलाह मिल सके।
- मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया गया है, जिसमें प्रसव पूर्व और प्रसव पश्चात देखभाल, टीकाकरण और पोषण योजनाएँ शामिल हैं।
- आपातकालीन सेवाओं को मजबूत करने के लिए एम्बुलेंस नेटवर्क और 24 x 7 हेल्पलाइन की व्यवस्था की गई है।
- मेडिकल कॉलेजों और नर्सिंग संस्थानों का विस्तार किया जा रहा है ताकि डॉक्टरों और स्वास्थ्यकर्मियों की कमी दूर हो सके।

स्वच्छ बिहार योजना–राज्य को एक स्वस्थ और सशक्त समाज की ओर ले जाने का प्रयास है, जहाँ हर नागरिक को आधुनिक चिकित्सा सुविधाएँ और बेहतर स्वास्थ्य सेवाएँ मिल सकें। हर घर शौचालय योजना बिहार की सात निश्चय योजना महत्वपूर्ण अंग है। इस योजना का उद्देश्य है कि राज्य के हर घर में शौचालय का निर्माण हो, ताकि लोग खुले में शौच की आदत से मुक्त हो सके और स्वच्छता को बढ़ावा मिले।[3]

योजना से लाभ

- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार को शौचालय निर्माण के लिए सहायता दी जाती है।
- गरीब और आर्थिक कमजोर परिवारों को मुफ्त शौचालय उपलब्ध कराया गया।
- निर्माण पंचायत स्तर पर निगरानी समितियाँ बनाई गई ताकि हर घर में शौचालय सुनिश्चित हो सके।
- इस योजना को स्वच्छ भारत अभियान से भी जोड़ा गया, जिससे राज्य को खुले में शौच से पूरी तरह मुक्त करने लक्ष्य रखा गया।
- शौचालय निर्माण के लिए तकनीकी सहायता और सामयी की आपूर्ति भी सरकार द्वारा की गई।
- खुले में शौच से होने वाली बीमारियों (जैसे डायरिया, हैजा) में कमी आई।

- महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा और गरिमा सुनिश्चित हुई।
- ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता और स्वास्थ्य स्तर में सुधार हुआ।
- पर्यावरण प्रदूषण और जल स्रोतों के दूषित होने की समस्या कम हुई।

हर घर शौचालय योजना – ने बिहार में स्वच्छता की दिशा में बड़ा बदलाव लाया है और यह लोगों के जीवन को स्वस्थ, सुरक्षित और सम्मानजनक बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

हर घर पक्की गली–नाली योजना बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का एक अहम हिस्सा है। इस योजना का उद्देश्य गाँवों और कस्बों में पक्की सड़कों और नालियों का निर्माण करना है, ताकि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता, सुविधा और बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित हो।[4]

योजना से लाभ

- पहले ग्रामीण क्षेत्रों में कच्ची गलियाँ और नालियाँ थीं, जिससे बरसात के समय गंदगी और जलजमाव की समस्या होती थी।
- इस योजना के तहत हर गाँव और कस्बे में पक्की गली और नाली बनाई जा रही है।
- पंचायत स्तर कार्यान्वयन किया गया है, ताकि स्थानीय स्तर पर निगरानी और गुणवत्ता सुनिश्चित हो सके।
- नालियों के निर्माण से जल निकासी की समस्या दूर हुई और गली–नाली से जुड़ी स्वच्छता में सुधार हुआ।
- पक्की गलियों से लोगों को आवागमन में सुविधा मिली और गाँवों स्वरूप आधुनिक हुआ।
- बरसात के समय जलजमाव और गंदगी की समस्या कम हुई।
- ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता और स्वास्थ्य स्तर में सुधार हुआ।
- बच्चों, महिलाओं और बुजुर्गों को सुरक्षित और सुविधाजनक आवागमन मिला।
- गाँवों और कस्बों में सौंदर्य और जीवन स्तर बेहतर हुआ।
- यह योजना ग्रामीण विकास और शहरीकरण की दिशा में एक बड़ा कदम साबित हुई।

इस प्रभावी योजना से हर घर पक्की गली–नाली योजना ने बिहार के गाँवों और कस्बों को आधुनिक और स्वच्छ बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।[5]

महिला सशक्तिकरण योजना – बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का महत्वपूर्ण अंग है। इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा में बढ़ावा देना है, ताकि वे आत्मनिर्भर बन सके और समाज में बराबरी का स्थान प्राप्त कर सके।

योजना से लाभ

- महिलाओं को उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
- रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण केंद्र और कौशल विकास कार्यक्रम चलाए जाते हैं।
- स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए महिलाओं को ऋण और आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है।
- सामाजिक सुरक्षा के तहत महिलाओं को सरकारी योजनाओं का लाभ आसानी से दिलाने की व्यवस्था की गई है।
- पंचायत और स्थानीय निकायों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की गई है, जिससे वे निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल हो सके।
- महिला हेल्पलाइन और सहायता केंद्र स्थापित किए गए है, ताकि उन्हें कानूनी और सामाजिक सहयोग मिल सके।
- महिलाओं की शिक्षा दर में वृद्धि हुई है।
- रोजगार और स्वरोजगार के अवसर बढ़े हैं. जिससे महिलाएँ आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनी हैं।
- समाज में महिलाओं की स्थिति और सम्मान में सुधार हुआ है।
- घरेलू हिंसा और भेदभाव के जिवाफ महिलाओं को अधिक सुरक्षा और सहयोग मिला है।
- ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी और नेतृत्व क्षमता बढ़ी है।

- कहा जाय तो **महिला सशक्तिकरण योजना** ने बिहार की महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और सुरक्षा के क्षेत्र में नई दिशा दी है और उन्हें आत्मनिर्भर तथा सशक्त बनाने की दिशा में ठोस कदम उठाए हैं।

स्वास्थ्य सुविधा योजना – बिहार सरकार की सात निश्चय योजना का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस योजना का उद्देश्य प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों (PHC), सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों (CHC) और जिला अस्पतालों में बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध कराना है, ताकि आम जनता को गुणवत्तापूर्ण और सुलभ स्वास्थ्य सेवाएँ मिल सकें।

योजना से लाभ

- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य केंद्रों को आधुनिक उपकरणों और पर्याप्त दवाओं से सुसज्जित किया जा रहा है।
- डॉक्टरों और स्वास्थ्यकर्मियों की संख्या बढ़ाने के लिए नए पद सृजित किए गए और मेडिकल कॉलेजों का विस्तार किया गया।
- अस्पतालों में 24 x 7 आपातकालीन सेवाएँ उपलब्ध कराने पर जोर दिया गया है।
- मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं को प्राथमिकता दी गई हैं, जिसमें प्रसव पूर्व और प्रसव पश्चात देखभाल, टीकाकरण और पोषण योजनाएँ शामिल हैं।
- टेलीमेडिसिन और डिजिटल हेल्थ सुविधाओं को बढ़ावा दिया गया है ताकि दूर–दराज के क्षेत्रों में भी विशेषज्ञ डॉक्टरों की सलाह मिल सके।
- एम्बुलेस नेटवर्क और हेल्पलाइन सेवाओं को मजबूत किया गया है।

योजना से लाभ – ग्रामीण क्षेत्रों में भी गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध होने लगी है।

- आम जनता की सस्ती और सुलभ चिकित्सा सुविधा मिल रही है।
- मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर में कमी लाने लक्ष्य रखा गया है।
- आधुनिक उपकरणों और विशेषज्ञ डॉक्टरों की उपलब्धता से गंभीर बीमारियों का बेहतर इलाज संभव हुआ है।
- स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार से रोजगार के नए अवसर भी पैदा हुए हैं।
- स्वास्थ्य सुविधा योजना ने बिहार में स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत किया है और यह राज्य को एक स्वस्थ और सशक्त समाज की ओर से जाने का बेहतर प्रयास है।

निष्कर्ष – मलिन बस्तियों में अनेक समस्याएँ इस प्रकार हावी रहती थीं जिससे यहां के वातावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता था। सात निश्चय योजना में मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों के लिए एक नई रोशनी के सामान है। बिहार सरकार द्वारा प्रारंभ की गई योजनाओं का सम्मिलित उद्देश्य युवाओं आत्मनिर्भर बनाना, उन्हें शिक्षा और कौशल से सुसज्जित करना तथा उनके भविष्य को सुरक्षित करना है। भारत में शहरीकरण की प्रक्रिया ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों असमानताओं को बढ़ाया है। शहरी क्षेत्रों में तेजी से बढ़ती जनसंख्या और संसाधनों की कमी के कारण मलिन बस्तियों का विस्तार हुआ है। मलिन बस्तियाँ वे स्थान हैं जहाँ गरीब और वंचित वर्ग के लोग रहते हैं. जिनके पास स्वच्छ जल, बिजली सड़क, नाली, शौचालय, शिक्षा और रोजगार जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव होता है। बिहार जैसे राज्यों में यह समस्या और भी गंभीर है। इन्हीं चुनौतियों से निपटने के लिए बिहार सरकार ने सात निश्चय योजनाएँ लागू की। इन योजनाओं का उद्देश्य था कि हर नागरिक बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ और सामाजिक आर्थिक उत्थान सुनिश्चित किया जाए। योजनाओं ने बिहार में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और बुनियादी ढाँचे को मजबूत किया है। ग्रामीण और शहरी दोनों जीवन स्तर में सुधार हुआ है, महिलाओं और युवाओं को नए अवसर मिले हैं, और राज्य एक सशक्त, आत्मनिर्भर और आधुनिक समाज की ओर बढ़ रहा है। बिहार सरकार की ये योजनाएँ समग्र विकास और सामाजिक न्याय की दिशा में एक ठोस पहल हैं।

संदर्भ सूची

1. बिहार सरकार (2020) *सात निश्चय योजना दस्तावेज,* पटनाः योजना एवं विकास विभाग।
2. सिंह, आर. (2021). *बिहार में शहरी विकास की चुनौतियाँ,* नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
3. कुमार, ए. (2010). *मलिन बस्तियों का सामाजिक–आर्थिक अध्ययन,* पटनाः लोकभारती।
4. मिश्रा, एम. (2022). *बिहार की विकास योजनाएँ और उनका प्रभाव,* वाराणसीः भारती प्रकाशन।

5. यादव, पी. (2021). *सात निश्चय योजना का मूल्यांकन*, पटनाः समाजशास्त्र शोध पत्रिका।
6- Government of Bihar. (2020). *Saat Nischay Programme Report*. Patna: Planning & Development Department.
7- World Bank (2019). *Urban Poverty and Development in India*. Washington, DC: World Bank Publications
8- Sharma, R., & Gupta, A. (2021). Urban Slums and Policy Interventions in Bihar. Journal of Social Development Studies, 15(2), 45-67.
9- UN-Habitat. (2020). Slum Upgrading and Inclusive Urban Development. Nairobi: United Nations Human Settlements Programme.
10- Singh, M. (2022). Impact of Government Schemes on Urban Poor in Bihar. International Journal of Policy Research. 10(3), 112-130.

महिला सशक्तिकरण और संविधान

डॉ. मुन्ना सिंह*

सारांश (Abstract)

महिला सशकिकरण आधुनिक भारत की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसका उद्देश्य महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक रूप से सुदृढ़ करना है। भारतीय समाज में लंबे समय से महिलाओं को पुरूषों की तुलना में कमत्तर आंका गया यों कहिये निम्न स्थान दिया गया, जिसकी वजह से वे अनेक प्रकार की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं से प्रभावित रहीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान में महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किया गया तथा सरकार ने विभिन्न योजनाओं और नीतियों के माध्यम से महिलाओं के विकास का प्रयास किया। प्रस्तुत शोध–पत्र में महिला सशक्तिकरण की अवधारणा, उसके विभिन्न आयाम, भारतीय समाज में उसकी आवश्यकता, संवैधानिक प्रावधान, चुनौतियां तथा समाधान का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्दः महिला सशक्तिकरण, समानता, शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता, समाजशास्त्र, संविधान।

प्रस्तावना

महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीति तथा शैक्षिक रूप से सक्षम बनाना है, ताकि वे अपने अधिकारों का स्वतंत्र रूप से उपयोग कर सकें और समाज में समान स्थान प्राप्त कर सकें। भारतीय संविधान ने महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और सम्मान का अधिकार प्रदान किया है। संविधान निर्माताओं ने यह समझा कि महिलाओं के विकास के बिना राष्ट्र का समग्र विकास संभव नहीं है। इसलिए संविधान में महिलाओं की सुरक्षा, समान अवसर तथा कल्याण हेतु अनेक प्रावधान किए गए हैं। भारतीय समाज का इतिहास इस तथ्य का साक्षी रहा है कि महिला और पुरुष की सामाजिक स्थिति में असमानता सदैव से रही है। परम्परागत रूप से महिलाओं को परिवार तक सीमित कर दिया गया और उन्हें (शिक्षा, संपत्ति, राजनीतिक अधिकार– सार्वजनिक पदों और आर्थिक अवसरों से वंचित रखा गया। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान हालांकि, महिलाओं की सक्रिय भागीदारी ने यह स्पष्ट कर दिया कि बिना महिलाओ की भागीदारी के राष्ट्र का समुचित विकास सम्भव नहीं है। स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं ने महिलाओं को समानता का अधिकर सशक्तिकरण को केन्द्र में रखकर कई संवैधानिक प्रावधान किए।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारतीय परम्परा में वैदिक काल में महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने, यज्ञ में शामिल होने, किसी भी प्रतियोगित में भाग लेने और दर्शन–भाषण का अधिकार प्राप्त था। परन्तु उत्तर वैदिक काल तथा मध्यकाल के दौरान उनकी स्थिति बद से बदत्तर होती चली गई। बाल–विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा जैसी बुराइयों ने महिलाओं को सामाजिक जीवन से अलग कर दिया। 19वीं शताब्दी में राजाराम मोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और महात्मा ज्योतिबा फुले जैसे समाज सुधारकों ने महिला अधिकारों के लिए आवाज उठाई। जिसके परिणामस्वरूप ब्रिटिश काल में कई सुधारक कानून जैसे – सती प्रथा उन्मूलन अधिनियम (1829), विधवा पुर्नविवाह अधिनियम (1856), और शिक्षा के अधिकारों के अवसरों का विस्तार किया गया। स्वतंत्रता आन्दोलन में सरोजनी नायडू, एनी बेसेन्ट, अरुणा आसफ अली और कस्तूरबा गाँधी जैसी महिलाओं ने नेतृत्व कर यह प्रमाणित कर दिया कि महिलाएँ भी राष्ट्र निर्माण की धुरी हो सकती है। यही पृष्ठभूमि संविधान निर्माताओं के लिए प्रेरणा बनी।

महिला सशक्तिकरण की अवधारणा

महिला सशक्तिकरण अवार्चिन समय में एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक अवधारणा है। किसी भी समाज तथा राष्ट्र की प्रगति तभी संभव है जब वहाँ की महिलाएं शिक्षित, आत्मनिर्भर, सुरक्षित तथा सम्मानित हो। भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश में महिलाओं को संविधान द्वारा समान अधिकार दिए

* पूर्व शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

गए हैं, फिर भी लंबे समय तक महिलाओं को सामाजिक असमानता, आर्थिक निर्भरता और लैंगिक भेदभाव का सामना करना पड़ा। इसी कारण महिला सशक्तिकरण की अवधारणा महसूस की गई।

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य केवल महिलाओं को अधिकार प्रदान करना नहीं है, बल्कि उन्हें इतना सक्षम बनाना है कि वे अपने जीवन से जुड़े निर्णय स्वयं ले सकें और समाज में समान भागीदारी निभा सकें। यह महिलाओं के आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता और सामाजिक सम्मान को बढ़ाने की प्रक्रिया है।

संवैधानिक प्रावधान और महिला सशक्तिकरण

(क) मौलिक अधिकार

अनु 14 : समानता का अधिकार, महिलाओं और पुरुषों दोनों को समान अवसर प्रदान करता है।
अनु 15(1) : लिंग आधारित भेद–भाव निषिद्ध है।
अनु 15(3) : राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान का अधिकार है।
अनु 6 : सार्वजनिक सेवाओं में समान अवसर सुनिश्चित करता है।
अनु 21: गरिमामय जीवन का अधिकार, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा शामिल है।

(ख) राज्य के नीति–निर्देशक तत्व

अनु 39(क) व 39(5): पुरुषों और महिलाओं को समान वेतन तथा आजीविका का अवसर।
अनु 42: मातृत्व अवकाश और श्रमिक महिलाओं के लिए सुविधाएँ।
अनु 44: समान नागरिक संहिता, जो लैंगिक समानता को सुनिश्चित कर सकती है।

(ग) संवैधानिक संशोधन

73वाँ व 74वाँ संविधान संशोधन (1992): पंचायत और शहरी निकायों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण।
108वाँ संशोधन विधेयक : संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण (हालाकि अभि लंबित है।)

(घ) न्यायिक व्याख्या

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997): कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न रोकने हेतु दिशा–निर्देश
लक्ष्मी बनाम भारत संघ (2017): अम्ल हमलों पर नियंत्रण
शायरा बानो बनाम भारत संघ (2017): तीन तलाक असंवैधानिक
नवजोत सिंह जोहर बनाम भारत संघ (2018) : लैंगिक स्वतंत्रता और समानता का विस्तार।

महिला सशक्तिकरण पर संवैधानिक प्रयासों का प्रभाव

- भारतीय संविधान के प्रावधानों से महिलाओं की स्थिति में अनेक सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम और संवैधानिक सुरक्षा के कारण महिला साक्षरता दर निरन्तर बढ़ रही है।
- कार्यक्षेत्रों में महिलाओं की संख्या बढ़ी है, खासकर आइटी, बैंकिंग और प्रशासनिक सेवाओं में।
- स्थानीय निकायों में आरक्षण ने गाँव–गाँव में महिला नेतृत्व को जन्म दिया है।
- न्यायपालिका और पुलिस सेवा में भी महिलाओं की उपस्थिति बढ़ी है।

वर्तमान नीतियाँ एवं योजनाएँ

सरकार ने संवैधानिक प्रावधानों को क्रियान्वित करने हेतु कई योजनाएँ शुरू कीं जैसे

- बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ योजना
- महिला शक्ति केन्द्र योजना
- सुकन्या समृद्धि योजना
- वन स्टॉप सेंटर स्कीम
- उज्जवला योजना

इन योजनाओं ने महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ और आर्थिक स्वावलंबन को बढ़ावा दिया।

चुनौतियाँ : हाँलाकि प्रगति हुई है, परन्तु अनेकों चुनौतियाँ अभी भी मौजूद है।

1. ग्रामीण क्षेत्रों में बाल विवाह और दहेज प्रथा
2. कार्यस्थलों पर लैंगिक भेदभाव और असमान वेतन
3. महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी अभी भी वास्तविक रूप से सीमित।
4. घरेलू हिंसा और लैगिक हिंसा की उच्च दर।
5. डिजिटल साक्षरता और तकनीकी क्षेत्र में महिलाओं की कम भागीदारी।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान ने महिला सशकिकरण के लिए सुदृढ आधार तैयार किया है। स्वतंत्रता, समानता और गरिमा के सिद्धान्तों ने महिलाओं को सशक्त बनाने का मार्ग प्रशस्त किया है। लेकिन संविधान की सफलता तब मानी जाएगी जब इन प्रावधानों को सामाजिक जीवन में पूर्णतया लागू किया जाए। केवल कानून बनाना पर्याप्त नहीं है, समाज की मानसिकता में परिवर्तन भी उतना ही आवश्यक है।

सुझाव

- संसद और विधानसभाओं में महिला आरक्षण विधेयक को शीघ्र लागू किया जाय।
- ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा और कौशल विकास पर विशेष ध्यान दिया जाए।
- महिलाओं के लिए सुरक्षित और समान अवसरों वाला कार्यस्थल सुनिश्चित किया जाए।
- मीडिया और शिक्षा के माध्यम से लैंगिक समानता पर अभियान चलाया जाए।
- घरेलू हिंसा और यौन उत्पीड़न से निपटने हेतु सख्त कानूनी और सामाजिक उपाय किए जाए।

संदर्भ सूची

बसु, डीडी. (2019), भारतीय संविधान का परिचय (24वाँ संस्करण) लेक्सिस–नेक्सिस प्रकाशन।
कश्यप सुभाष सी. (2018). हमारा संविधान नेशनल बुक ट्रस्ट।
लक्ष्मीकांत, एम. (2023). भारतीय राजव्यस्था (7वॉ संस्करण) मेकग्रा हिल एजुकेशन।
महाजन वी.डी. (2016). भारत का संवैधानिक इतिहास. एस. चाँद प्रकाशन।
अग्रवाल, ए.एन (2018). भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण. जयपुर : रावत पब्लिकेशन।
आहूजा, राम. (2020). भारतीय सामाजिक व्यवस्था. नई दिल्लीः साहित्य प्रकाशन।
चन्द्रा रचना. (2017). महिला एवं विकास. नई दिल्ली : साहित्य प्रकाशन।
दुबे, श्यामाचरण. (2015). भारतीय समाज. नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।
सिंह, योगेन्द्र (2019), भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन, नई दिल्लीः रावत पब्लिकेशन।

भारतीय समाज एवं पर्यावरणीय शिक्षा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. अनामिका कुमारी*

सारांश

वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट विश्व स्तर पर एक गंभीर समस्या के रूप में उभरकर सामने आया है। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, वनों की कटाई, जल संकट तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन ने मानव जीवन और सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित किया है। ऐसे समय में पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य भारतीय समाज में पर्यावरणीय शिक्षा की भूमिका, उसके सामाजिक प्रभाव तथा पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में उसका समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि पर्यावरणीय शिक्षा केवल प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक जागरूकता, नैतिक मूल्यों तथा सतत विकास की भावना को भी विकसित करती है। भारतीय समाज में पारंपरिक संस्कृति एवं धार्मिक मान्यताओं ने प्रकृति संरक्षण को सदैव महत्व दिया है, किंतु आधुनिक औद्योगीकरण एवं उपभोक्तावाद के कारण पर्यावरणीय संतुलन प्रभावित हुआ है। अध्ययन में विद्यालयों, उच्च शिक्षण संस्थानों, सामाजिक संगठनों तथा सरकारी नीतियों की भूमिका का भी विश्लेषण किया गया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पर्यावरणीय शिक्षा भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन, पर्यावरण संरक्षण तथा सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण माध्यम सिद्ध हो सकती है।

कुंजी शब्द : पर्यावरणीय शिक्षा, भारतीय समाज, समाजशास्त्र, पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास, सामाजिक जागरूकता, प्रदूषण, पारिस्थितिकी

प्रस्तावना

मानव और पर्यावरण का संबंध अत्यंत प्राचीन एवं घनिष्ठ रहा है। मानव जीवन की समस्त गतिविधियाँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण पर निर्भर करती हैं। जल, वायु, भूमि, वन एवं अन्य प्राकृतिक संसाधन मानव अस्तित्व के आधार हैं। किंतु आधुनिक समय में औद्योगीकरण, शहरीकरण तथा उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण पर्यावरणीय असंतुलन की समस्या गंभीर होती जा रही है। इसके परिणामस्वरूप प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन तथा प्राकृतिक संसाधनों का संकट उत्पन्न हुआ है।

भारतीय समाज परंपरागत रूप से प्रकृति के प्रति संवेदनशील रहा है। भारतीय संस्कृति में नदियों, वृक्षों, पर्वतों एवं पशुओं को धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व प्रदान किया गया है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में पर्यावरण संरक्षण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। किंतु आधुनिक विकास मॉडल एवं तकनीकी विस्तार ने मानव और प्रकृति के संबंधों को प्रभावित किया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से पर्यावरण केवल प्राकृतिक तत्वों का समूह नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचना, संस्कृति तथा मानवीय व्यवहार से भी जुड़ा हुआ है। जब पर्यावरणीय संकट उत्पन्न होता है, तब उसका प्रभाव सामाजिक जीवन, स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था तथा संस्कृति पर भी पड़ता है। इसलिए पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर्याप्त नहीं है, बल्कि सामाजिक जागरूकता एवं शिक्षा भी आवश्यक है।

पर्यावरणीय शिक्षा का उद्देश्य लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता तथा उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना है। यह शिक्षा व्यक्तियों को प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण तथा

* समाजशास्त्र विभाग, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

सतत विकास के प्रति प्रेरित करती है। विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में पर्यावरणीय शिक्षा को शामिल करना इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जाता है।

प्रस्तुत अध्ययन में भारतीय समाज में पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता, सामाजिक प्रभाव, चुनौतियाँ तथा संभावनाओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है। साथ ही यह अध्ययन पर्यावरण संरक्षण में शिक्षा, संस्कृति तथा सामाजिक संस्थाओं की भूमिका को भी स्पष्ट करता है।

पर्यावरणीय शिक्षा की अवधारणा और महत्व

पर्यावरणीय शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्तियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक एवं उत्तरदायी बनाया जाता है। इसका उद्देश्य केवल पर्यावरणीय समस्याओं की जानकारी देना नहीं, बल्कि लोगों में संरक्षण एवं संवेदनशीलता की भावना विकसित करना भी है।

आधुनिक समाज में पर्यावरणीय शिक्षा का महत्व लगातार बढ़ता जा रहा है। औद्योगिक विकास, वाहनों की वृद्धि तथा जनसंख्या विस्तार के कारण पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि हुई है। ऐसे में लोगों को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक बनाना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

पर्यावरणीय शिक्षा समाज में नैतिक मूल्यों को भी विकसित करती है। यह व्यक्तियों को प्रकृति के साथ संतुलित जीवन जीने की प्रेरणा देती है। जब लोग पर्यावरण के महत्व को समझते हैं, तब वे संसाधनों का उपयोग अधिक जिम्मेदारी के साथ करते हैं।

विद्यालय एवं विश्वविद्यालय पर्यावरणीय शिक्षा के प्रमुख माध्यम हैं। शिक्षा संस्थानों में वृक्षारोपण, स्वच्छता अभियान, जल संरक्षण तथा पुनर्चक्रण जैसे कार्यक्रम छात्रों में पर्यावरणीय चेतना विकसित करते हैं।

इसके अतिरिक्त पर्यावरणीय शिक्षा सतत विकास की अवधारणा को भी मजबूत करती है। यह वर्तमान पीढ़ी को इस बात के लिए प्रेरित करती है कि विकास इस प्रकार हो जिससे भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताएँ प्रभावित न हों।

भारतीय समाज और पर्यावरणीय चेतना

भारतीय समाज में पर्यावरणीय चेतना का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति को पूजनीय माना गया है। गंगा, यमुना जैसी नदियों तथा पीपल, बरगद जैसे वृक्षों को धार्मिक महत्व प्रदान किया गया है।

ग्रामीण समाज में आज भी प्रकृति के प्रति सम्मान की भावना दिखाई देती है। खेती, पशुपालन तथा जल स्रोतों के संरक्षण की पारंपरिक पद्धतियाँ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक रही हैं।

महात्मा गांधी ने भी प्रकृति के साथ संतुलित जीवन जीने पर बल दिया था। उनका विचार था कि पृथ्वी सभी की आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है, किंतु किसी एक व्यक्ति के लालच को नहीं। यह विचार आज भी पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में प्रासंगिक है।

हालाँकि आधुनिक उपभोक्तावाद एवं औद्योगीकरण के कारण भारतीय समाज में पर्यावरणीय चेतना कमजोर होती दिखाई दे रही है। प्लास्टिक प्रदूषण, जल संकट तथा वायु प्रदूषण जैसी समस्याएँ इसका उदाहरण हैं।

इन परिस्थितियों में पर्यावरणीय शिक्षा भारतीय समाज में नई चेतना उत्पन्न कर सकती है। यदि शिक्षा के माध्यम से लोगों को पर्यावरणीय समस्याओं एवं उनके प्रभावों के बारे में जागरूक किया जाए, तो समाज में सकारात्मक परिवर्तन संभव है।

पर्यावरणीय शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन

पर्यावरणीय शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह व्यक्तियों के व्यवहार, सोच एवं जीवन शैली में परिवर्तन लाती है। जब लोग पर्यावरण के प्रति जागरूक होते हैं, तब वे संसाधनों का उपयोग अधिक जिम्मेदारी के साथ करते हैं।

सामाजिक संगठनों एवं गैर-सरकारी संस्थाओं की भूमिका भी पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण है। विभिन्न अभियान, रैलियाँ तथा जनजागरूकता कार्यक्रम समाज में पर्यावरण संरक्षण की भावना को मजबूत करते हैं।

महिलाएँ पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जल संरक्षण, स्वच्छता तथा घरेलू संसाधनों के संतुलित उपयोग में महिलाओं का योगदान विशेष रूप से देखा जाता है। इसलिए महिलाओं को पर्यावरणीय शिक्षा से जोड़ना अत्यंत आवश्यक है।

युवा वर्ग भी पर्यावरणीय आंदोलनों में सक्रिय भूमिका निभा रहा है। सोशल मीडिया, वृक्षारोपण अभियान तथा स्वच्छता कार्यक्रमों के माध्यम से युवा पर्यावरण संरक्षण के प्रति समाज को जागरूक कर रहे हैं।

पर्यावरणीय शिक्षा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को भी विकसित करती है। यह व्यक्तियों को यह समझने में सहायता करती है कि पर्यावरण संरक्षण केवल सरकार की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है।

चुनौतियाँ और समाधान

पर्यावरणीय शिक्षा के प्रसार में कई चुनौतियाँ सामने आती हैं। सबसे बड़ी समस्या जागरूकता की कमी है। ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में अभी भी लोग पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति पर्याप्त रूप से जागरूक नहीं हैं।

शिक्षा व्यवस्था में व्यावहारिक पर्यावरणीय प्रशिक्षण का अभाव भी एक प्रमुख समस्या है। कई बार पर्यावरणीय शिक्षा केवल पाठ्यक्रम तक सीमित रह जाती है तथा उसका व्यवहारिक जीवन से संबंध स्थापित नहीं हो पाता।

औद्योगीकरण एवं उपभोक्तावाद भी पर्यावरण संरक्षण में बाधा उत्पन्न करते हैं। आधुनिक जीवन शैली में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग किया जा रहा है, जिससे पर्यावरणीय संकट बढ़ता जा रहा है।

सरकारी नीतियों के प्रभावी क्रियान्वयन की कमी भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है। पर्यावरण संरक्षण से संबंधित कानून होने के बावजूद उनका पालन पूरी तरह नहीं हो पाता।

इन समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षा संस्थानों, सरकार एवं सामाजिक संगठनों को मिलकर कार्य करना होगा। व्यावहारिक शिक्षा, जनजागरूकता अभियान, वृक्षारोपण कार्यक्रम तथा कठोर पर्यावरणीय कानूनों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा दिया जा सकता है

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि पर्यावरणीय शिक्षा भारतीय समाज में सामाजिक जागरूकता एवं पर्यावरण संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह केवल पर्यावरणीय समस्याओं की जानकारी प्रदान नहीं करती, बल्कि व्यक्तियों में नैतिकता, उत्तरदायित्व एवं सतत विकास की भावना भी विकसित करती है। भारतीय समाज की पारंपरिक सांस्कृतिक धारणाएँ पर्यावरण संरक्षण के लिए अनुकूल आधार प्रदान करती हैं, किंतु आधुनिक उपभोक्तावाद एवं औद्योगीकरण के कारण पर्यावरणीय संकट बढ़ता जा रहा है। ऐसी स्थिति में पर्यावरणीय शिक्षा समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकती है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सामाजिक संस्थाओं तथा सरकार के संयुक्त प्रयासों से पर्यावरण संरक्षण की दिशा में प्रभावी कदम उठाए जा सकते हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पर्यावरणीय शिक्षा एक स्वस्थ, संतुलित एवं सतत समाज के निर्माण की आधारशिला है।

संदर्भ सूची

1. कार्सन, आर. (1962). *साइलेंट स्प्रिंग।* हाउटन मिफ्लिन।
2. बेक, यू. (1992). *रिस्क सोसाइटी : टुवर्ड्स ए न्यू मॉडर्निटी।* सेज पब्लिकेशन्स।
3. गिडेन्स, ए. (1990). *द कॉन्सीक्वेंसेज़ ऑफ मॉडर्निटी।* स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. देसाई, ए. आर. (2018). *भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र।* रावत पब्लिकेशन्स।
5. गाडगिल, एम., एवं गुहा, आर. (1995). *इकोलॉजी एंड इक्विटी।* पेंगुइन बुक्स।
6. हरालाम्बोस, एम. (2013). *सोशियोलॉजी : थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स।* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. कुमार, आर. (2019). *भारतीय समाज और सामाजिक परिवर्तन।* राजकमल प्रकाशन।
8. मदान, जी. आर. (2017). *भारतीय सामाजिक समस्याएँ।* विवेक प्रकाशन।
9. मीडोज़, डी. एच. (1972). *द लिमिट्स टू ग्रोथ।* यूनिवर्स बुक्स।
10. नैस, ए. (1989). *इकोलॉजी, कम्युनिटी एंड लाइफस्टाइल।* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. ओडम, ई. पी. (2005). *फंडामेंटल्स ऑफ इकोलॉजी।* ब्रूक्स कोल।
12. पामर, जे. (1998). *एनवायरनमेंटल एजुकेशन इन द 21st सेंचुरी।* रूटलेज।
13. राव, सी. एन. एस. (2016). *एनवायरनमेंटल स्टडीज़।* यूनिवर्सिटीज़ प्रेस।
14. सैक्स, डब्ल्यू. (2015). *द डेवलपमेंट डिक्शनरी।* ज़ेड बुक्स।
15. शर्मा, के. एल. (2016). *सोशल स्ट्रेटिफिकेशन इन इंडिया।* रावत पब्लिकेशन्स।
16. सिंह, वाई. (2011). *मॉडर्नाइजेशन ऑफ इंडियन ट्रेडिशन।* रावत पब्लिकेशन्स।
17. श्रीनिवास, एम. एन. (2009). *सोशल चेंज इन मॉडर्न इंडिया।* ओरिएंट ब्लैकस्वान।
18. यूनेस्को। (2014). *शेपिंग द फ्यूचर वी वांट।* यूनेस्को पब्लिकेशन्स।
19. संयुक्त राष्ट्र। (2015). *ट्रांसफॉर्मिंग आवर वर्ल्ड : द 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट।* संयुक्त राष्ट्र पब्लिकेशन्स।
20. वेबर, एम. (1978). *इकोनॉमी एंड सोसाइटी।* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

तबला वाद्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं निर्माण संबंधी मत–मतांतर

देवेश कुमार कंवर*

शोध सारांश-

प्रस्तुत शोध आलेख **"तबला वाद्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं निर्माण संबंधी मत-मतांतर"** तबला वाद्य की उत्पत्ति, विकास तथा उसके निर्माण संबंधी विभिन्न विद्वानों के मतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। तबला भारतीय संगीत परंपरा का एक अत्यंत लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण अवनद्ध वाद्य है, जिसने संगत एवं स्वतंत्र वादन दोनों क्षेत्रों में विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है। तथापि, इसकी उत्पत्ति, निर्माणकर्ता तथा विकास-क्रम के विषय में आज भी विद्वानों के मध्य मतभेद विद्यमान हैं।

इस शोध आलेख में तबला वाद्य के उद्गम से संबंधित विभिन्न प्रचलित धारणाओं, किंवदंतियों तथा ऐतिहासिक मतों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। विशेष रूप से तबले की उत्पत्ति को पखावज, मृदंग, प्राचीन पुष्कर, अरबी **तब्ल,** तब्लजंग तथा अन्य लोकवाद्यों से जोड़ने वाले मतों का विवेचन किया गया है। साथ ही अमीर खुसरो, सिद्धार खाँ, लाला भवानीदास एवं अन्य विद्वानों के विचारों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

शोध आलेख में यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि संगीत की बदलती आवश्यकताओं, विशेषतः ख्याल, ठुमरी एवं अन्य नवीन गायन शैलियों के विकास के साथ तबले का स्वरूप अधिक परिष्कृत और प्रचलित हुआ। अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि तबला किसी एक व्यक्ति अथवा किसी विशिष्ट कालखंड की देन नहीं है, बल्कि यह भारतीय अवनद्ध वाद्यों की दीर्घ विकास-परंपरा का परिणाम है। प्राचीन *पुष्कर* वाद्य के विभिन्न अंगों से विकसित होकर तबले ने वर्तमान स्वरूप प्राप्त किया। अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि तबले के स्वरूप, वादन-पद्धति एवं प्रचार-प्रसार में उस्ताद सिद्धार खाँ का विशेष योगदान रहा, जिन्होंने दिल्ली घराना की स्थापना कर तबला वादन की एक सुदृढ़ परंपरा का विकास किया। इस प्रकार तबला भारतीय संगीत संस्कृति की ऐतिहासिक निरंतरता, परिवर्तनशीलता और समृद्ध परंपरा का प्रतीक बनकर उभरता है।

शब्द कुंजी - तबला, अवनद्ध वाद्य, उत्पत्ति, पखावज, पुष्कर, सिद्धार खाँ, घराना परंपरा, तबला वादन।

प्रस्तावना- तबला वाद्य की उत्पत्ति के संदर्भ में आज तक अनेक विद्वानों एवं संगीत शोधकर्ताओं ने गहन अनुसंधान किए हैं। इस विषय पर अपने विचारों और निष्कर्षों को विभिन्न ग्रंथों के माध्यम से जनसामान्य तक पहुँचाने का प्रयास भी किया गया है, किन्तु तबला वाद्य की उत्पत्ति कहाँ, कब और किस प्रकार हुई तथा इसका वास्तविक आविष्कारक कौन था—यह प्रश्न आज भी तबला वादकों और विद्वानों के मध्य एक रहस्य एवं शोध का विषय बना हुआ है।

तबला एक ऐसा विशिष्ट अवनद्ध वाद्य है, जिस पर विस्तारशील एवं विविध प्रकार की रचनाओं का प्रभावी वादन किया जाता है। इसकी प्रमुख विशेषता इसकी विशिष्ट बनावट तथा विकसित वादन-शैली (बाज) है। तबले की रचनाओं और उसकी परंपरा को सम्यक रूप से समझने के लिए उसके ऐतिहासिक विकास और पृष्ठभूमि का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। इसी उद्देश्य से इस आलेख में सर्वप्रथम तबला वाद्य के उद्गम, विकास, बनावट तथा उसके विभिन्न बाजों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही अनेक विद्वानों द्वारा तबले की उत्पत्ति और निर्माण से संबंधित व्यक्त किए गए विभिन्न मतों और विचारों का भी विश्लेषणात्मक अवलोकन किया गया है।

पखावज को प्रायः तबले का जनक वाद्य माना जाता है। इसी दृष्टि से इस आलेख में पखावज और तबले की वादन-शैली (बाज) का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है, जिससे दोनों वाद्यों के पारस्परिक संबंध और विकास क्रम को बेहतर ढंग से समझा जा सके।

स्वतंत्र तबला वादन के विकास में विभिन्न बाजों और घरानों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। इस कारण आलेख में घराना परंपरा के उद्भव, विकास तथा भारतीय संगीत की पारंपरिक गुरु-शिष्य परंपरा पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ ही तबले के प्रमुख घरानों की विशेषताओं और उनकी परंपराओं का व्यवस्थित एवं विधिवत परिचय प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

तबला वाद्य की उत्पत्ति- तबला वाद्य आधुनिक भारतीय संगीत का एक अत्यंत लोकप्रिय, प्रचलित तथा महत्वपूर्ण अवनद्ध वाद्य माना जाता है। प्रारंभिक काल में इसका निर्माण मुख्यतः गायन एवं वाद्य संगीत की संगत के उद्देश्य से किया गया था, किंतु समय के साथ यह

* शोधार्थी, अवनद्ध वाद्य विभाग, संगीत संकाय, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ. ग.)

वाद्य केवल संगत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि स्वतंत्र वादन की विधा में भी अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करने में सफल हुआ। आज तबला संगत और स्वतंत्र वादन—दोनों क्षेत्रों में समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

तबला वाद्य की उत्पत्ति के विषय में आज भी कोई सर्वमान्य और निर्विवाद मत उपलब्ध नहीं है। इसके निर्माणकर्ता, उत्पत्ति-काल तथा विकास-क्रम के संबंध में अभी तक कोई ठोस एवं प्रमाणिक जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। सामान्यतः यह माना जाता है कि तबले का विकास पखावज अथवा मृदंग से हुआ है। इसके संबंध में अनेक लोकप्रचलित कथाएँ और किंवदंतियाँ भी प्रचलित हैं। एक प्रचलित मत के अनुसार पखावज को दो भागों में विभाजित करने के पश्चात उत्पन्न ध्वनि या शब्द के अपभ्रंश से 'तबला' शब्द की उत्पत्ति हुई। हालांकि, इस प्रकार की धारणाओं का कोई स्पष्ट शास्त्रीय या ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

तार्किक दृष्टि से विचार किया जाए तो यदि पखावज की कुछ बंधन-प्रणालियाँ अथवा संरचनात्मक तत्व प्रभावित होने पर उसकी ध्वनि में परिवर्तन आ सकता है, तो उसे पूर्णतः दो भागों में विभाजित करने पर उससे व्यवस्थित एवं मधुर ध्वनि उत्पन्न होने की संभावना पर प्रश्न उठना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त, पखावज को काटकर खड़ी स्थिति में रखने की परिकल्पना भी व्यावहारिक दृष्टि से अनेक प्रश्न उत्पन्न करती है।

तबले की उत्पत्ति के संदर्भ में एक अन्य लोकप्रिय मत यह है कि अमीर खुसरो को इसका जनक माना जाता है। माना जाता है कि वे अलाउद्दीन खिलजी (1290–1320 ई.) के शासनकाल से संबंधित थे। किंतु यदि वास्तव में अमीर खुसरो ने तबले का निर्माण किया था, तो यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि लगभग पाँच शताब्दियों के उपरांत 18वीं शताब्दी में ही यह वाद्य सिद्धार खाँ द्वारा व्यापक रूप से प्रचारित क्यों हुआ? इतने लंबे समय तक इसकी स्थिति और स्वरूप क्या था? ऐसे अनेक प्रश्न आज भी शोध और चर्चा का विषय बने हुए हैं।

18वीं शताब्दी में मोहम्मद शाह रंगीले (1719–1748 ई.) के शासनकाल में संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। उनके दरबार में अनेक संगीतज्ञों को संरक्षण प्राप्त था। इसी काल में ध्रुपद-धमार जैसी परंपरागत शैलियों के साथ-साथ ख्याल, ठुमरी, दादरा और कव्वाली जैसी नई गायन शैलियों का विकास हुआ। साथ ही वींणा के स्थान पर सितार जैसे तंतुवाद्यों का भी व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। इन नवींन संगीत शैलियों और वाद्यों के साथ संगत के लिए पखावज की गंभीर एवं गूंजयुक्त ध्वनि अपेक्षाकृत कम उपयुक्त सिद्ध हुई। परिणामस्वरूप अधिक कोमल, स्पष्ट और लचीली ध्वनि वाले तबला वाद्य का प्रयोग बढ़ा तथा इस प्रकार अभिजात्य संगीत परंपरा में तबले का प्रवेश और विकास हुआ।

"भारतीय उत्पत्ति के सिद्धांतो को मानने वाले तबले का मूल भारत में मानते है और ये मानते हैं कि, हाथ में लेकर बजाएँ जानेवाला ताल वाद्य पुष्कर से इसकी उत्पत्ति हुई है। ताल और तालवाद्य का वर्णन वैदिक साहित्य से ही मिलता है। दो या तीन अंगो वाले डोरियों के सहारे लटकाकर हाथो से बजाएँ जाने वाले वाद्ययंत्र 'पुष्कर' या 'पुष्क' करके 5वीं सदी में होने के प्रमाण मिलते हैं जो मृदंग के साथ अन्य ताल वाद्यो में गिने जाते थे हालाकी, तब इन्हे तबला नही कहाँ जाता था। 5वीं सदी से पहले की अंजता गुफाओं के चित्र जमिन पर रख कर बजाएँ जानेवाले ड्रमो को दिखाते हैं। बैठकर तालवाद्य बजाते हुए चित्र एलोरा गुफाओं में मिलते है, लेकिन यहकहना मुश्किल है की यह ड्रम तबला ही है या और कुछ और।[1]

तबला कई सालों से, भारत में लगभग सुल्तान अल्लाउद्दीन खिलजी के समय से मौजूद हैं ऐसा कहाँ जाता है, लेकिन उसके पहले यह वाद्य कहाँ था? इस वाद्य को तबला नाम कैसे प्राप्त हुआ? इस बारे में कोई भी ठोस जानकारी नही मिल पायी हैं। भारत में प्राचीन काल से ही तबला या तबला सदृश्य वाद्यो का अस्तित्व होने के बहुत से प्रमाण कई विद्वानोंद्वारा दिए गए हैं, इस वजह से तबले की निर्मिती का मान किसे दिया जाए? या तबले कि निर्मिती का कौनसा समय निश्चित रूप से मान लिया जाना चाहिए? ये दो सवाल आज भी उपस्थित होते हुए दिखायी देते हैं। तबला वाद्य 'तब्ल' इस अरबी वाद्य से निर्माण हुआ होगा। 'इब्न खुर्दाद बिह' इस इतिहासकार के कथनानुसार तबला वाद्य के निर्माण का श्रेय 'तबल् बी लमक' इस अरबी कलाकार को जाता हैं। यह वाद्य मुघलों द्वारा भारत में आया। ख्याल और टप्पा जैसी रचनाओं के साथ संगत के लिए तबला वाद्य का उपयोग किया गया। तबला वाद्य में एक महत्वपूर्ण सुधार यानी मृदंग पखावज के रूप में 'स्याही' का उपयोग किया गया। इसका श्रेय अमीर खुसरो को दिया जाता हैं।

डॉ. एस. आर. चिश्ती 'तबला संगतकार एवं कलाकार इस ग्रंथ में 'तबला' शब्द के बारे में लिखते है कि, "तबला तीन शब्दो से मिलकर बना है, जिसमें 'त' मतलब 'ताल' है, 'ब' मतलब 'बल' है और 'ल' मतलब 'लय' है। अर्थात, जिसमें 'ताल', 'बल' और 'लय' ये तीन चीजे सम्मिलित हो वही तबला है।"[2] तबला वाद्य के उत्पत्ति के संदर्भ में आजतक कई विद्वान और बुजुर्ग कलाकारों द्वारा अनेक संशोधन किए हुए दिखाई देते हैं। कई ग्रन्थकारो ने इसका उल्लेख अपनी-अपनी ग्रंथों में किया हुआ है जैसे डॉ. योगमाया शुक्ल, डॉ.

आबान मिस्त्रि, पं. अरविंद मुळगांवकर आदि। लेकिन तबले का उद्गम या उत्पत्ति के बारे में आजतक कोई ठोस या सटीक जानकारी नही मिल पायी हैं। तबला वाद्य के उद्गम के बारे में अनेक प्रचलित मत एवं किवदंतियाँ है उनमें से कुछ की चर्चा आगे की हुई हैं।

तबला वाद्य की उत्पत्ति के संदर्भ में विद्वानों के विचार-

- "तबला वाद्य का निर्माण करने में अमीर खुसरो का अधिक श्रेय है ऐसा माना जाता है, लेकिन पं. अरविंद मुळगावंकर अपने 'तबला' ग्रंथ में लिखते हैं कि, केवल नामसाधर्म्य की वजह से ही तबले का जनकत्व खुसरो खाँ की जगह अमीर खुसरो के पास चला गया है"।[3]
- "अमीर खुसरो (सन 1275 से 1325 ई.) ने तबले का आविष्कार किया। इसका कारण मात्र यह था की सन 1855 ई. में हकीम मोहम्मद करम इमाम द्वारा उर्दू भाषा में लिखी गई पुस्तक 'मअनद-उल-मूसिकी में तबले के अविष्कारक का नाम अमीर खुसरो लिखा हुआ हैं।[4]
- "13वीं शताब्दी के पूर्व भारत में तबले का अस्तित्व था, ऐसा महम्मद करम इमाम में भी लिखा है। उनके अनुसार सुल्तान गयासउद्दीन बलबन के दरबारी कलाकारो की संगत के लिए जो ताल वाद्य प्रयुक्त होता था, वह आज भी तबले बायें की जोडी से बहुत साम्य रखता था। अंतर केवल इतना था की उनपर स्याही नहीं लगती थी"।[5]
- "प्राचीन काल में अरेबिया में 'तबला' और 'नक्कारा' जैसे वाद्य, सैनिकों को युद्ध में प्रोत्साहित करने के हेतू प्रयुक्त थे। घोडे या ऊँट की पीठ पर रख करके वह लकडी से बजाया जाता था, जिसे 'तब्लजंग' कहा जाता था। अरब देशों में आज भी 'तब्लजंग प्रसिद्ध वाद्य है, जो कमर पर बांधकर या ऊँट की पीठपर रखकर लकडी से बजाया जाता हैं। कुछ लोगों की धारणा है की इसी 'तब्लजंग' से तबला बना है। अतः तबला विदेशी वाद्य हैं और यवनों के साथ भारत आया हैं"।[6]
- "कुदऊसिंह के गुरू भवानीदीन ने दिल्ली के बादशाह मोहम्मदशाह रंगीले को तीन लाख परनें सुनाकर प्रसन्न किया था। आचार्य बृहस्पति जी ने भी भवानीदीन को मोहम्मदशाह रंगीले के दरबारी कलाकार के रूप में उल्लेख किया है। यदी भवानीदीन और सिद्धार खाँ समकालीन थे तो सिद्धार खाँ का काल मोहम्मदशाह रंगीले के समय ही होना चाहीए जो सन 1716 से 1748 ई. का है। वैसे भी धृपद गायकी की लोकप्रियता 18वीं शताब्दी के आरंभ तक बनी रही, ऐसा विविध इतिहासकारों का सर्वानुमत प्राप्त होता है। अतः तबले का विकास 18वीं शताब्दी के आरंभ के बाद ही हुआ होगा यह निष्कर्ष अधिक तर्कसंगत लगता हैं"।[7]
- "पं. उमेश मोघे 'देहली का तबला' इस ग्रन्थ में लिखते हैं कि "तबला यह 300-400 साल पुराना साज नही, बल्कि मृदंग की तरह नाट्यशास्त्र के काल का साज है"।[8]

कुछ विद्वानों के अनुसार महाराष्ट्र के संबल तथा चौघड़ा (लघु नगाड़ा) और उत्तर भारत एवं पंजाब क्षेत्र में प्रचलित दुक्कड़ जैसे वाद्य यंत्र दो पृथक पात्रों अथवा भागों से निर्मित होते थे। इनमें दुक्कड़ एक ऐसा वाद्य माना जाता था, जिसे हाथों द्वारा बजाया जाता था। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि इन वाद्यों का उपयोग मुख्यतः लोकसंगीत एवं सुगम संगीत की संगत तथा प्रस्तुति के लिए किया जाता रहा होगा। इन वाद्यों की संरचना और वादन-पद्धति को देखते हुए कुछ विद्वान इन्हें तबले के प्रारंभिक स्वरूप अथवा उसके विकासक्रम से संबंधित मानते हैं।

- "दुक्कड जैसे दो बर्तनोंवाले अन्य वाद्यों का कलाकारों ने अपनी आजीविका के लिए उपयोग किया होगा, उसके लिए उन्होंने पखावज की तालीम भी ली होगी। संभवतः ऐसा भी हुआ होगा की पखावज बजानेवाले कलाकारोंपर अपने गुजारे के लिए दुक्कड जैसे दो बर्तनोंवाले वाद्य बजाने की नौबत आ गई होंगी। किन्तु एक बात निश्चित है की पखावज वादक कुछ काल तक दुक्कड जैसा वाद्य भी बजाया करते होंगे" ।[9]

कुछ विद्वानों की मान्यता है कि तबला वाद्य का उद्भव पंजाब क्षेत्र में हुआ। उनके अनुसार तबले का निर्माण मृदंग की संरचना एवं परंपरा को आधार बनाकर लाला भवानीदास द्वारा किया गया था। इस मत के समर्थन में यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि पंजाब में तबले के बाएँ भाग पर आटे का लेप लगाने की परंपरा प्रचलित रही है, जो मृदंग की वादन-पद्धति और संरचनात्मक विशेषताओं से साम्य रखती प्रतीत होती है। इसी समानता के आधार पर कुछ विद्वान तबले की उत्पत्ति को मृदंग परंपरा से जुड़ा हुआ मानते हैं।

- "भरत कालीन दर्दर वाद्य का नाम, बोलीभाषा में 'दरदर' से दर और दर से 'धार हुआ होगा और यह वाद्य वादक 'धारी' नाम से प्रसिद्ध हुए होंगे"।[10]
- पं. सुधीर माईणकर 'तबला कला और शास्त्र इस ग्रन्थ में तबला वाद्य के अविष्कार के बारे में लिखते है कि, "तबले का जन्म या अविष्कार के सम्बन्ध में कहाँ जाता है कि खुसरो खाँ अथवा अमीर खुसरो ने तबले को जन्म दिया है, तो कोई यह मानता

है कि, पखावज को बीच से किसी ने काट दिया तब भी बोला से तब्बोला' और 'तब्बोला' से 'तबला' नाम से यह प्रचलित हुआ, तो किसी के मुताबिक तबला अरब देश से आया हुआ है। किसी की यह मान्यता है कि इसके जन्मदाता सिध्दर खाँ ढाढी है, तो कोई यह मानता है कि खब्बे हुसेन ढोलकिया ने तबले को जन्म दिया है। इसी तरह इस सम्बन्ध में अनेक मत-मतातंर दिखाई देते हैं।[11] इस बात से पता चलता है की तबलावाद्य का निर्माण किसी एक विशेष व्यक्ति द्वारा या किसी कालखण्ड में नही हुआ है।

- डॉ. सुदर्शन राम अपने 'तबले के घराने वादन शैलियाँ एवं बंदिशे' इस ग्रंथ में लिखते है कि, 13वीं शताब्दी के अल्लाउद्दीन खिलजी कालीन अमीर खुसरों ही इस वाद्य के जन्मदाता है, तो फिर यह प्रश्न उठना स्वाभाविक हो जाता है कि लगभग 13वीं शताब्दी से 17वीं शताब्दी के बीच निर्मित प्रस्तर शिल्पों या चित्रों में इस वाद्य का अंकन क्यों नही मिलती। 18वीं शताब्दी में सिधार खाँ. या सुधार खाँ द्वारा यह 500 वर्ष बाद प्रचार में क्यों आया। इतने काल तक इस वाद्य की क्या स्थिती रही।[12]
- "सुप्रसिद्ध संगीताचार्य ठाकुर जयदेव सिंह तबले को प्राचीन भारतीय लोक वाद्य का परिष्कृत रूप और तबला शब्द को 'तब्ल' का अपभ्रंश मानते हैं। उनके अनुसार तबला अपने अपरिष्कृत रूप में प्राचीन काल से ही भारत में था, किन्तु 18वीं शताब्दी तक न तो उसे आज की तबला जोडी जैसा रूप प्राप्त हुआ था और नाही वह अधिक प्रचार में था। यहीं कारण है कि मोहम्मद शाह रंगीले के युग तक हम तबले की चर्चा कहीं नहीं पाते।[13]
- तबला वाद्य के उत्पत्ति के बारे में पं. सुरेश तळवलकर अपनी मराठी अनुवादित 'आवर्तन' इस ग्रन्थ में लिखते हैं कि, "भारत सोडल्यास इतरत्र कोणत्याही संस्कृतीत वा देशात चर्मावाद्यावर शाईच्या लेपनाचा उल्लेख किंवा पुरावा सापडत नाही. अस असताना उगाच तबला या वाद्याचं मुळ इराण, पर्शिया यांसारख्या मध्य पूर्वेकडील देशांशी किंवा संस्कृतीशी जोडण्यात काय अर्थ आहे? बरं, आजच्या काळात इराण किंवा मध्य पूर्वेकडील देशात तबला सदृश्य काही वाद्यं वाजत आहेत का, तर तसही दिसत नाही, तबला वाद्याच्या नावाशी केवळ काही साधर्म्य सांगणाऱ्या वाद्याच्या जोरावर (तबलजंग तबल-वबलावीं, तबलमिर्गी इ.) तबलावाद्याच्या उत्पत्तीचं सर्व श्रेयच या परकीय संस्कृतीना देण्यात मला काही राम नाही."[14]
- पं. जमुना प्रसाद पटेल अपनी 'तबला वादन की विस्तारशील रचनाएँ इस किताब में लिखते हैं कि, "दिल्ली में सिध्दार खाँ के साथ एक प्रतियोगिता हुई थी, जिसमें मृदंग वादक ने उन्हें परास्त कर दिया था। लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी और बाएँ अर्थात डग्गे के ऊपर लगे आटे का लेप हटाकर दाहिने की भाँति लोहे के चूर्ण का मसाला रखवाया और ढोलक के समस्त बोलों का सर्वत्र स्वागत हुआ। इसके पूर्व तक तबला, मृदंग की भाँति खुले हाथों से बजाया जाता था, किन्तु बाएँ में स्याही लगने से उसमें बंद बोल भी बजने लगे। इन बंद बोलो का वादन सिध्दार खाँ ने चलाया। आगे चलकर इसी बंद बोलो के बाज को दिल्ली बाज के नाम से पुकारा जाने लगा।[15]

निष्कर्ष : विभिन्न तबला वादकों, संगीतविदों तथा ग्रंथकारों के मतों और विचारों के अध्ययन के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि तबला वाद्य की उत्पत्ति के संबंध में कोई एक सर्वमान्य और अंतिम निष्कर्ष उपलब्ध नहीं है। तथापि उपलब्ध ऐतिहासिक, सांगीतिक तथा तार्किक तथ्यों के आधार पर यह प्रतीत होता है कि तबले का निर्माण पखावज को मध्य से विभाजित कर दो भागों में करने से नहीं हुआ तथा न ही इसके निर्माण का श्रेय 13वीं शताब्दी के अमीर खुसरो अथवा खुसरो खाँ को निश्चित रूप से दिया जा सकता है। इसी प्रकार तबले को विदेशी अथवा अरबी मूल का वाद्य मानने संबंधी मत भी पर्याप्त प्रमाणों के अभाव में पूर्णतः स्वीकार्य प्रतीत नहीं होते।

अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आता है कि आधुनिक संगीत जगत का अत्यंत प्रतिष्ठित और लोकप्रिय वाद्य तबला प्राचीन भारतीय अवनद्ध वाद्य *पुष्कर* के ऊर्ध्वक तथा आलिंग्य अंगों का परिष्कृत एवं विकसित स्वरूप है। त्रिपुष्कर के विभिन्न अंगों का समय के साथ स्वतंत्र रूप से विकास हुआ, जिसके परिणामस्वरूप अंकिक से पखावज (मृदंग) तथा ऊर्ध्वक एवं आलिंग्य से तबले का क्रमिक विकास हुआ। बदलते समय, संगीत की आवश्यकताओं तथा वादन शैली के विकास के अनुरूप तबले ने वर्तमान स्वरूप ग्रहण किया।

यह भी स्पष्ट होता है कि ख्याल गायन तथा अन्य नवीन संगीत शैलियों की संगत की आवश्यकता ने तबले के विकास को विशेष गति प्रदान की। तबले की वादन-पद्धति में सुधार, उसके स्वरूप में आवश्यक परिवर्तन तथा उसके प्रचार-प्रसार में उस्ताद सिद्धार खाँ का महत्वपूर्ण योगदान रहा। साथ ही उन्होंने दिल्ली घराना की स्थापना की, जिसे आज तबले का आद्य एवं प्राचीनतम घराना माना जाता है। इस प्रकार तबला भारतीय संगीत परंपरा की दीर्घ विकास-यात्रा का परिणाम है, जिसने समय के साथ अपनी विशिष्ट पहचान और गरिमा स्थापित की है।

संदर्भ सूची –

1. https://youtube/zklyTekthsQ
2. सरल, भीमसेन, 'तबला संगतकार एवं कलाकार', कनिष्क पुब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली, आवृत्ती 2014, पृ. 90
3. दंडगे, आमोद, "'सर्वांगीण तबला' (मराठी), भैरव प्रकाशन, कोल्हापुर, चौथा संस्करण, 2017. पृ. 49.
4. डॉ. मिस्त्री, अबान ए. 'पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराये" प्रकाशक पं. केफी एस. जिजिना, स्वर साधना समिति, बम्बई, पृ. 107
5. डॉ. मिस्त्री, अबान ए. 'पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराये" पं. केफी एस. जिजिना, स्वर साधना समिति, बम्बई, प्रकाशक पृ. 108
6. डॉ. मिस्त्री, अबान ए. 'पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराये" प्रकाशक पं. केफी एस. जिजिना, स्वर साधना समिति, बम्बई, पृ. 110
7. डॉ. मिस्त्री, अबान ए. 'पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराये" प्रकाशक पं. केफी एस. जिजिना, स्वर साधना समिति, बम्बई, पृ. 4
8. मोघे, उमेश, "देहली का तबला' (हिंदी), श्री. उमेश वि. मोघे, पुणे प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ.12
9. डॉ. मिस्त्री, अबान ए. 'पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराये" प्रकाशक पं. केफी एस. जिजिना, स्वर साधना समिति, बम्बई, पृ. 111
10. मोघे, उमेश, "देहली का तबला" (हिंदी), श्री. उमेश वि. मोघे, पुणे प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ. 10
11. माईणकर, सुधीर, 'तबलावादन कला और शास्त्र", (हिंदी) गांधर्व महाविद्यालय, मिरज, प्रथम संस्करण, 2000, पृ. 11
12. राम, सुदर्शन, 'तबले के घराने वादन शैलियाएवं बंदिशे, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2008, पृ. 21
13. पाण्डेय, कृतानन्द, तबला वादन शिक्षा के बदलते आयाम', कनिष्क पब्लिषर्स, नई दिल्ली: 2016, पृ. 72
14. तळवलकर, सुरेश, "आवर्तनः भारतीय संगीतातील, स्थूलता आणि सूक्ष्मता (मराठी), राजहंस प्रकाशन, पुणे, प्रथम संस्करण, 2014, पृ. 84.
15. पटेल, जमुनप्रसाद, 'तबला वादन कि विस्तारशील रचनाएँ", कनिष्क पब्लिषर्स, नई दिल्ली, 2011, पृ. 5

किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में धार्मिकता के प्रभाव का अध्ययन

अमित कुमार सिंह*
प्रो. (डॉ.) पूनम सिंह**

शोध–सारांश

वर्तमान समय में मनोवैज्ञानिक कल्याण मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण साबित हो रही है, क्योंकि आज मानव जीवन अनेक प्रकार के अवांछित कारकों से प्रभावित होता रहता है, जिससे उनके मनोवैज्ञानिक पटल पर अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती है। उसी संदर्भ में ''किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता के प्रभाव का अध्ययन'' नामक शीर्षक पर शोध कार्य किया गया है। इस शोध में किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता के प्रभाव की जानकारी प्राप्त करने को शोध का उद्देश्य लक्षित किया गया है। इसके लिए सारण जिला क्षेत्र से कुल पाँच विभिन्न इंटरमीडिएट विद्यालयों से कुल 300 किशोर–किशोरियों का चयन उत्तरदाता के रूप में किया गया। चयनित उत्तराताओं की उम्र सीमा 12 वर्ष से 19 वर्ष (औसत उम्र–15.6 वर्ष) थी। सिसौदिया एवं चौधरी द्वारा विकसित मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी, एल०आई० भूषण द्वारा विकसित धार्मिकता मापनी एवं स्वयं द्वारा विकसित व्यक्तिगत सूचना प्रपत्र के माध्यम से प्रदत्त संग्रह का कार्य किया गया। संग्रहित किए गए प्रदत्तों के सांख्यिकीय विश्लेषण के उपरान्त तैयार किए गए परिणाम के आधार पर स्पष्ट है कि (i) धार्मिकता एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच सकारात्मक सहसंबंध होता है। (ii) किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता की मनोवृत्ति का सकारात्मक प्रभाव होता है। (iii) निजी विद्यालय के किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्थिति सरकारी विद्यालय के किशोरों की अपेक्षा बेहतर होती है। (iv) किशोरियों की अपेक्षा किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छी होती है। (v) अभिभावक–बालक संबंध की दृष्टि से किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में सार्थक भिन्नता होती है अर्थात् अच्छे अभिभावक–बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छा एवं खराब अभिभावक–बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छी नहीं होती है।

शब्द कुंजी : किशोरों, मनोवैज्ञानिक, कल्याण, धार्मिकता, प्रभाव, अध्ययन

परिचय :

मानवीय विकास की विभिन्न अवस्थाओं में किशोरावस्था एक मुख्य अवस्था होती है। यह अवस्था 11 वर्ष से लेकर 17 वर्ष तक मानी जाती है। विकास की इस अवस्था में बालकों में तीव्र गति से विकास होता है। शारीरिक–मानसिक परिवर्तन के अलावे प्रजनन संबंधी परिवर्तन किशोरावस्था की मुख्य विशेषता होती है। साथ हीं, किशोरों में विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है। विभिन्न प्रकार की संवेदनशीलता एवं भावनात्मक वृद्धि के कारण बच्चे बात–बात में अपनी प्रतिष्ठा प्रकट करने लगते हैं एवं अपनी पहचान और प्रभावशीलता कायम करना चाहते हैं।

किशोरावस्था में किशोरों का अपने परिवार के अलावे वैसे दोस्तों के साथ संपर्क होता है जो उसके सामाजिक वातावरण में रहता है। इस क्रम में किशोर अपने समाज में भी अपनी पहचान बनाने का प्रयास करते हैं। किशोरावस्था की सबसे मुख्य विशेषता यह होती है, कि किशोर में मानसिक बदलाव होता है, जिसके कारण उनमें सकारात्मक विचार कम एवं नकारात्मक विचार अधिक होता है।

किशोरावस्था में अच्छे तरीके से देख–रेख करने, मार्गदर्शन एवं प्रेरणा इत्यादि की आवश्यकता होती है जिससे किशोरों में उचित रूप से सर्वांगीण विकास होता है।

मनोवैज्ञानिक कल्याण एक ऐसी अवधारणा है, जिसका स्वरूप बहुआयामी होता है। इसमें जीवन भर दूसरों के साथ अच्छा संबंध बनाने एवं अनुकूलन की कुशलता का गुण होता है। यह एक सकारात्मक मनोवैज्ञानिक स्थिति होती है, जिसमें व्यक्ति अपनी भावनाओं को समझता है, तनाव का प्रबंधन करता है और

* शोधार्थी (मनोविज्ञान), जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार
** स्नातकोत्तर, मनोविज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

अपने जीवन में संतुलन बनाए रखता है। मनोवैज्ञानिक कल्याण व्यक्तिगत विकास एवं अच्छे सामाजिक संबंध के लिए महत्वपूर्ण होता है।

मनोवैज्ञानिक कल्याण मानसिक स्वास्थ्य का केन्द्रीय स्थल होता है। इसमें लचीलापन की प्रवृत्ति, संवेग का नियमन, सामना करने की कुशलता एवं समस्या समाधान का गुण होता है। विभिन्न शोधों के आधार पर पाया गया है कि मनोवैज्ञानिक कल्याण मानवीय जीवन को समृद्ध बनाती है।

किशोरावस्था में मनोवैज्ञानिक कल्याण की अहम भूमिका होती है। सामान्य रूप से किशोरावस्था में किशोरों के सही मार्ग से भटकने की संभावना अधिक होती है। ऐसी स्थिति में मनोवैज्ञानिक कल्याण किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को अच्छा बनाती है, जिससे किशोर सही रास्ते से भटकने से बच जाता है। अनेक शोधों के आधार पर किशोरावस्था में मनोवैज्ञानिक कल्याण की महत्ता को प्रमाणित भी किया गया है।

धार्मिकता मानवीय जीवन का वह गुण है, जिसके द्वारा व्यक्ति धार्मिक– क्रियाकलापों में संलग्न रहता है। धर्म प्राचीन काल से ही मानव के लिए मुख्य प्रेरक तत्व रहा है। प्राचीन कारक में धर्म का कोई स्पष्ट स्वरूप नहीं था लेकिन प्राकृतिक घटनाओं एवं शक्तियों से भयभीत होना और उनकी पूजा करना मानवीय जीवन का मुख्य धार्मिक क्रियाकलाप था।

समय परिवर्तन के साथ–साथ लोगों के धार्मिकता की प्रवृत्ति में भी परिवर्तन होता रहा है। समाज के अंदर व्यक्तियों में वैचारिक भिन्नता, रीति रिवाज, जीवनशैली, धार्मिक भिन्नता इत्यादि के कारण धार्मिकता की भावना में परिवर्तन हुआ है।

किशोरावस्था में धार्मिकता की अवधारणा भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालती है। विभिन्न शोधों के माध्यम से परामर्शित किया गया है कि धार्मिकता की भावना किशोरों में सकारात्मक बदलाव लाता है, जिससे किशोरों में नकारात्मकता की प्रवृत्ति समाप्त होती है और सकारात्मक गुणों का विकास होता है।

पूर्व के अध्ययनों की समीक्षा :

इस शोध में शोध कार्य में मानकता लाने एवं सही दिशा में शोध कार्य करने के लिए पूर्व में किए गए शोध शीर्षक आधारित कुछ अध्ययनों का अवलोकन भी किया गया है।

शाहीना एवं प्रवीण (2022) ने किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का अध्ययन किया है और परामर्शित किया है कि किशोरों के व्यक्तिगत विकास, जीवन सार्थकता एवं मनोवैज्ञानिक अच्छाई के बीच सकारात्मक सहसंबंध होता है।

मनोवैज्ञानिक प्रतिबल, व्यक्तिगत विकास एवं मनोवैज्ञानिक अच्छाई के बीच संबंध की जानकारी के उद्देश्य से अयुब एवं इकबाल (2012) ने अध्ययन किया है और जानकारी दी है कि मनोवैज्ञानिक प्रतिबल मनोवैज्ञानिक कल्याण के साथ नकारात्मक रूप से संबंधित होती है। इसके अलावे उन्होंने मनोवैज्ञानिक कल्याण और व्यक्तिगत विकास को सापेक्ष रूप से प्रभावित करती है।

पांडेय एवं परीक (2022) ने मनोवैज्ञानिक कल्याण के संबंध में सर्वेक्षणात्मक अध्ययन के आधार पर जानकारी दी है कि मनोवैज्ञानिक कल्याण मनुष्य के सर्वांगीण अच्छाई में सकारात्मक भूमिका होती है।

चौधरी एवं अहमद (2017) ने मनोवैज्ञानिक अच्छाई से संबंधित शोध परिणाम में पाया है कि महिलाओं के कार्यरत रहने अथवा नहीं रहने का उनके मनोवैज्ञानिक कल्याण पर भिन्नात्मक प्रभाव पड़ता है।

गुप्ता एवं सिन्हा (2018) ने महिलाओं के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर प्रतिबल एवं समायोजन के प्रभाव का अध्ययन किया है और परिणाम के रूप में पाया है कि प्रतिबल एवं समायोजन स्तर में भिन्नता होने पर मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर भी भिन्न होता है, जिसका स्वरूप नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों प्रकार का होता है।

ढिल्लन (2024) ने मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाने में आध्यात्मिकता एवं धर्म की भूमिका का अध्ययन किया है और प्रतिफल के रूप में पाया है कि मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में आध्यात्मिकता एवं धार्मिकता की भावना सकारात्मक भूमिका निभाती है।

प्रतिबल, निराशा, चिन्ता और आध्यात्मिकता के संबंध में जैन इत्यादि (2007) ने क्षेत्र आधारित अध्ययन में पाया है कि आध्यात्मिकता प्रतिबल और निराशा को जहाँ कम करती है वहीं चिन्ता के स्तर को भी घटाती है।

मोखा (2023) ने मानसिक स्वास्थ्य पर धार्मिकता एवं त्याग के प्रभाव का अध्ययन किया है और परामर्शित किया है कि धार्मिक व्यक्ति में जहाँ कुशलता, अच्छाई का अनुभव एवं नेतृत्व क्षमता को बढ़ाती है वहीं दूसरी तरफ चिन्ता, निराशा एवं अन्य प्रकार की मानसिक अस्वस्थता को बढ़ाती है।

दास इत्यादि (2013) ने मानसिक स्वास्थ्य और अच्छाई को लेकर शोधात्मक अध्ययन किया है और जानकारी दी है कि धार्मिकता की भावना मानसिक स्वास्थ्य के स्तर को बढ़ाने में सार्थक भूमिका निभाती है। इसके अलावे उन्होने व्यक्तिगत भिन्नता आधारित कारक का धार्मिकता की मनोवृत्ति पर भिन्नात्मक प्रभाव पाया है।

अब्दुल्ला इत्यादि (2022) ने व्यस्कावस्था में धार्मिकता और जीवन गुणवत्ता का अध्ययन किया है एवं परिणाम के रूप में जानकारी दी है कि धार्मिकता की भावना जीवन की गुणवत्ता एवं कुशलता को बढ़ाती है और निराशा को कम करती है। इसके अतिरिक्त उन्होंने धार्मिकता से संज्ञानात्मक प्रक्रिया भी बेहतर होती है।

मिश्रा एवं ठाकुर (2021) ने वृद्धों में धार्मिकता, आध्यात्मिकता एवं अकेलापन का क्षेत्र आधारित अध्ययन किया है और परिणाम में पाया है कि धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता आधारित क्रियाकलाप, वृद्धों में अकेलापन को कम करती है।

गौतम इत्यादि (2007) ने वृद्धों में मानसिक स्वास्थ्य एवं धर्म का शोध आधारित अध्ययन किया है और परिणाम में पाया है कि धर्म आधारित क्रियाकलाप मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सकारात्मक भूमिका निभाती है।

शोध का उद्देश्य :

शोध में किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता के प्रभाव को जानने को शोध का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

परिकल्पनाएँ :

(i) धार्मिकता एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच सकारात्मक सहसंबंध होगा।
(ii) धार्मिकता की दृष्टि से किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में सार्थक भिन्नता होगी।
(iii) किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर विद्यालय के प्रकार संबंधी कारक का प्रभाव होगा।
(iv) किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर यौन संबंधी कारक का सार्थक प्रभाव होगा।
(v) किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर अभिभावक–बालक संबंध संबंधी कारक का अलग–अलग प्रभाव होगा।

शोध प्रविधि :

(I) प्रतिदर्श :

इस शोध में सारण जिला क्षेत्र से विभिन्न इंटरमीडिएट विद्यालयों से कुल 300 किशोर–किशोरियों का चयन किया गया। चयनित उत्तरदाताओं की उम्र सीमा 12वर्ष से लेकर 19 वर्ष (औसत उम्र 15.6 वर्ष) थी। इतनी संख्या में उत्तरदाताओं का चयन इस मान्यता पर आधारित था कि चयनित प्रतिदर्श सम्पूर्ण किशोर–किशोरी वर्ग का प्रतिनिधित्व करेगा।

(II) मापनियाँ :

(a) मनोविज्ञान कल्याण मापनी :

उत्तरदाताओं के संबंध में मनोवैज्ञानिक कल्याण की जानकारी के लिए सिसोदिया एवं चौधरी द्वारा विकसित मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी का प्रयोग किया गया। इस मापनी में मनोवैज्ञानिक कल्याण से संबंधित कुल 50 एकांशों को सम्मिलित किया गया है। वर्तमान में यह मापनी व्यक्तियों में मनोवैज्ञानिक रूप से अच्छाई की जानकारी के लिए एक विश्वसनीय, वास्तविक, वैध एवं उपयोगी मापनी है।

(b) धार्मिकता मापनी :

प्रतिदर्शों के संबंध में धार्मिकता स्तर की जानकारी के लिए एल०आई० भूषण द्वारा विकसित धार्मिकता मापनी का प्रयोग किया गया। कुल 36 एकांशों वाले इस मापनी में उत्तरदाता के द्वारा प्राप्त अधिकतम अंक उच्च धार्मिकता तथा निम्नतम अंक निम्न धार्मिकता स्तर को सूचित करता है।

(c) व्यक्तिगत सूचना प्रपत्र :

उत्तरदाताओं के संबंध में व्यक्तिगत जानकारी के लिए स्वयं द्वारा विकसित व्यक्तिगत सूचना प्रपत्र का प्रयोग किया गया।

प्रदत्त–संग्रह की प्रक्रिया :

प्रस्तुत शोध में उत्तरदाताओं से प्रदत्तों के संग्रहण के लिए अच्छे तरीके से योजना बनाई गई। बनाई गई योजना के अनुसार अध्ययन क्षेत्र का भ्रमण किया गया और लक्षित उत्तरदाताओं से संपर्क किया गया।

तत्पश्चात् उत्तरदाताओं के साथ आपसी विमर्श के आधार पर निर्धारित स्थान, तिथि एवं समय पर अल्प समूह की स्थिति में चयनित मापनियों को प्रशासित करते हुए प्रदत्त–संग्रह का कार्य किया गया।

प्रदत्तों का विश्लेषण :

संग्रहित किए गए प्रदत्तों को सांख्यिकीय विधि के आधार पर विश्लेषित करते हुए समसामयिक संदर्भ में परिणाम तैयार किया गया।

परिणाम :

इस शोध में प्राप्त किए गए परिणामों का प्रस्तुतिकरण निम्नवत् है :

सारणी संख्या–(i)

धार्मिकता एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच सहसंबंध

मापनी	मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर	सार्थकता का स्तर
धार्मिकता स्तर (उच्चतम आंकड़ा)	0.97	<.01

सारणी संख्या–(ii)

धार्मिकता की दृष्टि से मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति संबंधी परिणाम

समूह	संख्या	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	टी–मूल्य	सार्थकता का स्तर	स्वतंत्रता का अंश
उच्च धार्मिकता वाले उत्तरदाताएँ	150	176.32	19.64	1.60	8.16	<.01	298
निम्न धार्मिकता वाले उत्तरदाताएँ	150	160.44	13.98	1.10			

सारणी संख्या–(iii)

किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर विद्यालय के प्रकार संबंधी कारक का प्रभावात्मक परिणाम

समूह	संख्या	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	टी–मूल्य	सार्थकता का स्तर	स्वतंत्रता का अंश
सरकारी विद्यालय की उत्तरदाताएँ	150	178.11	20.32	1.65	9.59	<.01	298
निजी विद्यालय की उत्तरदाताएँ	150	158.65	14.30	1.16			

सारणी संख्या–(iv)

किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर यौन संबंधी कारक के प्रभाव से संबंधित परिणाम

समूह	संख्या	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	टी–मूल्य	सार्थकता का स्तर	स्वतंत्रता का अंश
किशोर उत्तरदाताएँ	150	174.78	17.44	1.42	6.78	<.01	298
किशोरी उत्तरदाताएँ	150	161.98	15.18	1.23			

सारणी संख्या–(v)

समूह	संख्या	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	टी–मूल्य	सार्थकता का स्तर	स्वतंत्रता का अंश
अच्छी अभिभावक–बालक संबंध वाले उत्तरदाताएँ	150	179.64	19.89	1.62	11.67	<.01	298
खराब अभिभावक–बालक संबंध वाले उत्तरदाताएँ	150	157.12	12.73	1.03			

किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर अभिभावक–बालक संबंधी कारक का प्रभावात्मक परिणाम

व्याख्या :

सारणी संख्या (i) के अवलोकन से स्पष्ट है कि किशोरों में जब धार्मिकता की भावना बढ़ती है तो उसमें मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर बढ़ता है। इस तरह के परिणाम के संबंध में कहा जा सकता है कि धार्मिकता की भावना बढ़ने से किशोरों के मानसिक स्तर पर सकारात्मक परिवर्तन होता है और उनमें आन्तरिक अच्छाई की भावना सृजित होती है। अतः इस परिणाम के संबंध में पूर्व में निर्मित्त परिकल्पना संख्या (i) कि ''धार्मिकता एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच सकारात्मक सहसंबंध होगा'' प्रमाणित होती है।

सारणी संख्या (ii) में प्रस्तुत किए गए परिणाम के अवलोकन से स्पष्ट है कि किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता की मनोवृत्ति का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि धार्मिकता की प्रवृत्ति वाले किशोरों ने मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी पर अधिक माध्य (176.32) एवं मानक विचलन (19.64) प्राप्त किया है, जबकि धार्मिकता की मनोवृत्ति नहीं रखने वाले किशोरों ने मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी पर अपेक्षाकृत कम माध्य (160.44) एवं मानक विचलन (13.98) प्राप्त किया है। इस संबंध में परिकलित टी–मूल्य (8.16) विश्वास के <.01 स्तर पर सार्थक पाया गया है। इस परिणाम के आधार पर कहा जा सकता है कि धार्मिकता की भावना मनोवैज्ञानिक रूप से किशोरों को अच्छा बनाती है। अतः यह परिणाम पूर्व में निर्मित परिकल्पना संख्या (ii) कि''धार्मिकता की दृष्टि से किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में सार्थकता भिन्नता होगी'' प्रमाणित होती है।

सारणी संख्या (iii) में वर्णित परिणाम के अवलोकन से स्पष्ट है कि किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर विद्यालय के प्रकार संबंधी कारक का भिन्नात्मक एवं सार्थक प्रभाव पड़ता है। इस संबंध में निजी विद्यालय के किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर अच्छा पाया गया है, जबकि सरकारी विद्यालय के किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर अपेक्षाकृत कम अच्छा पाया गया। इस तरह के परिणाम के संबंध में हम निजी विद्यालयों के किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की अच्छी स्थिति के पीछे हम निजी विद्यालय में बेहतर शैक्षिक एवं शासकीय प्रबंधन को महत्वपूर्ण कारण मान सकते हैं। अतः यह परिणाम पूर्व में निर्मित परिकल्पना संख्या (iii) कि ''किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर विद्यालय के प्रकार संबंधी कारक का प्रभाव होगा'' प्रमाणित होती है।

सारणी संख्या (iv) में उपस्थापित किए गए परिणाम के अवलोकन से स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर यौन संबंधी कारक का सार्थक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि किशोर उत्तरदाताओं ने जहाँ मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी पर अधिक माध्य (174.78) एवं मानक विचलन (17.44) प्राप्त किया है, जबकि किशोरी उत्तरदाताओं ने मनोवैज्ञानिक कल्याण मापनी पर अपेक्षाकृत कम माध्य (161.98) एवं मानक विचलन (15.18) प्राप्त किया है। दोनों समूहों के द्वारा प्राप्त किए गए माध्यों एवं मानक विचलनों के आधार पर परिकलित टी–मूल्य (6.78) विश्वास के <.01 पर सार्थक भी पाया गया है। इस परिणाम के आधार पर कहा जा सकता है कि किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर किशोरियों की अपेक्षा अधिक बेहतर है। अतः यह परिणाम पूर्व में निर्मित परिकल्पना संख्या (iv) कि ''किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर यौन संबंधी कारक का सार्थक प्रभाव होगा'' प्रमाणित होती है।

सारणी संख्या (v) में प्रस्तुत किए गए परिणाम के आधार पर कहा जा सकता है कि अच्छे अभिभावक बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर अधिक है, जबकि खराब अभिभावक–बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर अधिक अच्छा नहीं है। इस संबंध में परिकलित टी–मूल्य (11.67) विश्वास के स्तर भी सार्थक पाया गया है। इस तरह के परिणाम के संबंध में कहा जा सकता है कि अभिभावक एवं उनके बच्चों के बीच का संबंध अच्छा होने से बच्चों में मनोवैज्ञानिक

आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जिसमें वह मनोवैज्ञानिक कल्याण का अनुभव करता है। अतः यह परिणाम पूर्व में निर्मित परिकल्पना संख्या (iv) कि "किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर अभिभावक–बालक संबंधी कारक का अलग–अलग प्रभाव होगा" प्रमाणित होती है।

परिणाम का निष्कर्ष :

पण धार्मिकता एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच सकारात्मक सहसंबंध होता है।

पपण किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर धार्मिकता की मनोवृत्ति का सकारात्मक प्रभाव होता है।

पपपण निजी विद्यालय के किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्थिति सरकारी विद्यालय के किशोरों की अपेक्षा बेहतर होती है।

पअण किशोरियों की अपेक्षा किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छी होती है।

अण अभिभावक–बालक संबंध की दृष्टि से किशोरों के मनोवैज्ञानिक कल्याण में सार्थक भिन्नता होती है अर्थात् अच्छे अभिभावक–बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छा एवं खराब अभिभावक–बालक संबंध वाले किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की स्थिति अच्छी नहीं होती है।

शोध की सीमाएँ :

प्रस्तुत शोध में कुछ कमियों के होने से इंकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि अल्प संख्या में प्रतिदर्श के आधार पर सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए अवधारणा बनाना एवं तकनीकी कठिनाई से शोध में कमी का होना स्वाभाविक है।

परामर्शन :

इस शोध में प्राप्त परिणाम के आधार पर स्पष्ट है कि यह शोध किशोरों में मनोवैज्ञानिक कल्याण की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। अतः इस शीर्षक से संबंधित व्यापक प्रतिदर्श बनाकर शोध कार्य करने की आवश्यकता है।

संदर्भ–सूचीः

अब्दाला, जी०एल०, किमुरा, एम०, हेरोल्ड, के०जी०, रेनार्ड, के०जी० एवं हॉर्टन, के० (2022) : व्यस्कों में धार्मिकता एवं जीवन गुणवत्ता का अध्ययन, *जीवन श्रम आधारित पत्रिका,* 2(2), 25–51.

अयुब, एन० एवं इकबाल, एस० (2012) : किशोरों में व्यक्तिगत विकास मनोवैज्ञानिक कल्याण एवं मनोवैज्ञानिक प्रगति के बीच संबंध, *शिक्षण एवं शिक्षा से संबंधित पत्रिका,* 1(6), 101–107.

गौतम, आर० सैतो, टी० एवं काई, आई० (2007) : वृद्धों में मानसिक स्वास्थ्य एवं धार्मिकता के प्रभाव का अध्ययन, *बी०एम०सी० जन स्वास्थ्य आधारित पत्रिका,* 7(2), 99–112.

गुप्ता, ए०के० एवं सिन्हा, के०पी० (2018) : महिलाओं के मनोवैज्ञानिक कल्याण पर प्रतिबल एवं समायोजन के प्रभाव का अध्ययन, *पोषण एवं स्वास्थ्य आधारित पत्रिका,* 4(2), 18–25.

चौधरी, एल० एवं अहमद, ए० (2017) : सामान्य महिलाओं एवं कार्यरत महिलाओं में मनोवैज्ञानिक कल्याण का अध्ययन, *मानव संसाधन एवं औद्योगिक शोध आधारित अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका,* 4(2), 08–15.

जैन, एस० शेपिरो, एस० एल०, स्वानिक, एस०, रॉश, एस० सी०, मिल्स, पी०जे०, बेल०, आई० एवं स्वार्ज, जी०ई० (2007) : आध्यात्मिकता, चिन्ता, प्रतिबल एवं निराशा का प्रभावात्मक अध्ययन, *भारतीय मनोविज्ञान आधारित अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका,* 12(3), 2507–2514.

दास, पी०बी०, यादव, ए० एवं बेहेरे, ए०पी० (2013) : धर्म और मानसिक स्वास्थ्य, *मनोचिकित्सा आधारित भारतीय पत्रिका,* 55(2), 187–194.

पांडेय, एस०के० एवं परीक, डी० एल० (2022) : मनोवैज्ञानिक कल्याण एवं रक्षा प्रक्रम अवधारणा, आवश्यकता एवं प्रभाव, *सृजनात्मक शोध एवं चिंतन आधारित अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका,* 10(11), 565–570.

मिश्रा, एस० एवं ठाकुर, बी०सी० (2021) : वृद्धों में अकेलापन, धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता का अध्ययन, *व्यावहारिक शोध आधारित पत्रिका,* 4(3), 114–125.

शाहीना, जी० एवं प्रवीण, ए० (2022) : किशोरों में व्यक्तिगत विकास, मनोवैज्ञानिक कल्याण और जीवन सार्थकता का अध्ययन, *भारतीय मनोविज्ञान आधारित अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका,* 10(3), 144.

सिंह, पी०एन० एवं दत्ता, ए०के० (2020) : व्यक्तियों के मनोवैज्ञानिक अच्छाई पर मानसिक अस्वस्थता एवं चिन्ता का प्रभाव, *जन स्वास्थ्य आधारित अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका,* 12(4), 129–137.

हुपर्ट, एफ० ए० (2009) : मनोवैज्ञानिक कल्याण : शिक्षकों के परामर्शन के संबंध में प्रारंभिक अध्ययन, *मनोविज्ञान और शिक्षा आधारित अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार में प्रस्तुत शोध आलेख.*

◀◀ ▶▶

रोहतास जिला का भौगोलिक पर्यावरण : एक शोध पत्र

डॉ. सविता सिंह*

सारांश (Abstract)

रोहतास जिला बिहार के दक्षिण-पश्चिम भाग में स्थित एक महत्वपूर्ण भौगोलिक क्षेत्र है। यह जिला प्राकृतिक संसाधनों, पर्वतीय संरचना, नदियों, वनों तथा कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के लिए प्रसिद्ध है। प्रस्तुत शोध पत्र में रोहतास जिले के भौगोलिक पर्यावरण का अध्ययन किया गया है। इसमें स्थलाकृति, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति, जल संसाधन तथा पर्यावरणीय समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जिले का भौगोलिक पर्यावरण यहाँ के सामाजिक एवं आर्थिक विकास को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। साथ ही, पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है।

मुख्य शब्द: रोहतास जिला, भौगोलिक पर्यावरण, जलवायु, वन, नदी, कृषि, पर्यावरण संरक्षण

1. प्रस्तावना

भारत के विभिन्न क्षेत्रों की भौगोलिक परिस्थितियाँ वहाँ के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करती हैं। बिहार राज्य का रोहतास जिला अपनी भौगोलिक विविधता एवं प्राकृतिक संपदा के कारण विशेष महत्व रखता है। यहाँ पहाड़ी, पठारी एवं मैदानी तीनों प्रकार की स्थलाकृतियाँ देखने को मिलती हैं। कैमूर पर्वतमाला, सोन नदी तथा घने वन क्षेत्र जिले की प्रमुख भौगोलिक विशेषताएँ हैं।

रोहतास जिला ऐतिहासिक दृष्टि से भी प्रसिद्ध है। शेरशाह सूरी का मकबरा, रोहतासगढ़ किला तथा डेहरी-ऑन-सोन क्षेत्र इसकी ऐतिहासिक पहचान हैं। भौगोलिक पर्यावरण का अध्ययन किसी क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों एवं मानव जीवन के संबंधों को समझने में सहायक होता है। इसलिए इस शोध पत्र में रोहतास जिले के भौगोलिक पर्यावरण का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

2. अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. रोहतास जिले की भौगोलिक स्थिति एवं स्थलाकृति का अध्ययन करना।
2. जिले की जलवायु एवं प्राकृतिक संसाधनों का विश्लेषण करना।
3. कृषि एवं वनस्पति पर भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन करना।
4. पर्यावरणीय समस्याओं एवं उनके समाधान पर प्रकाश डालना।

3. अध्ययन की विधि

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। अध्ययन हेतु पुस्तकों, जनगणना रिपोर्टों, सरकारी प्रकाशनों, इंटरनेट स्रोतों तथा शोध लेखों का उपयोग किया गया है।

4. रोहतास जिले की भौगोलिक स्थिति

रोहतास जिला बिहार के दक्षिण-पश्चिम भाग में स्थित है। इसका मुख्यालय सासाराम है। यह जिला लगभग 24°57' से 25°36' उत्तरी अक्षांश तथा 83°33' से 84°03' पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है।

सीमाएँ

- उत्तर - भोजपुर एवं बक्सर
- दक्षिण - झारखंड

* वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार

- पूर्व - औरंगाबाद
- पश्चिम - कैमूर

जिले का कुल क्षेत्रफल लगभग 3,850 वर्ग किलोमीटर है।

5. स्थलाकृति एवं प्राकृतिक संरचना

(क) कैमूर पर्वतमाला

रोहतास जिले का दक्षिणी भाग कैमूर पर्वतमाला से आच्छादित है। यह क्षेत्र पथरीला एवं ऊँचाई वाला है। यहाँ अनेक जलप्रपात एवं वन पाए जाते हैं।

(ख) मैदानी क्षेत्र

जिले का उत्तरी भाग समतल एवं उपजाऊ है। सोन नदी द्वारा लाई गई जलोढ़ मिट्टी कृषि के लिए उपयुक्त है।

(ग) पठारी क्षेत्र

कुछ क्षेत्रों में पठारी भूमि पाई जाती है जहाँ वन एवं खनिज संसाधन अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं।

6. जलवायु

रोहतास जिले की जलवायु उष्णकटिबंधीय मानसूनी है। यहाँ तीन प्रमुख ऋतुएँ पाई जाती हैं–

1. ग्रीष्म ऋतु

मार्च से जून तक ग्रीष्म ऋतु रहती है। तापमान 40°C तक पहुँच जाता है।

2. वर्षा ऋतु

जुलाई से सितंबर तक मानसूनी वर्षा होती है। औसत वार्षिक वर्षा लगभग 1000-1200 मिमी है।

3. शीत ऋतु

नवंबर से फरवरी तक शीत ऋतु रहती है। तापमान 8°C से 20°C तक रहता है। जलवायु कृषि उत्पादन को प्रभावित करती है।

7. नदी एवं जल संसाधन

रोहतास जिले में कई महत्वपूर्ण नदियाँ प्रवाहित होती हैं।

प्रमुख नदियाँ

- सोन नदी
- कर्मनाशा नदी
- दुर्गावती नदी
- कोयल नदी

सोन नदी जिले की जीवन रेखा मानी जाती है। इंद्रपुरी बाँध सिंचाई का प्रमुख स्रोत है। इससे कृषि को अत्यधिक लाभ मिलता है।

8. मिट्टी एवं कृषि

रोहतास जिले में मुख्यतः जलोढ़ एवं लाल मिट्टी पाई जाती है।

प्रमुख फसलें

- धान
- गेहूँ
- मक्का
- चना
- अरहर

- सरसों

कृषि जिले की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है। सिंचाई सुविधा एवं उपजाऊ मिट्टी कृषि विकास में सहायक हैं।

9. वन एवं वनस्पति

दक्षिणी भाग में घने वन पाए जाते हैं। इन वनों में साल, सागवान, पलाश, महुआ तथा शीशम जैसे वृक्ष पाए जाते हैं।

वनों से प्राप्त संसाधन–

- लकड़ी
- औषधीय पौधे
- ईंधन
- पशुओं के लिए चारा

वन जैव विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

10. खनिज संसाधन एवं उद्योग

रोहतास जिला खनिज संपदा से समृद्ध है। यहाँ चूना पत्थर, बालू एवं पत्थर प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इन खनिजों के आधार पर सीमेंट एवं पत्थर उद्योग विकसित हुए हैं।

डेहरी-ऑन-सोन क्षेत्र औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

11. पर्यावरणीय समस्याएँ

वर्तमान समय में रोहतास जिले को कई पर्यावरणीय समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है–

1. वनों की कटाई
2. मिट्टी का कटाव
3. जल प्रदूषण
4. खनन से पर्यावरण हानि
5. जल संकट एवं सूखा

इन समस्याओं के कारण प्राकृतिक संतुलन प्रभावित हो रहा है।

12. पर्यावरण संरक्षण के उपाय

- वृक्षारोपण को बढ़ावा देना
- जल संरक्षण योजनाओं का विकास
- अवैध खनन पर नियंत्रण
- पर्यावरण शिक्षा एवं जागरूकता
- जैव विविधता संरक्षण

सरकार एवं स्थानीय समुदायों को मिलकर कार्य करना आवश्यक है।

13. निष्कर्ष

रोहतास जिला प्राकृतिक संसाधनों एवं भौगोलिक विविधता से समृद्ध क्षेत्र है। यहाँ की पर्वतीय संरचना, नदियाँ, वन एवं उपजाऊ भूमि जिले के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। परंतु बढ़ती पर्यावरणीय समस्याएँ प्राकृतिक संतुलन के लिए चुनौती बन रही हैं। इसलिए सतत विकास एवं पर्यावरण संरक्षण के उपायों को अपनाना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची (APA शैली में)

1. दत्त, रुद्र एवं सुंदरम, के.पी.एम. (2021). *भारतीय अर्थव्यवस्था*. नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी।
2. सिंह, आर.बी. (2018). *ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज*. पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
3. शर्मा, एस.एल. (2019). *भारत में ग्रामीण समाजशास्त्र*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन।
4. मिश्रा, एस.एन. (2017). *कृषि अर्थशास्त्र के सिद्धांत*. नई दिल्ली: ओरिएंट ब्लैकस्वान।
5. बिहार सरकार. (2023). *बिहार आर्थिक सर्वेक्षण 2022-23*. पटना: वित्त विभाग, बिहार सरकार।
6. भारत सरकार. (2021). *जनगणना भारत 2011 : बिहार जिला प्रोफाइल*. नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन विभाग।
7. कुमार, दीपक. (2020). *ग्रामीण भारत में बेरोजगारी और पलायन*. नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिशर्स।
8. यादव, एम.के. (2018). *महिला सशक्तिकरण एवं स्वयं सहायता समूह*. वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन।
9. National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD). (2022). *Status of Microfinance in India*. Mumbai: NABARD Publications.
10. Ministry of Rural Development. (2021). *Annual Report on Rural Development Programmes*. New Delhi: Government of India.
11. प्रसाद, बी.एन. (2016). *बिहार का आर्थिक विकास*. पटना: जानकी प्रकाशन।
12. सिंह, ए.के. (2019). *भारत में औद्योगिक विकास की समस्याएँ एवं समाधान*. नई दिल्ली: पियर्सन पब्लिकेशन।